कल्कि पुराण के बारे में ध्यान देने योग्य बातें

ये भूतकाल वाचक वाक्य में लिखा गया है (Past Sentence)

जैसे हम कहेंगे :- “भगवान कलिक का अवतार सम्बल ग्राम में होगा “

परन्तु कल़िक पुराण में लिखा गया है:- “भगवान कलिक का अवतार सम्बल ग्राम में हुआ“

श्रीकल्कि-पुराण

कल्किपुराण

प्रथम अंश

प्रथम-अध्याय

सेन्द्रा देवगणा मुनीश्वरजना लोका. सपाला. सदा ।
स्व स्व कर्म सुसिद्धये प्रतिदिन भकत्या भजन्त्युत्तमा. ।
त विघ्नेशमनन्तमच्युतमज सर्वज्ञसर्वाश्रय ।
वन्दे वैदिकतान्त्रिकादिविविधै शास्त्रैः पुरोवन्दितम्।।१।।
नारायण नमस्कृत्य नरञ्चैव नरोत्तमम् ।
देवी सरस्वतीञ्चैव ततो जयमुदीरयेत् ।। २ ।।
यद्दोर्दण्डकरालसर्पकवलज्वालाज्वलद्विग्रहाः
नेतु. सत्करवालदण्डदलिता भूपा.क्षितिक्षोभकाः ।
शश्वत् सैन्धववाहनो द्विजजनि कल्कि परात्मा हरिः
पायात्सत्ययुगादिकृत्स भगवान्धर्मप्रवृत्तिप्रियः ।। ३ ।।
इति सूतवचः श्रुत्वा नैमिषारण्यवासिन ।
शौनकाद्या महाभागा पप्रच्छुस्त कथामिमाम् ।। ४ ।।
हे सूत! सर्वधर्मज्ञ ! लोमहर्षणपुत्रक ! ।
त्रिकालज्ञ ! पुराणज्ञ ! वद भागवती कथाम् ।। ५ ।।
क कलिः ? कुत्र वा जातो जगतामीश्वर प्रभुः ।
कथ वा नित्य धर्म्मस्य विनाश कलिना कृतः ? ।। ६ ।।
इति तेषा वचः श्रुत्वा सूतो ध्यात्वा हरिः प्रभुम् ।
सहर्षपुलकोद्भिन्न सर्वाङ्गः प्राह तान्मुनीन् ।। ७ ।।

प्राचीन काल मे वैदिक तान्त्रिक आदि विविध शास्त्रो के द्वारा आराधित इन्द्र सहित देवता, मुनीश्वर और लोकपालो द्वारा स्वकार्य-सिद्धि के लिए भक्तिपूर्वक सतत उपासित, विघ्नेश, अनन्य, अच्युत, अजन्मा, सर्वज्ञ एव सर्वाश्रय स्वरूप भगवान् विष्णु का वन्दन करता हूँ ।।१।। नर, नारायण कहे जाने वाले नरोत्तम को एव भगवती सरस्वती को नमस्कार करके उनकी जय बोलता हूँ ।।२।।

जिनके भयकर भुज भुजग के विष ज्वाल मे पडकर अपने घोर अत्याचारो से भूमडल की शान्ति भग करने वाले राजागण भस्म हो जायगे और जिनके भयकर खड्ग की तीक्ष्ण धार से राजाओ के देह मर्दित होगे, वे ब्राह्मण वश मे उत्पन्न होकर, युग-युग मे अवतार धारण करने वाले भगवान् श्री हरि कल्कि रूप मे रक्षा करे ।।३।।

सूतजी के यह वचन सुन कर नैमिषारण्य निवासी शौनकादि महा-भागो मे उनसे पूछा ।।४।। हे सूतजी ! हे सर्व धर्मों के ज्ञाता, हे लोम-हर्षण-पुत्र ? हे त्रिकालज्ञ ? हे पुराणो के भली प्रकार जानने वाले ? अब आप भगवान् की कथा को विस्तृत रूप से कहिये ।।५।। कलि कौन है ? वह कहाँ उत्पन्न हुआ ? वह किस प्रकार पृथिवी का अधीश्वर बन गया ? तथा उसने नित्यधर्म को किस प्रकार विनष्ट कर दिया ? यह सब हमारे प्रति कहिये ।।६।। महर्षियो के यह वचन सुनकर सूतजी ने भगवान् श्री हरि का ध्यान किया और फिर पुलकित अग होकर कहने लगे ।।७।।

शृणुध्वमिदमाख्यान भविष्य परमाद्भुतम ।
कथि ब्रह्मणा पूर्व नारदाय विपृच्छते ।। ८ ।।
नारद प्राह मुनये व्यासायामिततेजसे ।
सव्यासो निजपुत्राय ब्रह्मराताय धीमते ।। ९ ।।
स चाभिमन्युपुत्राय विष्णुराताय ससदि ।

प्राह भागवतान्धर्मानिष्टादशसहस्रकान ।। १० ।।
तदा नृपे लयं प्राप्ते सप्ताहे प्रश्नशेषितम् ।
मार्कण्डेयादिभि. पृष्टः प्राह पुण्याश्रमे शुक ।। ११ ।।
तत्राह तदनुज्ञात. श्रुतवानस्मि या कथा ।
भविष्या. कथयामीह पुण्या भागवती. शुभा ।। १२ ।।

सूतजी बोले—हे मुनीश्वरो ! प्राचीन समय की बात है—इस परम अद्भुत उपाख्यान कोपूछने पर ब्रह्माजी ने नारदजी से जो कहा था, वही मे आपके प्रति कहता हूँ ।।८।। फिर नारद जी ने इसका वर्णन व्यासजी से किया, जिसे व्यासजी ने अपने मेधावी पुत्र ब्रह्मरात को सुनाया ।।९।। ब्रह्मरात ने उसे अभिमन्यु-पुत्र विष्णुरात के प्रति अट्ठारह सहस्र श्लोको मे सभा मडप के मध्य मे सुनाया ।।१०।। उस समय प्रश्न होते-होते राजा विष्णुरात ने एक सप्ताह मे शेष प्रश्नो को पूर्ण कर लिया और लय को प्राप्त हो गये । उसी कथा के शेष अश अर्थात् सक्षिप्त रूप को शुकदेवजी ने मार्कण्डेय प्रभृति मुनियो के प्रश्न करने पर कहा ।।११।। भगवान् श्री शुकदेवजी द्वारा वर्णित उसी सक्षिप्त पुण्यमय, भागवत उपाख्यान को, जो भविष्य मे घटित होने वाला है, आपसे कहता हूँ ।।१२।।

ताः शृणुध्वमहाभागा समाहित धियोऽनिशम् ।
गते कृष्णे स्वनिलय प्रादुर्भूतो यथा कलि ।। १३ ।।
प्रलयान्ते जगत्स्रष्टा ब्रह्मा लोकपितामह ।
ससर्ज घोर मलिन पृष्टदेशात स्वपातकम् ।।१४।।
स चाधर्म इति ख्यातस्तस्य वंशानुकीर्त्तनात ।
श्रवणात्स्मरणाल्लोक सर्वपापै प्रमुच्यते ।। १५ ।।
अधर्मस्य प्रियारम्या मिथ्या मार्जारलोचना ।
तस्य पुत्रोऽतितेजस्वी दम्भ. परमकोपनः ।। १६ ।।

स मायाया भगिन्यान्तु लोभः पुत्रश्च कन्यकाम् ।
निकृति जनयामास तयो क्रोध सुतोऽभवत् ।। १७ ।।

भगवान् श्रीकृष्ण के अपने लोक को पधारने के पश्चात् जिस प्रका कलि की उत्पत्ति हुई, उस सब को कहता हूँ, आप लोग समाहित चित्त सुने ।।१३।। जब प्रलयकाल व्यतीत हो गया तब ससार-स्रष्टा, लोक पितामह ब्रह्माजी ने अपनी पीठ से घोर मलीन पातक को उत्पन्न किया ।।१४।। उसी पातक का नाम अधर्म हुआ, उस अधर्म के वश क श्रवण, स्मरण एव रहस्य जानने से प्राणीमात्र सब पापो से मुक्त हो सकते है ।।१५।। उस अधर्म की पत्नी बिल्ली जैसे नेत्र वाली, अत्यन्त रम्या हुई, जिसका नाम मिथ्या हुआ। फिर अधर्म के सयोग से अति तेजस्वी, महाक्रोधी एक पुत्र हुआ, जिसका नाम दभ था ।।१६।। अधर्म और मिथ्या ने माया नाम की एक कन्या भी उत्पन्न की। दंभ और माया के सयोग से लोभ नामक पुत्र और निकृति नाम की कन्या हुई। लोभ और निकृति के सयोग से क्रोध नामक पुत्र हुआ ।।१७।।

सहिंसाया भगिन्यान्तु जनयामास त कलिम् ।
वामहस्त धृतोपस्थ तैलाभ्यक्ताञ्जनप्रभम् ।। १८ ।।
काकोदर करालास्यं लोलजिह्वं भयानकम् ।
पूतिगन्ध द्यूतमद्यस्त्री सुवर्णाकृताश्रयम् ।। १९ ।।
भगिन्यान्तु दुरुक्त्या स भय पुत्रश्च कन्यकाम् ।
मृत्यु स जनयामास तयोश्च निरयोऽभवत् ।। २० ।।
यातनाया भगिन्यान्तु लेभे पुत्रायुतायुतम् ।
इत्थ कलिकुले जाता बहवो धर्मनिन्दका ।। २१ ।।
यज्ञाध्ययनदानादिवेदतन्त्रविनाशका ।
आधिव्याधिजराग्लानिदुःखशोकभयाश्रया. ।। २२ ।।

क्रोध की सयोनि हिंसा हुई। उन दोनो के सयोग से ससार को नष्ट वाले कलि की उत्पत्ति हुई । इस वाम कर मे उपस्थ धारण करने वाले कलि की देह कान्ति काजल के समान काली हुई ।।१८।। काकोदर, कराल, चचल जिह्वा वाले, भयानक दुर्गन्ध युक्त शरीरधारी इस कलि

ने द्यूत, मद्य, स्त्री और स्वर्ण मे निवास किया ॥१६॥ कलि की सगर्भा दुरुक्ति हुई। उन दोनो ने भयानक नामक पुत्र और मृत्यु नाम की कन्या उत्पन्न की। मृत्यु ने उसके द्वारा निरय नामक पुत्र को उत्पन्न किया ॥२०॥ निरय की सगर्भा यातना हुई। इन दोनो के सयोग से हजारो पुत्र उत्पन्न हुए। इस प्रकार कलि के कुल मे बहुतेरे धर्म-निन्दको की प्रवतारणा हुई ॥२१॥ यह सभी आधि व्याधि बुढापा, ग्लानि दु ख शोक और भय के आश्रय को प्राप्त होकर यज्ञ, अध्ययन, दानादि एव वैदिक तथा तान्त्रिक कर्मो का नाश करने वाले हुए ॥२२॥

कलिराजानुगाश्चेरुर्यूथशो लोकनाशका. ।
बभूवु: कालविभ्रष्टा. क्षणिका; कामुका नरा: ॥ २३ ॥
दम्भाचारदुराचारास्तातमातृविहिसका. ।
वेदहीना द्विजा दीना: शूद्रसेवापरा. सदा ॥ २४ ॥
कुतर्कवादबहुला धर्मविक्रयिणोऽधमा. ।
वेदविक्रयिणो व्रात्या रसविक्रयिणस्तथा. ॥ २५ ॥
मासविक्रयिण. क्रूरा. शिश्नोदरपरायणा. ।
परदाररता मत्ता वर्णसङ्करकारका. ॥ २६ ॥
ह्रस्वाकारा. पापसारा. शठा मठनिवासिन: ।
षोडशाब्दायुष: श्यालबान्धवा नीचसङ्गमा ॥ २७ ॥

लोकाचरण का नाश करने वाले, कलिराज के अनुचर यूथों ने चंचल, क्षण-भगुर और कामुक मनुष्य-देह धारण किये ॥२३॥ यह घोर दम्भी, दुराचारी, मातृ-पितृ-हिसक अनुचरगण ब्राह्मण कुल मे जन्म लेकर भी वेद-विहीन, दरिद्री और शूद्रो के सेवा-परायण हुए ॥२४॥ कुतर्कवाद की बहुलता से युक्त, धर्म, वेद, रस, माँस आदि के विक्रय मे तत्पर, सस्कार-विहीन, शिश्नोदर-परायण, परदार-परायण, उन्मत्त एव वर्णशकर सन्तानो के उत्पन्न करनेवाले हुए ॥२५-२६॥ यह नाटे आकार के, पापी, शठ, मठो मे निवास करने वाले, सोलह वर्ष की परम आयु वाले, यह कलि के सेवकगण साले को भाई के समान

माननें वाले और नीचो की सगति करने वाले हुए ॥२७॥

विवादकलहक्षुब्धा केशवेशविभूषणा ।
कलौ कुलीना धनिनः पूज्या वार्द्धुषिका द्विजाः ॥ २८ ॥
सन्यासिनो गृहासक्ता गृहस्थास्त्वविवेकिन ।
गुरुनिन्दापरा धर्मध्वजिन साधुवञ्चकाः ॥ २९ ॥
प्रतिग्रहरता शूद्रा परस्वहरणादरः ।
द्वयो स्वीकारमुद्वाह शठे मैत्री वदान्यता ॥ ३० ॥
प्रतिदानें क्षमाशक्तौ विरक्तिकरणाक्षमे ।
वाचालत्वञ्च पाण्डित्ये यशोऽर्थे धर्मसेवनम् ॥ ३१ ॥
धनाढ्यत्वञ्च साधुत्वे दूरे नीरे च तीर्थता ।
सूत्रमात्रेण विप्रत्व दण्डमात्रेण मस्करी ॥ ३२ ॥

विवाद-कलह से क्षुब्ध रहने वाले, केश विन्यास में आसक्त, धनवान, ब्याज से जीविका चलाने वाले एवं कुलीन कहलाने वाले यह ब्राह्मण ही कलिकाल मे पूजनीय हुए ॥२८॥ सन्यासी गृहस्थ-धर्म परायण हो गए, गृहस्थो मे विवेचन शक्ति का अभाव होगया, शिष्य गुरु निन्दक और धर्मध्वजी साधु वचक होगए ॥२९॥ शूद्र दान लेने और पर-सम्पत्ति के हरण करने वाले हुए, स्त्री-पुरुष की सहमति ही विवाह हुआ, मित्र शठ हुए, प्रतिदान ही दानशीलता होगया, न्यायाधीश दण्ड देने मे असमर्थ होकर क्षमाशील होगए, दुर्बल के प्रति उदासीनता होने लगी, अधिक बोलने वाले ही पडित कहे जाने लगे तथा यश की कामना से ही लोग धर्म का सेवन करने लगे ॥३०-३१॥ धनवान ही साधु पुरुष माने जाने लगे, दूर का लाया हुआ जल ही तीर्थ का जल होगया, यज्ञोपवीत मे ही ब्राह्मणत्व निहित होगया और दण्ड धारण सन्यासी का लक्षण रह गया ॥३२॥

अल्पशस्या वसुमती नदीतीरेऽवरोपिता ।
स्त्रियो वेश्यालापसुखा स्वपुंसा त्यक्तमानसा ॥ ३३ ॥
परान्नलोलुपा विप्राश्चण्डालगृहयाजका. ।

स्त्रियो वैधव्यहीनाश्च स्वच्छन्दाचरणप्रिया. ।। ३४ ।।
चित्रवृष्टिकरा मेघा मन्दशस्या च मेदिनी ।
प्रजाभक्षा नृपा लोका. करपीडाप्रपीडिताः ।। ३५ ।।
स्कन्धे भार करे पुत्रं कृत्वा क्षुब्धाः प्रजाजन ।
गिरिदुर्ग वन घोरमाश्रयिष्यन्ति दुर्भगा. ।। ३६ ।।
मधुमासैर्मूलफलैराहारै प्राण धारिण ।
एव तु प्रथमे पादे कले कृष्णविनिन्दका ।। ३७ ।।

पृथिवी अल्पशस्या होगयी, नदियाँ अन्यान्य स्थानो मे बहने वाली हुईं, नारियाँ वेश्यालय मे सुख मानने लगीं और भार्याओं का पति मे अनुराग नही रहा ।।३३।। पराये अन्न की कामना वाले ब्राह्मण शूद्रो के यहाँ यजन करने लगे, विधवाओ ने वैधव्य का आचरण त्याग दिया और स्वच्छन्द आचरणवाली होगई ।।३४।। मेघ,खण्ड-वृष्टि वाले हुए, पृथिवी मन्दशस्या हुई, राजागण प्रजा-भक्षक होगये, जिससे प्रजा करों के भार से उत्पीडित हो उठी ।। ३५ ।। अत्यन्त क्षुब्ध हुए प्रजाजन कन्धो पर बोझऔर हाथ में पुत्र लेकर दुर्गम पर्वत और घोर वनो में जाकर आश्रय खोजने लगे ।। ३६ ।। मधु,मास मूल और फल का भोजन ही प्राण धारण का सहारा बन गया । कलि के प्रथम पाद मे ही मनुष्यगण श्रीकृष्ण-निन्दक हो गये ।। ३७ ।।

द्वितीये तन्नामहीनास्तृतीये वर्णसङ्करः ।
एकवर्णश्चतुर्थे च विस्मृताच्युतसत्क्रियाः ।। ३८ ।।
निःस्वाध्या-स्वधा-स्वाहा-वौषडोंकार-वर्ज्जिता. ।
देवा सर्वे निराहारा. ब्रह्माण शरण ययु ।। ३९ ।।
धरित्रीमग्रत कृत्वा क्षीणां दीनां मनस्विनीम् ।
ददृशुर्ब्रह्मणो लोक वेदध्वनिनादितम् ।। ४० ।।
यज्ञधूमै समाकीर्ण मुनिवर्य्यै निषेवितम् ।
सुवर्ण वेदिकामध्ये दक्षिणावर्त्त मुज्ज्वलम् ।। ४१ ।।
वह्नि यूपाङ्कितोद्यान-वन-पुष्प-फलान्वितम् ।

सरोभि· सारसैर्हंसैराहूयन्त मिवातिथिम् ॥ ४२

कलि के द्वितीय पाद में लोग श्रीकृष्ण नाम को भी भूल गए, तीसरे पाद मे वर्ण सकर उत्पन्न हुए और चौथे पाद मे तो जाति-पाँति ही कुछ न रही, लोग सत्कर्म और ईश्वर को भी भूल गये ॥ ३८ ॥ स्वाध्याय, स्वधा, स्वाहा, वषट्कार और ओंकारादि का लोप हो गया जिससे सभी देवता आहार न मिलने के कारण पीडित होकर ब्रह्माजी की शरण मे गये ॥ ३९ ॥ सभी क्षीणता को प्राप्त हुए दीन देवगण चिन्तिता पृथिवी को आगे करके ब्रह्म-लोक को गये । वह लोक उन्हें वेद-ध्वनि से गूँजता हुआ दिखाई दिया ॥ ४० ॥ वहाँ यज्ञ का धुआ फैल रहा था, मुनिगण उपासना एव यज्ञ कर रहे थे, स्वर्ण-वेदी के मध्य दक्षिणाग्नि प्रज्वलित थी, उद्यान वन-पुष्पों और फलो से परिपूर्ण थे, सरोवर में सारस और हसो के मधुर स्वर ऐसे लग रहे थे, मानों अतिथियो का स्वागत कर रहे हों ॥ ४१-४२ ॥

वायु लोललताजालकुसुमालिकुलाकुलै· ।
प्रणताह्वान-सत्कार-मधुरालापवीक्षणै ॥ ४३ ॥
तद्ब्रह्मसदन देवा: सेश्वरा· क्लिन्नमानसा· ।
विविशुस्तदनुज्ञाता निजकार्य निवेदितुम् ॥ ४४ ॥
त्रिभुवनज·.कं सदासनस्थ सनक-सनन्दन-सनातनैश्चसिद्धै:
परिसेवित पादकमल ब्रह्माण देवता नेमु: ॥ ४५ ॥

चचल पवन लता-जालो को झकोर रहा था, अलि अवलि कलियों का रस-पान करते गूँज रहे थे, मानों यह सभी प्रणाम, आह्वान, सत्कार आदि के लिए मधुर वाणी का प्रयोग कर रहे हों ॥ ४३ ॥ अपने स्वामी इन्द्र के सहित खेद युक्त मन वाले सब देवता ब्रह्माजी की आज्ञा प्राप्त करके अपना दुःख निवेदन करने के लिए ब्रह्म-सदन में प्रविष्ट हुए ॥ ४४ ॥ वहाँ जाकर सनक, सनन्दन और सनातन से अपने चरण-कमलो की सेवा कराते हुए एवं श्रेष्ठ आसन पर आसीन ब्रह्मा-जी को उन देवताओं ने नमस्कार किया ॥ ४५ ॥

द्वितीय अध्याय

उपविष्टास्ततो देवा ब्रह्मणो वचनात्पुर· ।
कलेर्दोषाद्धर्महानि कथयामासुरादरात् ।। १ ।।
देवाना तद्वच श्रुत्वा ब्रह्मा तानाह दु:खितान् ।
प्रसादयित्वा त विष्णु साधयिष्याम्यभीप्सितम् ।। २ ।।
इति देवै परिवृत। गत्वा गोलोकवासिनम् ।
स्तुत्वा प्राह पुरो ब्रह्मा देवाना हृदयेप्सितम् ।। ३ ।।

सूतजी बोले—हे मुनीश्वरो ! वहाँ जाकर वे सभी देवता ब्रह्माजी की आज्ञा से उनके समक्ष बैठ गये । फिर उन्होने कलि के दोषो से जो धर्म की हानि हुई थी, उसका सम्पूर्ण वृत्तान्त निवेदन किया ।। १ ।। दु:खित हृदय वाले देवताओं के वचन सुनकर ब्रह्माजी बोले—मै भगवान् विष्णु की आराधना करके तुम्हारा सब मनोरथ सिद्ध करता हूँ ।।२।। यह कर ब्रह्माजी ने देवताओं को साथ लिया और गोलोक निवासी भगवान् श्री हरि की सेवा मे जा पहुँचे । वहाँ उन्होने स्तुति की और फिर देवनाओ की कामना निवेदन की ।।३।।

तच्छ्रुत्वा पुण्डरीकाक्षो ब्रह्माणमिदमब्रवीत् ।।
शम्भले विष्णुयशसो गृहे प्रादुर्भवाम्यहम् ।
सुमत्यामातरि विभो ! पत्नीयां त्वन्निदेशत· ।। ४ ।।
चतुर्भिर्भ्रातृभिर्देव ! करिष्यामि कलिक्षयम् ।
भवन्तो वान्धवा देवा: स्वांशेनावतरिष्यथ ।। ५ ।।
इय मम प्रिया लक्ष्मी· सिंहले संभविष्यति ।
बृहद्रथस्य भूपस्य कौमुद्या कमलेक्षणा ।
भार्याया मम भार्या पद्मानाम्नी जनिष्यति ।। ६ ।।

यात यूय भुव देवा स्वांशावतरणे रता ।
राजानौ मरुदेवापी स्थापयिष्याम्यहं भुवि ।। ७ ।।

पुण्डरीकाक्ष भगवान् ने देवताओं की दुःख-गाथा सुनकर ब्रह्माजी से कहा— हे विभो ! मैं शम्भल ग्राम में विष्णुयश के यहाँ, उनकी पत्नी सुमति के गर्भ से उत्पन्न हूँगा ।।४।। हे ब्रह्मन् ! हम चारों भाई मिलकर उस कलि को नष्ट कर डालेंगे । अब सभी देवताओं को भी अपने-अपने बाँधवों सहित पृथिवी पर अवतार लेना है ।।५।। मेरी प्रिया लक्ष्मी सिंहल द्वीप में महाराज बृहद्रथ की रानी कौमुदी के गर्भ से उत्पन्न होगी, इसका नाम पद्मा होगा ।।६।। मरु और देवापि नामक दो राजाओं को भी पृथिवी पर उत्पन्न करूँगा । हे देवगण ! अब तुम भी शीघ्रही अपने-अपने अंश के सहित भूमंडल पर अवतार धारण करो ।।७।।

पुन कृतयुग कृत्वा धर्मान्संस्थाप्य पूर्ववत् ।
कलिव्याल संनिरस्य प्रयास्ये स्वालय विभौ ।। ८ ।।
इत्युदीरितमाकर्ण्य ब्रह्मा देवगणैर्वृत ।
जगाम ब्रह्मसदन देवाश्च त्रिदिव ययु ।। ९ ।।
महिमा स्वस्य भगवान्निजजन्मकृतोद्यम ।
विप्रर्षे ! शम्भलग्राममाविवेश परात्मक ।। १० ।।

हे विभो ! जब पृथिवी पर सत्ययुग का पुन आविर्भाव कर दूँगा और धर्म का पूर्ववत् स्थापन तथा कलिकाल रूपी नाग को नष्ट कर डालूँगा, तब पुन अपने इस लोक में आ जाऊँगा ।।८।। देवताओं से घिरे हुए ब्रह्माजी ने भगवान् की यह आज्ञा सुनकर ब्रह्मलोक को प्रस्थान किया और सब देवता अपने स्वर्ग लोक को चले गये ।।९।। हे ऋषियो ! अपनी महिमा से महिमान्वित भगवान् विष्णु इस प्रकार शम्भल ग्राम में स्वयं अवतार धारण करने के लिए प्रविष्ट हुए ।।१०।।

सुमत्यां विष्णु यशसा गर्भमाधत्त वैष्णवम् ।
ग्रह–नक्षत्र–राश्यादि–सेवित—श्रीपदाम्बुजम् ।। ११ ।।

सरिसमद्रा गिरयो लोका सस्थाणुजङ्गमा ।
सहर्षा ऋषयो देवा जाते विष्णौ जगत्पतौ ।। १२ ।।
बभूवु सर्वसत्वानामानन्दा विविधाश्रया ।
नृत्यन्ति पितरो हृष्टास्तुष्टा देवा जगुर्यश ।। १३ ।।
चक्रुर्वाद्यानि गन्धर्वा ननृतुश्चाप्सरोगणा ।। १४ ।।
द्वादश्या शुक्लपक्षस्य माधवे मासि माधव ।
जात ददृशतु पुत्र पितरौ हृष्टमानसौ ।। १५ ।।

भगवान् श्रीहरि विष्णुयश के द्वारा उनकी पत्नी के गर्भ में प्रविष्ट होकर भ्रूण रूप हुए ।।११।। यह जानकर कि विष्णु पृथिवी पर आ गये है, सभी सरिता, समुद्र, पर्वत, 'स्थावर जगम प्राणी, ऋषि-गण और देवगण आदि सभी प्रसन्न हो उठे ।।१२ । तथा सभी जीव विभिन्न प्रकार से हर्ष प्रकट करने लगे, पितर नाचने लगे और देवता प्रभु के गुणगान मे तत्पर हुए ।।१३।। गधर्व बाजे बजाने और अप्सरायें नृत्य करने लगी ।।१४।। वैशाख शुक्ला द्वादशी के दिन भगवान् ने अवतार लिया। उनको प्रकट होतें हुए देखकर माता-पिता पुलकित हो उठे ।।१५।।

धातृमाता महाषष्ठी नाभिच्छेत्री तदम्बिका ।
गङ्गोदकक्लेदमोक्षा सावित्री मार्जनोद्यता ।। १६ ।।
तस्य विष्णोरनन्तस्य वसुधाऽधात्पय सुधाम् ।
मातृका माङ्गल्यवच कृष्णजन्मदिने तथा ।। १७ ।।
ब्रह्मा तदुपधार्याशु स्वाशुग प्राह सेवकम् ।
याही त मृतिकागार गत्वा विष्णु प्रबोधय ।। १८ ।।
चतुर्भुजमिद रूप देवानामपि दुर्लभम् ।
त्यक्त्वा मानुषवद्रूप कुरुनाथ ! विचारितम् ।। १९ ।।
इति ब्रह्मवचा श्रुत्वा पवन सुरभि सुखम् ।
सशीत प्राह तस्मा ब्रह्मणो वचनादृत ।। २० ।।

भगवान् के प्रकट होने पर महाषष्टी धात्री हुई, अम्बिका ने नाल छेदन किया, गङ्गाजी ने अपने जल से गर्भक्लेद को हटाया और सावित्री ने भगवान् के शरीर का मार्जन किया ।।१६।।

कृष्ण-जन्म के समान ही अनन्त भगवान् के अवतार लेने पर वसुन्धरा ने दुग्धसुधा की धारा प्रवाहित कर दी, मातृकाओ ने मगलाचार किया ।।१७।। शम्भल ग्राम मे भगवान् के अवतरित होने का समाचार जानकर ब्रह्माजी ने वायु को आज्ञा दी कि तुम सूतिकागार मे जाकर भगवान् से इस प्रकार कहो ।।१८।। कि आपके चतुर्भुज स्वरूप का दर्शन तो देवताओ के लिए भी दुर्लभ है, अत: हे नाथ! इस चतुर्भुज रूप को छोडकर मनुष्य रूप बनाइये ।।१६।। सुशीतल, सुखद, सुगन्धित वायु ने यह वचन सुनकर द्रुतगति से सूतिकागार मे जाकर भगवान् से निवेदन किया ।।२०।।

तच्छ्रुत्वा पुण्डरीकाक्षस्तत्क्षणाद्द्विभुजोऽभवत् ।
तदा तत्पितरौ दृष्ट्वा बिस्मयापन्नमानसौ ।। २१ ।।
भ्रमसस्कारवत्तत्र मेनाते तस्य मायया ।
ततस्तु शम्भलग्रामे सोत्सवा जीवाजातय ।
मङ्गलाचारबहुला पापतापविर्वाज्जता. ।। २२ ।।
सुमतिस्त सुतलब्ध्वा विष्णु जिष्णु जगत्पतिम् ।
पूर्णकामा विप्रमुख्यानाहूयाद्गवा शतम् ।। २३ ।।
हरे कल्याणकृद्विष्णुयशा शुद्धेन चेतसा ।
सामर्ग्यजुर्विद्भिरग्र्यैस्तन्नामकरणे रत ।। २४ ।।
तद राम कृपो व्यासो द्रौणिर्भिक्षुशरीरिण ।
समायाता हरि द्रष्टु बालकत्वमुपागतम् ।। २५ ।।

ब्रह्माजी का सदेश प्राप्त होने पर भगवान् ने अपना स्वरूप दो भुजाओ से युक्त बना लिया। यह लीला देखकर माता-पिता विस्मित रह गये ।।२१।। प्रभु की माया मे मोहित हुए माता-पिता ने समझा कि

भ्रम से ही हमने अपने पुत्र को चार भुजा देखा था। फिर उस शम्भल ग्राम मे सभी पाप-ताप नष्ट होकर नित्य नवीन मगलाचार होने लगे ॥२२॥ भगवान् को पुत्र रूप मे प्राप्त करके पूर्णकामा सुमति ने ब्राह्मणो को एक सौ गौय दान दी ॥२३। पवित्र हृदय वाले विष्णुयशजी ने अपने पुत्र के मगल की कामना से ऋक्, यजु और सामवेदी ब्राह्मणो को नामकरण के लिए नियुक्त किया ॥२४॥ भगवान् के शिशुरूप का दर्शन करने के लिए परशुराम, कृपाचार्य, वेदव्यास और द्रोणाचार्यजी के पुत्र अश्वत्थामा भिक्षुक वेश मे वहाँ आये ॥२५॥

तानागतान्समालोक्य चतुर: सूर्यसन्निभान् ।
हृष्टरोमा द्विजवर पूजयाञ्चक्र ईश्वरान् ॥ २६ ॥
पूजितास्ते स्वासनेषु सविष्टा स्वसुखाश्रया ।
हरि क्रोडगत तस्य ददृशु सर्वमूर्त्तय. ॥ २७ ॥
तबालक नराकार विष्णु नत्वा मुनीश्वरा ।
कल्कि कल्कविनाशार्थमाविर्भूतं विदुर्बुधा. ॥ २८ ॥
नामाकुर्वस्ततस्तस्य कल्किरित्यभिविश्रुतम् ।
कृत्वा सस्कारकर्माणि ययुस्ते हृष्टमानसा. ॥ २९ ॥
तत स ववृधे तत्र सुमत्या परिपालित ।
कालेनाल्पेन कसारि शुक्लपक्षे यथा शशी ॥ ३० ॥

सूर्य के समान तेजस्वी उन ईश्वर स्वरूप आगन्तुको को देखकर द्विजवर विष्णुयश ने उनका पूजन किया ॥२६॥ भले प्रकार सुपूजित हुए वे मुनिगण श्रेष्ठ आसनो पर सुखपूर्वक विराजे, तब उन्होने अपने पिता की गोद मे बैठे हुए भगवान के दर्शन किए ॥२७॥ उन ज्ञानी मुनीश्वरो ने मनुष्य रूप मे शिशु स्वरूप भगवान् को नमस्कार किया और तब उन्होने जान लिया कि कलिकाल के विनाशार्थ भगवान् श्री कल्कि का अवतार हुआ है ॥२८॥ फिर उनका सस्कार करते हुए उनका कल्कि नाम रखकर प्रसन्न मन से वे मुनीश्वर चले गये ॥२९॥ फिर कसारि भगवान् माता सुमति के द्वारा भले प्रकार लालित-पालित

होते हुए शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त होने लगे ॥३०॥

कल्केर्ज्येष्ठास्त्रय शूरा कवि प्राज्ञ सुमन्त्रका ।
पितृमातृप्रियकरा गुरुविप्रप्रतिष्ठिता ॥ ३१ ॥
कल्केरशा पुरो जाता. साधवो धर्म्मतत्परा ।
गार्ग्यभर्ग्यविशालाद्या ज्ञातयस्तदनुव्रता ॥ ३२ ॥
विशाखयूप भूपाल पालितास्तापवर्ज्जिता ।
ब्राह्मणा कल्किमालोक्य परा प्रीतिमुपागता. ॥ ३३ ॥
ततो विष्णुयशा पुत्र धीर सर्वगुणाकरम् ।
कल्कि कमलपत्राक्ष प्रोवाच पठनाद्दतम् ॥ ३४ ॥
तात ते ब्रह्मसस्कार यज्ञसूत्रमनुत्तमम् ।
सावित्री वाचयिष्यामि ततो वेदान्पठिष्यसि ॥ ३५ ॥

भगवान् कल्कि के उत्पन्न होने से पहले माता-पिता को प्रिय, गुरु-ब्राह्मण का हित करने वाले इनके तीन भाई और उत्पन्न हो चुके थे। उनके नाम कवि, प्राज्ञ और सुमन्त्रक थे। भगवान् के ही अश से उनकी जाति मे, उनके अनुगामी, साधु स्वभाव वाले एव धार्मिक प्रवृत्ति वाले गार्ग्य, भर्ग्य और विशाल आदि भगवान् से पहिले ही उत्पन्न हो चुके थे ॥३१-३१॥ विशाखयूप-नरेश द्वारा परिपालित यह सभी ब्राह्मण भगवान् का दर्शन करके सम्पूर्ण पाप-ताप से छूटकर अत्यत हर्षित हुए ॥३३॥ फिर अपने कमलनयन एव सर्वगुण सम्पन्न पुत्र को अध्ययन करने के योग्य वय वाला हुआ देखकर विष्णुयश उनसे बोले ॥३४॥ हे पुत्र ! मै तुम्हारा श्रेष्ठ ब्रह्म सस्कार, उपनयन और सावित्री का श्रवण कराऊँगा, फिर तुम वेदाध्ययन करना ॥३५॥

को वेद का च सावित्री केन सूत्रेण सस्कृताः ।
ब्राह्मणा विदिता लोक तत्तत्त्व वद तात माम् ॥ ३६ ॥
वेदो हरेर्वाक् सावित्री वेदमाता प्रतिष्ठिता ।

त्रिगुणश्च त्रिवृत्सूत्र तेन विप्रा प्रतिष्ठिता ॥ ३७ ॥
दशयज्ञै सस्कृता ये ब्राह्मणा ब्रह्मवादिन ।
तत्र वेदाश्च लोकाना त्रयाणामिह पोषका ॥ ३८ ॥
यज्ञाध्ययन दानादि तप स्वाध्याय सयम ।
प्रीणयन्ति हरि भक्त्या वेद तन्त्र विधानत ॥ ३९ ॥
तस्माद्यथोपनयन कर्मणोऽह द्विजै सह ।
सस्कर्त्तु बान्धवजनैस्त्वामिच्छामि शुभे दिने ॥ ४० ॥

पिता के वचन सुनकर कल्कि भगवान् ने पूछा—वेद क्या है। सावित्री क्या है। किस सूत्र से सस्कारित पुरुष ब्राह्मण सज्ञक होता है? हे तात! यह सब मुझे बताइये ॥३६॥ पिता बोले—वेद भगवान् विष्णु की वाणी है, सावित्री ही प्रतिष्ठा एव वेद-माता है। त्रिगुण-सूत्र को त्रिवृत्ताकार करके धारण करने पर ब्राह्मण नाम से प्रतिष्ठित होता है ॥३७॥ तीनो लोको के पोषक एव दशयज्ञ द्वारा सस्कृत ब्रह्म-वादी जो ब्राह्मण है, उन्ही के पास वेद निवास करते है ॥३८॥ यही दश सस्कार वाले विप्र वेद, तन्त्र और शास्त्रादि के विधान से यज्ञ, अध्ययन, दान, तप, स्वाध्याय, सयम आदि के सहित भक्ति करते हुए भगवान् को प्रसन्न करते है ॥३९॥ इसी लिए ब्राह्मणो, बाँधवो आदि के सहित किसी शुभ दिन मै तुम्हारा उपनयन सस्कार करना चाहता हू ॥४०॥

के च ते दश सस्कारा ब्राह्मणेषु प्रतिष्ठिता ।
ब्राह्मणा केन वा विष्णुमर्चयन्ति विधानत ॥ ४१ ॥
ब्रह्मण्या ब्राह्मणाञ्जातो गर्भाधानादिसस्कृत ।
सन्ध्यात्रयेण सावित्री-पूजा-जप-परायणः ॥ ४२ ॥
तपस्वी सत्यवाग्धीरो धर्मात्मा त्राति ससृतिम् ।
विष्णवर्चनमिद ज्ञात्वा सदानन्दमयो द्विज ॥ ४३ ॥
कुत्रास्ते स द्विजो येन तारयत्यखिल जगत् ।
सन्मार्गेण हरिप्रीणन्कामदोग्धा जगत्त्रये ॥ ४४ ॥

कल्कि भगवान् बोले—ब्राह्मण के लिए निश्चित किये गये वे दश-सस्कार कौन-कौन से है ? किस विधान से ब्राह्मण भगवान् विष्णु की अर्चना किया करते है ? ।।४१।। विष्णुयश बोले—हे पुत्र ! ब्राह्मण के द्वारा ब्राह्मणी मे गर्भाधान सस्कार आदि से सस्कृत, त्रिकाल सध्या एव सावित्री की पूजा और जप मे परायण, तपस्वी, सत्यवक्ता, धीर धर्मात्मा ब्राह्मण भगवान् विष्णु की अर्चना विधि को भले प्रकार जानकर आनन्द मे निमग्न रहता हुआ सदैव इस सृष्टि क रक्षक होता है ।।४२-४३।। भगवान् ने कहा—हे तात ! जो ब्राह्मण सम्पूर्ण विश्व का उद्धारक, साधुमार्ग-परायण, भगवान् विष्णु को उपासना द्वारा प्रसन्न करने वाला और तीनो लोको की कामना पूर्ण करने वाला है, वह ब्राह्मण कहाँ है ? ।।४४।।

कलिना बलिना धर्म घातिना द्विज पातिना ।
निराकृता धर्मरता गता वर्षान्तरान्तरम् ।। ४५ ।।

ये स्वल्पतपसो विप्रा स्थिता कलियुगान्तरे ।
शिश्नोदरभृतोऽधर्मनिरता विरत क्रिया ।। ४६ ।।

पापसारा दुराचारास्तेजोहीना कलाविह ।
आत्मान रक्षितु नैव शक्ता शूद्रस्य सेवका ।। ४७ ।।

इति जनकवचो निशम्य कल्कि. कलिकुलनाशमनोऽभिलाषजन्मा
द्विजनिजवचनैस्तदोपनीतोगुरुकुलवासमुवास साधुनाथ. ।। ४८ ।।

पिता बोले—धर्मघाती और ब्राह्मणो के हिंसक महाबली कलि के द्वारा पीडित हुये विप्र गण अन्य देश को चले गये ।।४५।। स्वल्प तप वाले जो ब्राह्मण इस कलिकाल मे यहाँ स्थित रहे, वे सब शिश्नोदर धर्मी होकर धर्म और कर्म से विरत हो गये ।।४६।। पाप युक्त, दुराचारी एव तेज-रहित ब्राह्मण इस कलिकाल मे आत्म-रक्षा मे अशक्त एव शूद्रो के सेवक बन गये है ।।४७।। पिता के यह वचन सुन कर कल्कि भगवान् ने कलि को नष्ट करने का निश्चय किया। ब्राह्मणो ने अपनी वाणी द्वारा उनका उपनयन सस्कार किया। और तब भगवान् कल्कि गुरुकुल में निवास हेतु गये ।।४८।।

तृतीय अध्याय

ततो वस्तु गुरुकुले यान्त कल्कि निरीक्ष्य स ।
महेन्द्राद्रिस्थितो रामः समानीयाश्रम प्रभु ।१।
प्राह त्वा पाठयिष्यामि गुरू मा विद्धि धर्मत ।
भृगु वश समुत्पन्न जामदग्न्य महाप्रभुम् ।।२।।
वेद वेदाङ्ग तत्वज्ञ धनुर्वेद विशारदम् ।
कृत्वा निक्षत्रिया पृथिवी दत्वा विप्राय दक्षिणाम् ।।३।।
महेन्द्राद्रौ तपस्तप्तु मागतोऽहृद्विजात्मज ।
त्व पठात्र निज वेद यच्चान्यच्छास्त्रमुत्तमम् ।।४।।
इति तद्वच आश्रुत्य सप्रहृष्टतनूरुह ।
कल्कि. पुरो नमस्कृत्य वेदाधीती ततोऽभवत् ।।५।।

सूतजी बोले—भगवान् कल्कि को गुरुकुल वास के लिए जाते देख कर महेन्द्र पर्वत निवासी परशुराम उन्हे अपने आश्रम मे ले गये ।१। वहाँ पहुँच कर परशुराम ने उनसे कहा—मैं भृगु वश मे उत्पन्न, महर्षि जमदग्नि का पुत्र, वेद-वेदाग के तत्व को जानने वाला, धनुर्वेद-विद्या-विशारद परशुराम हूँ ।२। मैंने इस पृथिवी को क्षत्रिय-विहीन करके ब्राह्मणो को दक्षिणा स्वरूप दे डाली थी । अब तुम मुझे धर्म पूर्वक गुरु मानो, मैं तुमको शिक्षा दूँगा । हे द्विजात्मज ! मैं इस महेन्द्र पर्वत पर तपस्या करने के लिए आया हूँ, तुम यहाँ अपना वेदाध्ययन करो तथा अन्य जो भी कोई शास्त्र पढना चाहो, उसे पढो ।३-४। यह सुन कर भगवान् कल्कि ने आनन्द से गद्गद् होकर परशुराम को प्रणाम किया और फिर वेदाध्ययन करने लगे ।५।

साङ्ग चतुषष्टिकलां धनुर्वेदादिकञ्च यत् ।
समधीत्य जामदग्न्यात्कल्कि. प्राह कृताञ्जलि ।।६।।
दक्षिणां प्रार्थय विभो ! या देय तव सन्निधौ ।
ययामे सर्वसिद्धि. स्याद्या स्यात्व तोषकारिणी ।।७।।
ब्रह्मणा प्रार्थितो भूमन् ! कलिनिग्रहकारणात् ।
विष्णु. सर्वाश्रयः पूर्ण. स जात. सम्भले भवान् ।।८।।
मत्तो विद्या शिवादस्त्र लब्ध्वा वेदमय शुकम् ।
सिहले च प्रिया पद्मा धर्मान्सस्थापयिष्यसि । ६।।

जब भगवान् कल्कि चौसठ कलाएं और सम्पूर्ण धनुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कर चुके तब उन्होंने हाथ जोड कर परशुराम से कहा—।६। हे विभो ! जिन दक्षिणा के देने से मुझे सर्वसिद्धि की प्राप्ति होगी और जिस दक्षिणा की प्राप्ति से आप सतुष्ट हो सकेंगे, वह दक्षिणा मुझे बताने की कृपा करिये ।७। परशुराम बोले— हे भूमन् ! कलिकाल का नाश करने के लिए ब्रह्माजी ने जिन भगवान् श्री हरि से निवेदन किया था, वे ही आप भगवान् विष्णु शम्भल ग्राम मे अवतरित हुए हैं ।८ और मुझसे विद्या भगवान् शकर से शस्त्र और वेदमय शुक तथा सिंहल देश से अपनी पत्नी पद्मा को प्राप्त करके भूमण्डल पर धर्म की स्थापना करेंगे ।६।

ततो दिग्विजयेभूपान् धर्महीनान् कलिप्रियान् ।
निगृह्य बौद्धान् देवापि मरुञ्च स्थापयिष्यसि ।१०।
वयमेतैस्तु सतुष्टाः साधुकृत्यैः सदक्षिणा. ।
यज्ञ दान तपः कर्म करिष्यामो यथोचितम् ।११।
इत्येतद्वचन श्रुत्वा नमस्कृत्य मुनि गुरुम् ।
बिल्वोदकेश्वरं देवं गत्वा तुष्टाव शकरम् ।१२।
पूजयित्वा यथान्याय शिव शान्त महेश्वरम् ।
प्रणिपत्याशुतोषं त ध्यात्वा प्राह हृदिस्थितम् ।१३।

फिर दिग्विजय द्वारा धर्म-विहीन और कलिप्रिय राजाओ और बौद्धो का संहार कर मरु और देवापि को प्रतिष्ठित करोगे। तुम्हारा यह साधुकृत्य ही मुझको संतुष्ट करने वाली दक्षिणा होगी, क्योंकि तब हम तप, यज्ञ, दान, ध्यान, आदि सभी कर्म भले प्रकार से कर सकेंगे।१०-११। यह सुन कर और गुरुवर परशुरामजी को नमस्कार करके कल्कि भगवान् बिल्वोदकेश्वर महादेव के मन्दिर मे गये और उन्हे संतुष्ट करने लगे।१२। हृदय मे स्थित उन आशुतोष शान्त स्वरूप शिवजी का उन्होने विधिवत् पूजन किया और प्रणाम तथा ध्यान के पश्चात् निवेदन किया।१३।

गौरीनाथ विश्वनाथ शरण्यंभूतावास वासुकीकण्ठभूषम्।
त्र्यक्ष पञ्चास्यादिदेव पुराणं वन्दे सान्द्रनन्दसन्दोहदक्षम्।
योगाधीश कामनाश कराल गङ्गासङ्गाक्लिन्नमूर्द्धानमीशम्।
जटाजूटाटोपरिक्षिप्तभाव महाकाल चन्द्रभाल नमामि।।
श्मशानस्थभूतबेतालसङ्ग नानाशस्त्रै. खड्गशूलादिभिश्च।
व्यग्रात्युग्रा बाहवो लाकनाशे यस्य क्रोधोद्धूतलोकोऽनमेति।
यो भूतादि पञ्चभूतैंसिसृक्षु. तन्मात्रात्मा काल कर्मस्वभावै
प्रहृत्येद प्राप्य जीवत्वमीशो ब्रह्मानन्दो रमते त नमामि।।
स्थितौ विष्णु सर्वजिष्णुः सुरात्मा लोकान् साधून् धर्मसेतून्
विभर्ति। ब्रह्माद्याशे योऽभिमानी गुणात्मा शब्दाद्यङ्गैस्तपरेश
नमामि। यज्ञस्या वायवो वान्ति लोके ज्वलत्याग्नि सविता
यातितप्यन्। शीताशु खेतारकैः सग्रहैश्च प्रवर्तते त परेश
प्रपद्ये। यस्याश्वासात् सर्वधात्री धरित्री देवो वर्षत्यम्बु काल.-
प्रमाता। मेरुमध्ये भुवनानाञ्च भर्त्ता तमीशानविश्वरूप
नमामि।१४-२०।

कल्किजी ने कहा—हे गौरीपते! हे विश्वेश्वर! हे शरणागत-वत्सल! हे सर्वभूताश्रय! हे वासुकी नाग का कण्ठभूषण धारण करने

वाले प्रभो ! हे त्रिनेत्र ! हे पचवदन ! हे पुराण पुरुष ! हे सघन आनन्द-दक्ष आदिदेव ! आपको नमस्कार है ।१४। हे योगाधीश्वर ! आप कामदेव का नाश करने वाले, कराल दशन, गगतरग से समुज्वल मूर्द्धा वाले, जटाजूट टोप युक्त, परिक्षिप्त भाव वाले महाकाल है । हे चन्द्रभाल ! आपको नमस्कार है ।१५। हे प्रभो ! आप भूत वेतालो के सहित श्मशान मे निवास करते हैं । आप अपनी भयानक भुजाओ मे विभिन्न प्रकार के शस्त्रास्त्र धारण करते हैं । प्रलय काल मे यह समस्त विश्व आप की ही क्रोधानल मे भस्मीभूत हो जाता है ।१६। आप ही भूतादि तन्मात्रा रूप पच भूत एव काल-कर्म-स्वाभोनुसार सृष्टि रचना करते और अत मे प्रलय करके जीवत्व को प्राप्त होकर ब्रह्मानन्द मे रमण करते है, ऐसे आपको मेरा नमस्कार है ।१७। आप ही सुरात्मा विश्व के पालनार्थ विष्णु स्वरूप लेकर धर्म सेतु स्वरूप साधुओ की रक्षा करते हैं । आप ही शब्दादि अवयवो के द्वारा सगुण रूप ब्रह्मा जी के अश रूप होते है । ऐसे आप परमेश्वर को नमस्कार है ।१८। आपकी आज्ञा से, वायु बहता, अग्नि प्रज्वलित होता, सूय प्रकाशित होता और तारागण के सहित चन्द्रमा उदित होता है । ऐसे आपकी मैं शरण लेता हूँ ।१९। जिन की आज्ञा से पृथिवी विश्व को धारण किये है और मेघ समय पर वर्षा करते हैं तथा जो सब लोको का भरण करने वाले हैं, ऐसे आप ईशान एव विश्वरूप भगवान शकर को नमस्कार करता हूँ ।२०।

इति कल्किस्तव श्रुत्वा शिव: सर्वात्मदर्शन:
साक्षात् प्राह हसन्नीश. पार्वतीसहितोग्रत ।२१।
कल्के. सस्पृश्य हस्तेन समस्तावयवं मुदा ।
तमाह वरय प्रेष्ठ ! वरं यत्तेऽभिकांक्षितम् ।२२।
त्वया कृतमिद स्तोत्र ये पठन्ति जना भुवि ।
तेषां सर्वार्थसिद्धि: स्यादिह लोके परत्र च ।२३।
विद्यार्थी चाप्नुयाद्विद्यां, धर्मार्थी धर्ममाप्नुयात् ।
कामानवाप्नुयात् कामी पठनाच्छ्रवणादपि ।२४।

त्व गारुडमिद चाश्व कामग बहुरूपिणम् ।
शुकमेतञ्च सर्वज्ञ मया दत्त गृहाण भो ।२५।

भगवान् कल्कि का स्तोत्र सुन कर सर्वात्मा भगवान् शकर पार्वती सहित साक्षात् रूप मे प्रकट हुये–उन्होने आनन्दित होकर भगवान् कल्कि के देह पर कर स्पर्श करते हुए और मुसकराते हुए कहा–हे श्रेष्ठ ! अपना इच्छित वर मागो ।२१-२२। तुम्हारे द्वारा रचित इस स्तोत्र का का भू-मण्डल मे जा भी कोई पाठ करेगा, उसकी इहलौकिक और पारलौकिक सभी कामनाएँ पूर्ण होगी ।२३। इस स्तोत्र के पढने सुनने से विद्यार्थी को विद्या, धर्मार्थी को धर्म और अन्य कामना वाले को उसकी उसी कामना की प्राप्ति होती है ।२४। हे कल्कि ! मैं तुम्हे यह शीघ्रगामी, अनेक रूप धारी, गरुड़ अश्व युक्त सर्वज्ञ शुक प्रदान करता हूँ, इन्हे ग्रहण करो ।२५।

सर्व शास्त्रास्त्रविद्वास सर्व वेदार्थपारगम् ।
जयिन सर्वभूताना त्वां वदिष्यन्ति मानवा ।२६।
रत्नत्सरु करालञ्च करवाल महाप्रभम् ।
गृहाण गुरुभारायाः पृथिव्या भारसाधनम् ।२७।
इति तद्वच आश्रुत्य नमस्कृत्य महेश्वरम् ।
शम्भलग्राममगमत् तुरगेण त्वरान्वित. ।२८।
पितर मातर भ्रातृन् नमस्कृत्य यथाविधि ।
सर्व तद्वर्णयामास जामदग्न्यस्य भाषितम् ।२९।
शिवस्य वरदानञ्च कथयित्वा शुभा. कथा ।
कल्किः परमतेजस्वी ज्ञातिभ्योऽथवदन्मुदा ।

हे कल्कि ! मनुष्यो मे तुम सर्व शास्त्रज्ञ, सर्व शस्त्रास्त्र विशारद, सर्व वेदो मे पारगामी एव सर्व भूतो मे विजयी कहे जाओगे ।२६। यह रत्नसरु नामक महा कराल, अत्यन्त चमकती हुई, अत्यन्त भारी और पृथिवी के भार को सँभालने वाली तलवार ग्रहण

करो ।२७। भगवान महेश्वर के वचन सुन कर कल्कि ने उन्हे प्रणाम किया और अश्व पर आरूढ होकर द्रुतगति से शंभल ग्राम मे जा पहुचे ।२८। वहाँ पहुँच कर उन्होने अपने पिता, माता, भ्राता आदि को विधिवत् नमस्कार कर परशुराम जी के कहे हुए सब वचन उन्हे सुनाये ।२९। फिर शिवजी द्वारा प्राप्त हुए वरदान की चर्चा की और अपने जाति वालो के मध्य स्थित होकर प्रसन्न हृदय से श्रेष्ठ कथा कहने लगे ।३०।

गार्ग्यभर्ग्यविशालाद्यास्तच्छ्रुत्वा नन्दिता स्थिता. ।
कथोपकथन जात शम्भलग्रामवासिनाम् ।३१।
विशाखयूपभूपाल श्रुत्वा तेषाञ्च भाषितम् ।
प्रादुर्भाव हरेर्मेने कलिनिग्रहकारकम् ।३२।
माहिष्मत्या निजपुरे यागदानतपोव्रतान् ।
ब्राह्मणान् क्षत्रियान् वैश्यान् शूद्रानपि हरे प्रियान् ।३३।
स्वधर्मनिरतान् दृष्ट्वा धर्मिष्ठोऽभून्नृप. स्वयम् ।
प्रजापाल: शुद्ध मना: प्रादुर्भावात् श्रिय: पते: ।३४।
अधर्मवश्यास्तान् दृष्ट्वा जनान् धर्मक्रियापरान् ।
लोभानृतादयो जग्मुस्तद्देशाद्दुखिता भयम् ।३५।

उनके द्वारा वर्णित कथा सुन कर गार्ग्य, भर्ग्य और विशाल आदि अत्यन्त प्रसन्न हुए। कथा शंभल ग्राम मे परस्पर कही जाती हुई अधिक प्रचारित हो गई ।३१। शंभल ग्राम के लोगो से ही यह चर्चा विशाखयूपराज ने सुनी और उन्होने जान लिया कि भगवान् कल्कि ने कलि का निग्रह करने के लिए पृथिवी पर अवतार ले लिया है ।३२। उसकी माहिष्मती नगरी मे यज्ञ, दान, तपस्या और व्रतादि करने वाले सभी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र भगवान के प्रीति पात्र हुए ।३३। रमापति भगवान् के अवतार लेने पर सभी वर्ण अपने-अपने धर्म मे तत्पर हुए तथा राजा भी प्रजापालक, पवित्र मन वाला, धार्मिक हुआ ।३४। उस नगरी के निवासियों को धर्म मे तत्पर देख कर लोभ,

असत्य और अधर्म के वशज भय से दु खित होकर वहाँ से पलायन कर गये ।३५।

जैत्र तुरगमारुह्य खङ्गञ्च विमलप्रभम् ।
दशित, सशरं चापं गृहीत्वागात् पुराद्बहि ।३६।
विशाखयूपभूपालः प्रायात् साधुजनप्रियः ।
कल्कि द्रष्टु हरेरशमाविर्भतञ्च शम्भले ।३७।
कवि प्राज्ञ सुमनञ्च पुरस्कृत्य महाप्रभुम् ।
गार्ग्य-भर्ग्य विशालैश्च ज्ञातिभि परिवारितम् ।३८।
विशाखयूपो ददृशे चन्द्र तारागणैरिव ।
पुराद्बहि सुरैर्यद्वन्दिन्द्रमुच्चैश्रव स्थितम् ।३९।
विशाखयूपोऽवनतः सप्रहृष्टतनूरुहः ।
कल्केरालोकनात् सद्य, पूर्णात्मा वैष्णवोऽभवत् ।४०।

भगवान् कल्कि तीक्ष्ण तलवार, धनुष और श्रेष्ठ बाणो को धारण कर शिव-प्रदत्त अश्व पर आरूढ होकर नगरी मे बाहर चल दिये ।३६। सत जनो से स्नेह करने वाले विशाखयूप नरेश शभल ग्राम में अवतरित भगवान् के दर्शनार्थ उपस्थित हुए ।३७। उस समय अत्यन्त प्रभाव वाले कवि प्राज्ञ, सुमत्र और गार्ग्य विशालादि से घिरे हुए तथा तारागण सहित चन्द्रमा और देवताओं सहित उच्चैश्रवा के समान अश्व पर चढे कल्कि भगवान् को विशाखयूप नरेश ने नगर के बाहर निकलते देखा ।३८-३९। कल्कि भगवान को देखते ही रोमाचित हुए राजा झुकते हुए पूर्ण वैष्णवत्व को प्राप्त होगया ।४०।

सह राज्ञा वसन कल्कि धर्मानाह पुरोदितान् ।
ब्राह्मणक्षत्रियविशामाश्रमाणा समासतः ।४१।
ममाशान् कलिविभ्रष्टानिति मज्जन्मसङ्गतान् ।
राजसूयाश्वमेधाभ्यां मा यजस्व समाहितः ।४२।
अयमेव परो लोको धर्मश्चाह सनातनः ।
कालस्वभावसस्काराः कर्मानुगतयो मम ।४३।

सोमसूर्यकुले जातौ देवापिमरुसञ्ज्ञकौ ।
स्थापयित्वा कृतयुग कृत्वा यास्यामि सद्गतिम् ।४४।
इति तद्वचन श्रुत्वा राजा कल्कि हरि प्रभुम् ।
प्रणम्य प्राह सद्धर्मान् वैष्णवान् मनसेप्सितान् ।४५।
इति नृपवचन निशम्य कल्कि कलिकुलनाशनवासनावतार ।
निजजनपरिषद्विनोदकारीमधुरवचोभिराह साधुमर्ान ।४६म।

राजा से वार्तालाप करते हुए भगवान् कल्कि ने ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य तथा आश्रमादि के धर्मों का सक्षिप्त रूप से वर्णन किया ।४१। कल्कि बोले—हमारे जो अ'श कलि से प्राप्त पाप के द्वारा भ्रष्ट होगये थे, वे हमारे अवतरित होनेपर धर्म मार्ग पर आ गये हैं। हे राजन् ! तुम राजसूय या अश्वमेव यज्ञ करते हुए मेरी आराधना करो ।४२। मै ही परलोक हूँ, सनातन धर्म मे ही हूँ, काल, स्वभाव और सस्कार सभी मेरे कर्म के अनुगत रहते हैं ।४३। मैं चन्द्रवश और सूर्यवश मे क्रमश उत्पन्न देवापि और मरु नामक राजाओ को स्थापित करके तथा इस युग को सतयुग रूप करके सद्गति को प्राप्त हूँगा ।४४। यह सुनकर विशाखयूप नरेश ने भगवान कल्कि को प्रणाम किया और उनसे वैष्णव धर्म का प्रसग कहने का अनुरोध किया ।४५। राजा की कामना सुन कर कलिकुल का नाश करने की इच्छा से भूमण्डल पर अवतरित भगवान् कल्कि अपने परिजनो और अनुयायियो के हृदयो को आनन्दित करने वाली मिष्ठ वाणी से साधु धर्म की व्याख्या करने लगे ।४६।

—※—

चतुर्थ-अध्याय ।

सत• कल्कि सभा मध्ये राजामानो रविर्यथा ।
अभाषे त नृप धर्म-मयो धर्मान् द्विज प्रियान् ।१।
कालेन ब्रह्मणो नाशे प्रलये मयि सङ्गताः ।
अहमेवासमेवाग्रे नान्यत् कार्यमिद मम ।२।
प्रसुप्तलोकतन्त्रस्य द्वैतहीनस्य चात्मन ।
महानिशान्ते रन्तु मे समुद्भूतो विराट प्रभु• ।३।
सहस्रशोर्षा पुरुषा सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
तदङ्गजोऽभवद्‌ब्रह्मा वेदवक्तो महाप्रभु. ।४।

सूतजी बोले मुनीश्वरो ! उस समय सभा के मध्य मे भगवान कल्कि सूर्य के समान विराजमान होकर विशाखयूप नरेश के प्रति धर्म-प्रसग कहने लगे ।१। कल्कि बोले—कालान्तर मे जब यह ब्रह्माण्ड नाश को प्राप्त होगा तब प्रलय होने पर मुझ मे विलीन हो जायगा। सृष्टि से पूर्व मैं ही विद्यमान था, अन्य कुछ भी नही था । इस सम्पूर्ण जगत् का कारण मैं ही हूँ ।२। सम्पूर्ण विश्व की प्रसुप्ति और द्वैतहीनात्मिका महा रात्रि का अन्त होने पर मैं सर्वशक्ति सम्पन्न विराट् मूर्ति रूप मे आविभूत होता हूँ ।३। वह विराट्मूर्ति सहस्र मस्तक, सहस्र नेत्र और सहस्र चरण वाली हुई, उसी मूर्ति के अग से ब्रह्माजी उत्पन्न हुए ।४।

जीवोपाधेर्ममांशाच्च प्रकृत्या मायया स्वया ।
ब्रह्मोपाधिः स सर्वज्ञो मम वाग्वेदशासितः ।।

ससर्ज जीव जातानि कालमाया शयोगत.
देवा मन्वादयो लोका स प्रजापतय. प्रभु ।६।
गुणिन्या मायायाशा मे नानोपाधौ ससजरे।
सोपाधय इमे लोका देवा सस्थाणुजङ्गमा. ।७।
ममाशा मायया सृष्टा यतो मय्याविशन् लये।
एवविधा ब्राह्मणा ये मच्छरोरा मदात्मिका.।८।
मामुद्धरन्ति भुवने यज्ञाध्ययनसत्क्रिया.।
मा प्रसेवन्ति शसन्ति तपोदानक्रियास्विह ।९।
स्मरन्त्यामोदयन्त्येव नान्ये देवादयस्तथा।
ब्राह्मणा वेदवक्तारो वेदा मे मूर्तयः परा ।१०।

ब्रह्म उपाधि वाले सर्वज्ञ गुरु ने मेरी वेद वाणी के शासनानुसार मेरी माया प्रकृति की शक्ति, काल और अ श के सम्मिश्रण से इस जीवोपधारी जाति को प्रकट किया। इस प्रकार मनु आदि प्रजापतियो के सहित देवता प्रकट हुए।५-६। मेरे अ श से त्रिगुणात्मिका माया अनेक प्रकार की उपाधि धारण करके इस लोक मे देवता एव स्थावर जगम सृष्टि प्रकट करती है।७। माया सृष्टि का रचियता मेरा अश अन्त मे मुझ मे ही लय हो जाता है। इसी प्रकार ब्राह्मण मेरे ही आत्म स्वरूप एव देह हैं।८। क्योकि ब्राह्मण यज्ञ वेदाध्ययन आदि श्रेष्ठ कार्यों के द्वारा मेरा उद्धार तथा तप दानादि द्वारा मेरी सेवा करते हैं।९। वेदवक्ता ब्राह्मण जिस प्रकार स्मरण द्वारा मुझे प्रसन्न करते हैं, उस प्रकार देवतादि अन्य कोई भी मुझे प्रसन्न नही करते, क्योकि वेद ही मेरी परम मूर्ति है।१०।

तस्मादिमे ब्राह्मणजास्तै पुष्टस्त्रिजगज्जना:।
जगन्तिमे शरीराणि तत्पोषे ब्रह्मणो वर· ।११।
तेनाह तान्नमस्यामि शुद्धसत्वगुणाश्रय:।
ततो जगन्मय पूर्व मा सेवन्तेऽखिलाश्रया ।१२।

विप्रस्य लक्षण ब्रूहि त्वद्भक्ति का च तत्कृता ।
यतस्तवानुग्रहेण वाग्बाणा ब्राह्मणा कृता ।१३।
वेदा मामीश्वर प्रहुरव्यक्त व्यक्तिमत्परम् ।
ते वेदा ब्राह्मणामुखे नानाधर्मे प्रकाशिता. ।१४।
यो धर्मो ब्राह्मणाना हि सा भक्तिर्मम पुष्कला ।
तयाह तोषित श्रीश सभवामि युगे-युगे ।१५।

ब्राह्मण द्वारा वेदाध्ययन से तीनो लोको के निवासी पुष्टि को प्राप्त हो रहे हैं, प्राणी रूप मेरे देह को श्रेष्ठ ब्राह्मण ही पुष्ट करते हैं ।११। इसलिए शुद्ध सत्वगुण का आश्रित हुआ मैं ब्राह्मणो को मैं नमस्कार करता हूँ, तब ब्राह्मण भी मुझे विश्वमय समझ कर कर ही मेरी सेवा करते हैं ।१२। विशाखयूप नरेश ने कहा-हे प्रभो ! आप मेरे प्रति ब्राह्मणो के लक्षण कहिये । वे आपकी भक्ति किस प्रकार करते है, जिस भक्ति को करके वे आपके अनुग्रह से बाग्वाण स्वरूप हो जाते हैं ।१३। कल्कि बोले—हे राजन् ! अव्यक्त एव वेद ही मेरे ईश्वर है । ब्राह्मण के मुख मे यह वेद विभिन्न कर्मों का प्रकाश करते हैं ।१४। ब्राह्मणो का धर्माचरण मेरे प्रति भक्ति रूप मे प्रकट है । उनकी उसी भक्ति से सतुष्ट होकर मैं युग-युग मे प्रकट होता हूँ ।१५।

ऊर्द्ध्वन्तु त्रिवृत सूत्र सधवानिर्मित शनै· ।
तन्तुत्रयमधोवृत्तं यज्ञ सूत्रं विदुर्बुधा· ।१६।
त्रिगुण तद्ग्रन्थियुक्त वेदप्रवरसमितम् ।
शिरोधरात् नाभिमध्यात् पृष्ठार्द्ध परिमाणकम् ।१७।
यजुर्विदा नाभिमित सामगानामय विधि. ।
वामस्कन्धेन विधृत यज्ञ सूत्र बलप्रदम् ।१८।
मृद्भस्मचन्दनाद्यैस्तु धारयेत् तिलक द्विज ।
भाले त्रिपुण्ड्रं कर्माङ्ग केश पर्यन्तमुज्जलम् ।१९।
पुण्ड्रमंगुलिमानन्तु त्रिपुण्ड्र तत् त्रिधा कृतम् ।
ब्रह्मविष्णु शिवावास दर्शनात् पापनाशनम् ।२०।

ज्ञानियों का कहना है कि ब्राह्मण की सधवा नारी के द्वारा सूत्र को त्रिवृत्त करे तथा उस त्रिवृत सूत्र को पुन. त्रिवृत करे यही यज्ञ सूत्र है।१६। वेद प्रवर युक्त उस सूत्र मे गाँठ लगावे। यजुर्वेदी ब्राह्मण को यही यज्ञोपवीत कंठ से नाभि तक तथा पृष्ठ के आधे भाग तक धारण करे। सामवेदी ब्राह्मण को नाभि तक धारण करना चाहिए। यज्ञोपवीत बाँये कन्धे पर धारण करने से बल का देने वाला होता है-।१७-१८। द्विज को मृत्तिका भस्म और चन्दनादि का तिलक लगाना चाहिये। मस्तक पर केश पर्यन्त उज्वल त्रिपुण्ड लगाना चाहिये।१९। पुण्ड्र का प्रमाण एक अंगुल और त्रिपुण्ड्र इससे तिगुना होता है। त्रिपुण्ड्र मे ब्रह्मा, विष्णु और शिव निवास करते हैं। यह दर्शन करते ही पाप का नाश करने मे समर्थ है।२०।

ब्राह्मणाना करे स्वर्गा वाचो वेदा करे हरि: ।
गात्रे तीर्थानि रागश्च नाडीषु प्रकृतिस्त्रिवृत् ।२१
सावित्री कण्ठकुहरा हृदय ब्रह्म सहितम् ।
तेषा स्तनान्तरे धर्म पृष्ठोऽधर्म. प्रकीर्तित: ।२२।
भू देवा ब्राह्मणा राजन् ! पूज्या वन्द्या सदुक्तिभि ।
चतुराश्रम्यकुशला मम धर्म, प्रवर्त्तका. ।२३।
बालाश्चापि ज्ञानवृद्धास्तपोवृद्धा मम प्रिया: ।
तेषा वच पालयितुमवतारा कृता मया: ।२४।
महाभाग्य ब्राह्मणाना सर्वपापप्रणाशनम् ।
कलिदोषहर श्रुत्वा मुच्यते सर्वतो भयात् ।२५।

ब्राह्मणो के हाथों में स्वर्ग और भगवान् विष्णु निवास करते हैं वाणी मे वेद देह मे तीर्थ और राग तथा नाडी मे त्रिगुणात्मिका प्रकृति है ।२१। ब्राह्मणो के कण्ठ में सावित्री, हृदय मे ब्रह्म वक्षस्थल के मध्य मे धर्म एवं पृष्ठ देश मे अधर्म का निवास रहता है ।२२। हे राजन् ! चारो आश्रमों के धर्म को जानने वाले, मेरे धर्म के प्रवर्त्तक—

देवता ब्राह्मण श्रेष्ठ व्रतो के द्वारा वन्दनीय हैं ।२३। ज्ञानवृद्ध और ब्राह्मणो के बालको के प्रति मैं अत्यन्त प्रेम करता और उनके वचन पालनाथ ही अवतार धारण करता हूँ ।२४। सभी पापो का नाशक, कलि काल के दोषो का हरण करने वाला ब्राह्मणो के महाभाग्य रूपी चरित्र को सुनने से सदा सब भय नष्ट हो जाते हैं ।२५।

इति कल्किवच श्रुत्वा कलिदोषविनाशनम् ।
प्रणम्य त शुद्धमना प्रययौ वैष्णवाग्रणी: ।२६।
गते राजानि सन्ध्यायां शिवदत्तशुको बुध: ।
चरित्वा कल्किपुरत स्तुत्वा त पुरत. स्थित ।२७।
त शुक प्राह कल्किस्तु सस्मित स्तुतिपाठकम् ।
स्वागत भवता कस्मात् देशात किं खादित तत. ।२८।
शृणु नाथ ! वचो मह्य कौतूहलसमन्वितम् ।
अह गतश्च जलधेर्मध्ये सिंहल सज्ञके ।२९।
यथा वृत्त द्वीप गत तच्चित्र श्रवणप्रियम् ।
बृहद्रथस्य नृपते. कन्यायाश्चरितामृतम् ।३०।

कलियुग के दोषो को नष्ट करने वाले भगवान् कल्कि के वचन सुनकर पवित्र हृदय वैष्णव श्रेष्ठ राजा उन्हें प्रणाम करके चला गया ।२६। राजा के चले जाने पर शिव प्रदत्त ज्ञानी शुक सन्ध्या के समय भ्रमण से लौटकर भगवान कल्कि के सामने स्तुति करके खड़ा हुआ । उनके स्तोत्र-पाठ को सुन कर कल्कि भगवान बोले—तुम किधर से आ रहे हो ? तुमने वहाँ क्या भोजन किया ? शुक बोला—हे नाथ ! आप मुझसे कौतुकमय वाणी सुनिये । मैं समुद्र के मध्य स्थित सिंहल द्वीप मे गया था ।२९। उस द्वीप मे घटित वृत्तान्त सुनने मे बड़ा अच्छा है । राजा बृहद्रथ की कन्या का चरित्र अमृत के समान श्रेष्ठ है ।३०।

कौमुद्यामिह जाताया जगता पापनाशनम् ।
चरित सिंहले द्वीपे चातुर्वर्ण्यजनावृते ।३१।

प्रासाद-हर्म्य-सदन-पुर-राजि-विराजिते ।
रत्न-स्फाटिक-कुड्यादि-स्वलताभिभूषिते ।३२।
स्त्रीभिरुत्तमवेशाभिः पद्मिनीभि समावृते ।
सरोभि सारसैर्हंसैरुपकूलजलाकुले ।३३।
भृङ्ग रङ्ग प्रसङ्गाढ्ये पद्मै कह्लारकुन्दकै. ।
नानाम्बुजलताजाल-वनोपवन-मण्डिते ।३४।
देशे बृहद्रथो राजा महाबलपराक्रम. ।
तस्य पद्मावती कन्या धन्या रेजे यशस्विनी ।३५।

इस कन्या ने रानी कौमुदी के गर्भ से जन्म लिया है । इसका चरित्र श्रवण से पाप नाशक है । उस द्वीप मे चारो वर्णो के मनुष्यो का निवास है ।३१। भवन, अटारी, गृह युक्त नगर मे वहाँ का राजो सुशोभित है । उसका भवन रत्न, स्फटिक, मणि तथा स्वर्ण आदि की पच्ची-कारी से विभूषित हो रहा है ।३२। वहाँ पद्मिनी प्रभृति स्त्रियाँ श्रेष्ठ वस्त्रादि से सुशोभित रहती हैं । सरोवरो मे सारस और हस आदि पक्षी किलोल करते हैं । ।३३। वह द्वीप विभिन्न प्रकार की पद्मलताओ के जालो से सुशोभित है । उपवनो मे कल्हार, कुन्द आदि के पुष्पो पर भोरे गुजार करते हैं ।३४। वहाँ का राजा बृहद्रथ महाबली और पराक्रमी है । उसकी पद्मावती नाम की कन्या भी अत्यन्त यशस्विनी है ।३५।

भुवने दुर्लभा लोकेऽप्रतिमा वरवर्णिनी ।
काम मोह करी चारु चरित्रा चित्र निर्मिता ।३६।
शिव सेवापरा गौरी यथा पूज्या सुसम्मता ।
सखीभिः कन्यकाभिश्च जप ध्यान परायणा ।३७।
ज्ञात्वा ताञ्च हरेर्लक्ष्मी समुद्भूतां वराङ्गनाम् ।
हरः प्रादुरभूत्साक्षात्पार्वत्या सह हर्षित ।३८।
सा तमालोक्य वरदं शिव गौरी समन्वितम ।
लज्जिताधोमुखी किञ्चिन्नोवाच पुरतः स्थिता ।३९।

हरस्तामाह सुभगे ! तव नारायण पति. ।
पाणि ग्रहीष्यति मुदा नान्यो योग्यो नृपात्मज ।४०।

श्रेष्ठ मुख वाली,सुन्दर चरित्रमयी, कामदेव को भी मोहित करने वाली उस कन्या की समानता ससार मे कोई नही कर सकता ।३६। जिस प्रकार गिरिजा भगवान शकर की सेवा परायण है, उसी प्रकार पूजनीया पद्मावती अपनी सखियो के साथ जप ध्यान-परायण रहती हैं। ।२७। भगवान विष्णु की प्रिया लक्ष्मी जी को पद्मावती के रूप मे उत्पन्न हुई जानकर पार्वती जी के साथ भगवान शकर वहाँ पधारे ।३८। वरदाता शिवजी को पार्वती जी के सहित आये देख कर उस कन्या ने लज्जा से शिर नीचा कर लिया और अवाक् खडी रही ।३९। तब शिवजी बोले—
हे सुभगे ! तुम्हारे पति भगवान नारायण ही तुम्हारा पाणि ग्रहण करेंगे। क्योंकि अन्य कोई राजकुमार तुम्हारे योग्य नही है ।४०।

कामभावेन भुवने ये त्वा पश्यन्ति मानवा ।
तेनैव वयसा नार्यो भविष्यन्त्यपि तत्क्षणात् ।४१।
देवासुरास्तथा नागा गन्धर्वाश्चारणादयः ।
त्वया रन्तु तथाकाले भविष्यन्ति किल स्त्रियः ।४२।
विना नारायण देव त्वत्पाणिग्रहणार्थिनम् ।
गृह याहि तपस्त्यक्त्वा भागस्यतनुतनम् ।४३।
मा क्षोभये हरेः पत्नि कमले विमल कुरु ।
इति दत्वा वर सोऽयस्तत्रैवान्तर्दधे ह र ।४४।
हरवरमिति सा निशम्य पद्मा समुचितमात्मनोरथ प्रकाशम् ।
विकसितवदना प्रणम्य सोम निजजन कालयभाविवेश रामा

मृत्युलोक के वासी जो मनुष्य तुम्हारी ओर काम भाव से दृष्टि पात करेंगे, वे तत्काल अपनी आयु के अनुकूल स्त्रीत्व भाव को प्राप्त हो जायेंगे ।४१। देवता, दैत्य, नाग, गधर्व चारण आदि मे भी जो कोई तुम पर कुदृष्टि डालेगे वे भी स्त्रीत्व को उसी समय प्राप्त होगे ।४२।

भगवान नारायण के अतिरिक्त जो कोई भी तुम्हारा पाणिग्रहण करना चाहेगा, वह ऐसी ही दशा को प्राप्त होगा। अब तुम तपस्या को छोड़-कर भोग के योग्य अपना रूप बनालो और अपने घर को प्रस्थान करो।४३। हे कमले ! तुम हरि की पत्नी हो, हर प्रकार का क्षोभ त्याग कर मन को स्वस्थ करो। इस प्रकार वर प्रदान करके शिवजी अन्तर्ध्यान होगये।४४। भगवान शंकर से मनोवाञ्छित वरदान प्राप्त करके प्रफुल्ल मुख हुई पद्मा शिवजी को प्रणाम करके अपने पितृ-गृह को गई।४५।

—❀—

पंचम अध्याय

गते बहुतिथे काले पद्मा वीक्ष्य बृहद्रथः।
निरूढ यौवना पुत्री विस्मित पापशङ्कया।१।
कौमुदी प्राह महिषी पद्मोद्वाहेऽत्र क नृपम्।
वरयिष्यामि सुभगे! कुलशील समन्वितम्।२।
सा तमाह पति देवी शिवेन प्रतिभाषितम्।
विष्णुरस्य: पतिरिति भविष्यति न संशय।३।
इति तस्यावच. श्रुत्वा राजा प्राह कदेतिताम्।
विष्णु: सर्व गुहावास' पाणिमस्या ग्रहीस्यति।४।
न मे भाग्योदय' कश्चित् ये न जामातर हरिम्।
वरयिष्यामि कन्यार्थे वेदवत्या मुनेर्यथा।५।
इमा स्वय वरा पद्मा पद्मामिव महोदधे।
मथनेऽसुरदेवाना तथा विष्णुर्ग्रहीष्यति।६।

शुकदेव जी ने कहा—बहुत समय व्यतीत होने पर जब पुत्री को

राजा वृहद्रथ ने उसे यौवनावस्था के लक्षणो से युक्त देखा तब वह पाप की शका से चिन्ता करने लगा ।१। तब राजा ने अपनी रानी कौमुदी के प्रति कहा कि हे सुभगे ! तुम मुझे परामर्श दो कि अपनी प्रिय पुत्री के विवाहार्थ किस शीलगुण सम्पन्न एव श्रेष्ठ कुलोत्पन्न राजा को आमन्त्रित किया जाय ? ।२। यह सुन कर रानी कौमुदी ने राजा को भगवान शकर के वचन स्मरण कराते हुए कहा कि इसके पति भगवान् श्री हरि ही होगे, इसमे सशय नही है ।३। उसके यह वचन सुनकर राजा वृहद्रथ ने रानी से पूछा कि हे प्रिये ! यह तो बताओ कि भगवान् विष्णु कितने समय मे इसका पाणिग्रहण कर लेगे ।४। हे प्रिये ! अभी तो हमारा ऐसा भाग्योदय नही हुआ ज न पडता कि जिससे प्रभाव से वेदवती के समान मैं भी स्वयवर मे भगवान् श्री हरि को अपने जामाता के रूप मे प्राप्त कर सकू ।५। देवताओ और दैत्यो के द्वारा मथन किये जाते समुद्र से उत्पन्न हुई पद्मासना पद्मा के समान मेरी इस पद्मा को स्वयवर मे भगवान् श्री हरि वरण करलें ।६।

इति भूपगणान्भूप समाहूय पुरस्कृतान् ।
गुणशीलवयोरूप विद्याद्रविण सवृतान ।७।
स्वयवरार्थ पद्मायाः सिहले बहुमङ्गले ।
विचार्य कारयामास स्थान भूपनिवेशनम् ।८।
तत्रायाता नृपा: सर्व विवाह कृत निश्चयाः ।
निज सैन्यै: परिवृता, स्वर्णरत्न विभूषिता ।९।
रथान्गजानश्ववरान्समारूढा महाबला. ।
श्वेतच्छत्रकृतच्छायाः श्वेतचामर वीजिता. ।१०।
शस्त्रास्त्रतेजसा दीप्ता देवा सेन्द्राइवाभवन ।
रुचिराश्व: सुकर्मा च मदिराक्षो दृढाशुगः ।११।
कृष्णसार: पारदश्च जीमूत: क्रूरमर्दन ।
काश कुशाम्बुर्वसुमान् कङ्क क्रथन सञ्जयौ ।१२।
गुरुमित्र: प्रमार्था च विजृम्भ सञ्जयोऽक्षम ।

एते चान्यो च बहवः समायाता महाबलाः ।१३।

ऐसा सोचते हुए राजा वृहद्रथ ने, अपनी कन्या के स्वयवर के निमित्त गुणवान, शीलवान, रूपवान, विज्ञ एव महान् ऐश्वर्य वाले युवावस्था से परिपूर्ण राजाओ को सम्मान सहित आमन्त्रित किया ।७। इस प्रकार उस सिहल देश मे पद्मा के स्वयवर का उत्सव मनाया जाने लगा बहुत प्रकार के मगल होने लगे और राजाओ के निवास आदि के लिए स्थान सज्जित किये जाने लगे ।८। विवाह की इच्छा से सुवर्ण, मणि-रत्नादि से विभूषित हुए राजागण देश विदेश से अपनी सेनाओ के सहित वहाँ आने लगे ।९। वे सभी बलवान् राजागण रथ, अश्व, गज आदि विभिन्न वाहनो पर सवार होकर वहाँ आये। उनके ऊपर श्वेत छत्र लगाये और चमर डुलाये जाते थे । १० । उस समय शस्त्रादि से दैदीप्यमान वे सब राजागण ऐसे शोभा पाने लगे जैसे देवताओ के समाज मे इन्द्र सुशोभित होते हैं । रुचिराश्व, सुकर्मा, मदिराक्ष, दृढाशुग, कृष्ण-सार, पारद, जीमूत क्रूरमर्दन, काश, कुशाम्बु, वसुमान, कक, क्रथन, सजय, गुरुमित्र, प्रमाथी, विजृम्भ सञ्जय, अक्षम आदि अनेक महा-पराक्रमी नरेशगण वहाँ एकत्र होगये ।११-१३।

विविशुस्ते रङ्गगता स्वस्वस्थानेषु पूजिता. ।
वाद्यताण्डवसहृष्टाश्चित्र माल्यम्बराधराः ।१४।
नानाभोगसुखोद्रिक्ता कामरामा रतिप्रदा· ।
नानालोक्य सिहलेश स्वा कन्या वरवर्णिनीम् ।१५।
गौरी चन्द्रनना श्यामा तारहारविभूषिताम् ।
मणिमुक्ताप्रवालैश्च सर्वाङ्गालकृतां शुभाम् ।१६।
कि माया मोहजननी कि वा कामप्रियां भुवि ।
रूपलावण्यसम्पयन्या न चान्यमिह दृष्टवान ।१७।
स्वर्गे क्षितौ वा पातालेऽप्यह सर्वत्रगो यदि ।
पश्चद्दासीगणकीर्णां सखीभिः परिवारिताम् ।१८।

वे राजागण विविध प्रकार के वस्त्राभूषण, माला आदि से विभूषित होकर रगभूमि मे आकर सादर सम्मानित होते हुए सुखपूर्वक अपने-२ अपने स्थान पर बैठ गये ।१४। विभिन्न प्रकार के भोगो और ऐश्वर्य से सम्पन्न, रमणीय, चरित्र वाले एव सब को प्रसन्न करने के स्वभाव वाले राजाओ को देखकर सिंहलेश बृहद्रथ ने अपनी वरवर्णिनी कन्या को स्वयवर मे बुलाया ।१५। गौरी, चन्द्रानना, श्यामा मणि-मोती रत्नो आदि से सब प्रकार विभूषित, अत्यन्त सुन्दर हार को धारण किये हुए वह पद्मावती मोहमयी माया अथवा कामदेव की साक्षात् पत्नी ही अवतरित हुई प्रतीत होने लगी । मैं स्वर्ग, मर्त्यलोक, पाताल सभी लोको मे तो गमन करता हूँ । परन्तु ऐसी रूप लावण्य वाली कोई अन्य कन्या मैंने कही भी नही देखी । उस कन्या के पीछे दासियाँ चल रही थी तथा उसके चारो ओर सखियाँ थी १६-१८।

दौवारिकैर्वेत्रहस्तै शासितान्त. पुराद्बहिः ।
पुरोबन्दिगणाकीर्णा प्रापयामास ता शनै. ।१९।
नूपुरै. किङ्किणीभिश्च क्वणन्ती जनमोहिनीम् ।
स्वागताना नृपाणाञ्च कुल शील गुणान्बहून ।२०।
शण्वन्ती हसगमना रत्नमालाकरग्रहा ।
रुचिरापाङ्गभङ्गेन प्रेक्षन्ती लोलकुण्डला ।२१।
नृत्यकुन्तलसोपान गण्ड मण्डल मडिता ।
किञ्चित्स्मेरोल्लसद्वक्रदशनद्योतदीपिता ।२२।
वेदीमध्यारुण क्षौमवसना कोकिलस्वना ।
रूप लावण्य पण्येन क्रतुकामा जगत्रयम् ।२३।
समागता तां प्रसमीक्ष्य भूपाः समोहिनी काम विमूढ चित्ता· ।
पेतुः क्षितौ विस्मृतवस्त्रशस्त्रा रथाश्वमत्तद्विपवाहनास्ते ।२४।

नगर के बाहर दौवरिकगण हाथो मे बेत लिए हुए अन्त पुर के शासन मे सलग्न थे । सभास्थल के अगले भाग मे बदीगण खडे थे । उस रग भूमि मे राजकुमारी पद्मा मदगति से प्रविष्ट हुई ।१९। नूपुर और

किङ्कणी से लोकों को मोहने वाली झकार करती हुई और आगत नरेशों के कुल, गुण, शील आदि का वर्णन श्रवण करती हुई वह हंसगति वाली राजकन्या हाथ मे रत्नमाला लिए हुए अपने चचल अगो से शोभा को पाती हुई और कटाक्षपूर्वक सब को देखती हुई बढती जा रही थी। वह हिलते हुए कुण्डल वाली, केशकुन्तल की चचलता से युक्त, सुन्दर ग्रीवा वाली, विकसित मुख से मद मुसकराती हुई, जिसके दांतो की पक्तियाँ चमक रही थी, लाल रग के रेशमी वस्त्र धारण किये हुए, कोकिला जैसे कण्ठ स्वर वाली, जिसके रूप लावण्य से तीनो लोक मोहित हो रहे थे, उस मनमोहिनी सुकुमारी राज कन्या को रगभूमि मे घूमती हुई देखकर कामदेव के वशीभूत हुए राजागण ऐसे विह्वल चित्त होगये कि उनके शस्त्रास्त्र और वस्त्रादि सभी खुल-खुल कर पृथिवी पर गिरने लगे।१६-२४।

तस्याः स्मरक्षोभ निरीक्षणेन स्त्रियो बभूवुः कमनीयरूपाः।
बृहन्नितम्बस्तनभारनम्रा सुमध्यमास्तत्स्मृतिजातरूपा.।२५।
विलासहास व्यसनातिचित्रा: कान्तानन. शोणसरोज नेत्रा:।
स्त्रीरूपमात्मानमवेक्ष्य भूपास्तामन्वगच्छन्विशदानुवृत्या।२६।
अह वटस्थ: परिधर्षितात्मा पद्माविवाहोत्सवदर्शनाकुल.।
तस्या वचोऽन्तर्हृदि दुःखितायाः श्रोतु स्थित. स्त्रीत्वमितेषु तेषु।
जाहीहि कल्के कमलाविलाप श्रुत विचित्र जगतामधीश।
गते विवाहोत्सवमङ्गले सा शिव शरण्य हृदये निधाय।२८।
तान्दृष्ट्वा नृपती.गजाश्वरथिभिरत्यक्तान्सखित्व गतान्।
स्त्रीभावेन समन्विताननुगतान्पद्मा विलोक्यान्तिके।
दीना त्यक्तविभूषणा विलखिती पादागुलै. कामिनी।।
ईश कर्तुं निजनाथमीश्वरवचस्तथ्य हरिसाऽस्मरत्।२६।

काम से विमोहित हुए उन राजाओ ने जैसेही उस राजकन्या को वासनामय नेत्रो से देखा वैसे ही वे जिस रूप पर लालायित हुए थे, वैसे

ही रूप वाली कमनीय नारी का रूप उन्हे प्राप्त होगया ।२५। इस प्रकार नारी सुलभ हास, विलास, व्यसन, चातुर्य, सुन्दर मुख और कमल जैसे नेत्रो को प्राप्त हुए वे राजागण अपने को स्त्री हुए देख कर पद्मा के पीछे पीछे उसकी सहेली बनकर चलने लगे ।२६। उस समय पद्मा के विवाह का वह उत्सव देखने के निमित्त मैं पास ही के एक वृक्ष पर बैठ गया था । जब वे राजागण स्त्री रूप हो गये तब तो पद्मा अत्यन्त शोकित हो उठी । मैं उसके विलाप को सुनता रहा । हे लोक स्वामिन् ! उस मगलमय उत्सव के इस प्रकार समाप्त हो जाने पर पद्मा ने भगवान् शकर का ध्यान कर जो विलाप किया था, उस करुण विलाप को आप श्रवण कीजिये । पद्मा ने देखा कि सभी राजागण मुझे देखते ही अपने हाथी, अश्व, रथ आदि से विलग होकर स्त्री रूप मे मेरी सहेली होकर साथ-साथ चल रहे हैं, तो वह अत्यन्त दीनतापूर्वक अपने आभूषणो को त्याग कर धरती को कुरेदने लगी । फिर वह शिवजी के वरदान की सफलता के हेतु भगवान् विष्णु का पति भाव से ध्यान करने लगी ।२७–२९।

षष्ठ अध्याय

तत. सा विस्मितमुखी पद्मा निजजनैर्वृता ।
हरिं पतिं चिन्तयन्ती प्रोवाच विमला स्थिताम् ।१।
विमले किं कृत धात्रा ललाटे लिखन मम ।
दर्शनादपि लोकाना पुसा स्त्रीभावकारकम् ।२।
ममापि मन्दभाग्यया पापिन्या. शिवमेवनम् ।
विफलत्व मनुप्राप्त बीजमुप्त यथोपरे ।३।
हरिर्लक्ष्मीपति सर्वजगतामधिप प्रभु ।
मत्कृतेऽप्यभिलाष किं करिष्यति जगत्पति. ।४।
यदि शम्भोर्वचो मिथ्या यदि विष्णुर्न मां स्मरेत् ।
तदाहमनले देह त्यक्ष्यामि करिभाविता ।५।

शुकदेव जी बोले—तदनन्तर विस्मित मुख वाली पद्मा अपनी सहेलियो के मध्य स्थित हुई, भगवान विष्णु को पतिरूप मे विचार करती हुई, अपने निकट स्थित विमला नाम की सहेली से कहने लगी ।१। पद्मा बोली—हे विमले ! क्या ब्रह्मा ने मेरे भाग्य मे यही लिख दिया है कि जो पुरुष मुझे देखे, वह तुरन्त स्त्रीत्व को प्राप्त हो जाय ।२। हे सखी ! जैसे मरुभूमि मे बोया गया बीज निष्फल होता है, वैसे ही मुझ अभागिनी एव पापिनी द्वारा भगवान् शकर की, की गई उपासना व्यर्थ होगई ।३। भगवान् रमापति विष्णु सम्पूर्ण विश्व के अधीश्वर और प्रभु हैं मैं उन्हे पति रूप मे प्राप्त करने की कामना करूँ तो क्या वे मुझे स्वीकार करेंगे ? ।४। यदि भगवान शम्भु का वचन मिथ्या हो गया और भगवान विष्णु ने मेरी कामना नही की तो मैं उन्ही भगवान् श्री हरि का ध्यान करती हुई अपने देह को अग्नि कुण्ड मे डाल कर भस्म कर दूँगी ।५।

क्व चाह मानुषो दोना क्वाते देवो जनार्दनः ।
निगृहीता विधात्राह शिवेन परिवचिता ।६।
विष्णो च परित्यक्ना मदन्या नात्र जीवति ।७।
इति नाना विलपिन्या वचन शोचनाश्रयम् ।
पद्मायाश्चरुचेष्टाया। श्रुत्वायातस्तवान्तिके ।८।
शुकस्य वचन श्रुत्वा कल्किः परमविस्मितः ।
त जगाद् पुनर्याहि पद्मा बोधयितु प्रियाम् ।९।
मत्सन्देशहरो भूत्वा यद्रूपगुणकीर्तनम् ।
श्रावयित्वा पुन कीर ! समायास्यासि बांधव ।१०।

कहाँ तो मैं दीन मानुषी और कहाँ वे जनार्दन प्रभु–इन दोनो मे विवाह की कल्पना करने से ही मैं तो यह समझती हूँ कि विधाता मुझ से विमुख है, तभी तो शिवजी ने मुझे वैसा वर देकर ठग लिया है- ।६। भगवान श्री हरि के द्वारा परित्यक्ता होकर मेरे अतिरिक्त और कौन जीवित रह सकता है ।७। सुन्दर चरित्र वाली पद्मावती इस प्रकार से विलाप करती थी । उसके शोकाकुल वचनो को सुनकर ही मैं आपके निकट उपस्थित हुआ हूँ ।८। शुक के यह वचन सुनकर अत्यन्त विस्मय को प्राप्त हुए कल्कि जी ने शुक के प्रति कहा—हे शुक मेरी प्रिया पद्मा को आश्वासन् देने के निमित्त तुम पुन: सिंहल देश को प्रस्थान करो ।९। हे शुक ! तुम हमारे सदेश वाहक होकर पद्मा को हमारे रूप गुण का वृत्तान्त सुनाना और फिर हे खग ! तुम शीघ्र ही यहाँ लौट आना ।१०।

सा मे पतिरह तस्या दैवविनिर्मितः ।
मध्यस्थेन त्वया योगमावयोश्च भविष्यति ।११।
सर्वऽज्ञसि विधिज्ञोऽसि कालज्ञोऽसि कथामृतै ।
तामाश्वास्य ममाश्वासकथास्तस्याः समाहरः ।१२।
इति कल्केर्वचः श्रुत्वा शुक परमहर्षितः ।
प्रणम्य त प्रोतमनाःप्रययौ सिंहलं त्वरन् ।१३।

खगः समुद्रपारेण स्नात्वा पीत्वामृतं पय ।
बीजपूरफलाहारो ययौ नाजजिनिवेशमम् ।१४।
तत्र कम्यापुर ग्रत्वावृक्षे नागेश्वेर वसन् ।
पद्मालोक्य तां प्राह मुको मानुष भाषया ।१५।

अवश्य ही पद्मा मेरी पत्नी और मैं उसका पति हूँ । विधाता ने ही यह सयोग नियत किया है और यह कार्य तुम्हारी मध्यस्थता मे ही सम्पम्न होना है । ११। तुम सर्वज्ञ हो, नियम और काल के भी ज्ञाता हो । तुम अपने वचनामृत से समझा कर और मेरे द्वारा ग्रहण किये जाने का आश्वासन देकर यहाँ लौट आओ । ।१२। कल्किजी का ऐसा आदेश पाकर मुदित हुए शुक ने उन्हे प्रणाम किया और शीघ्रतापूर्वक सिहल-देश को प्रस्थान किया ।१३। मार्ग मे, समुद्र के पार जाकर शुक ने स्नान करके उस अमृतोपम जल का पान और बिजौरे के फलको भक्षण किया और फिर राजभवन मे प्रविष्ट होगया ।१४। वह अन्त पुर मे पहुच कर राजकन्या के निवास स्थान पर जाकर नागकेशर के एक वृक्ष पर चढ गया और पद्मा को देख कर मनुष्यो की भाषा मे उससे बोला ।१५।

कुशलं ते वरारोहे ! रूप यौवन शालिनो ।
त्वा लोलनयनां मन्ये लक्ष्मी रूपमिवापराम् ।१६।
पद्मानना पद्मगन्धां पद्मनेत्रा कराम्बुजे ।
कमल कालयन्तीं त्वां लक्षयामि परां श्रियम् ।१७।
किं धात्रा सर्वजगतां रूपलावण्यसम्पदाम् ।
निर्मितासि वरारोहे ! जीवानां मोहकारिणि ! ।१८।
इति भाषितमाकर्ण्य कीरस्यामितमद्भुतम् ।
हसन्ती प्राह सा देवी त पद्मा पद्ममालिनी ।१९।
कस्त्वं कस्मादागतोऽसि कथ मा शुकरूपधृक् ।
देवो वा दानवो वा त्वमागतोऽसि दयापरः ।२०।

शुक ने कहा—हे वरारोहे ! हे रूप यौवन सम्पन्ने तुम कुशल पूर्वक तो हो ? तुम अपने चचल नेत्रो से सुशोभित द्वितीय लक्ष्मी ही प्रतीत होती हैं ।१६। तुम कमल जैसे मुख वाली, कमलगधा, कमलाक्ष तथा कमल के समान हाथो वाली हो। अपने हाथ मे तुमने कमल धारण किया हुआ है, यह लक्षण तुम्हारा लक्ष्मी होना सूचित करता है- ।१७। हे वरारोहे ! विधाता ने क्या सम्पूर्ण विश्व का रूप लावण्य तुम्ही मे भर कर तुम्हे ही सब जीवो को मोहित करने वाली बना दियो है ।१८। शुक के यह अद्भुत वचन सुनकर पद्ममालधारिणी पद्मा ने हँसकर कहा १६। तुम कौन हो ? कहाँ से आगमन हुआ है ? तुम इस शुक वेश मे देवता हो अथवा दानव ? तुम यहाँ आकर किसलिए ऐसी दया प्रदर्शित कर रहे हो ।२०।

सर्वज्ञोऽह कामगामी सर्वशास्त्रार्थतत्त्ववित् ।
देवगन्धर्वभूपानां सभासु परिपूजित ।२१।
चरामि स्वेच्छाया खे त्वामीक्षणार्थमिहागत· ।
त्वामह हृदि सतप्तां त्यक्तभोग मनस्विनोम् ।२२।
हास्यालाप-सखी-सङ्ग देहाभरण-वर्जिताम् ।
विलोक्याह दीनचेता पृच्छामि श्रोतुमोरितम् ।
कोकिलालाप-सन्ताप-जनक मधुर मृदु ।२३।
तव दन्तौष्ठजिह्वाग्रलुलिताक्षरपत्कय
यत्कर्णकुहरे मग्नास्तेषा कि वर्ण्यते तत ।२४।
सौकुमार्यं शिरीषस्य क्व कान्तिर्वा निशाकरे ।
पीयूष क्व वदन्त्येवानन्द ब्रह्मणि ते बुधा. ।२५।

शुक ने कहा—देवी ! मैं सब कुछ जानने वाला तथा सब शास्त्रो का तत्वज्ञानी हूँ। मैं स्वेच्छापूर्वक सर्वत्र गमन करने मे समथ हूँ। देवता, गधर्व अथवा राजाओ की सभा मे मेरा पूर्ण सम्मान होता है ।२१। मैं गगन मडल मे अपनी इच्छा के अनुसार विचरण करता हूँ। तुम हृदय

मे सन्तप्त तथा भोग सुख से परे एवं मनस्विनी के दर्शनार्थ ही यहाँ आ पहुँचा हूँ ।२२। तुमने हास्यालाप, सखियोका संग और आभरणको त्याग रखा है । तुमको इस स्थिति मे देखकर दीन-हृदय हुआ मै तुम्हारी कोकिल जैसी मधुर वाणी मे तुम्हारे सन्तप्त रहने कारण जानना चाहता हूँ । २३। तुम्हारे, ओष्ठ और जिह्वा के अग्र भाग मे निसृत अक्षर पंक्तियाँ जिसके कानो को सुनाई पड जाय, उसकी तपस्या का प्रभाव कहाँ तक कहा जा सकता है ? ।२४। तुम्हारे समक्ष शिरस के पुष्पो की कमनीयता भी क्या है ? तथा चन्द्रकान्ति भी क्या वस्तु है ? ज्ञानीजन जिस ब्रह्म रूपी पीयूष का वर्णन करते है, वह आनन्द भी तुम्हारी क्या समता करेगा ? ।२५।

तिलकालकसमिश्र लोलकुण्डलमण्डितम् ।२६।
लोलेक्षणोल्लसद्वक्रनेत्र पश्यताम् न पुनर्भव. ।२७।
वृहद्रथसुते ! स्वाधि वद भामिनि यत्कृते ।
तप क्षीणामिव तनू लक्षयामि रुज विना ।
कनकप्रतिमा यद्वत मासुभिर्मलिनीकृता ।२८।
कि रूपेण कुलेनापि धनेनाभिजनेन वा ।
सर्व निष्फलतामेति यस्यदैवमदक्षिणम् ।।२६।।
श्रृणु कीर समाख्यान यदि वा विदित तव ।
बाल्य-पौगण्ड-कैशोरे हरसेवा करोम्यहम् ।।३०।।

तुम्हारे तिलक, अलक से युक्त चचल कुण्डलो से मण्डित तथा चचल नेत्रो से सुशोभित सुन्दर मुख का दर्शन करने वाले को पुनर्जन्म धारण नही करना होता ।२६ २७। हे बृहद्रथसुते ! अपने मानसिक दु ख का कारण मुझे बताओ । हे भामिनि ! तुम्हारी देह बिना रोग के ही, तप से क्षीण दिखाई दे रही है । जैसे मैल के कारण कचन की प्रतिमा मैली हो जाती है, वैसे ही तुम्हारा देह भी मलीन होगया है ।२८। पद्मा ने कहा—धन अथवा उच्च कुल मे उत्पन्न होने से ही

क्या प्रयोजन सिद्ध होना है, अर्थात् दैव की प्रतिकूलता हो तो यह सभी निष्फल हैं ।२६। हे कीर ! यदि तुम्हे हमारा वृत्तान्तज्ञात न हो तो सुनो— मैंने अपनी बाल और किशोर अवस्था मे भगवान शकर की आराधना की थी ।३०।

तेन पूजाविधानेन तुष्टो भूत्वा महेश्वर ।
वर वरय पद्मे ! त्वमित्याह प्रियया सह ।।३१।।
लज्जयेधोमुखीमग्रे स्थिता मा वीक्ष्य शङ्कर. ।
प्राह ते भविता स्वामी हरिर्नारायण प्रभु ।।३२।।
देवो वा दानवो वान्यो गन्धर्वो वा तवेक्षणात् ।
कामेन मनसा नारी भविष्यन्ति न सशय ।।३३।।
इति दत्वा वर सोम प्राह विष्ण्वर्च्चन यथा ।
तथाह ते प्रवक्ष्यामि समाहितमना शृणु ।३४।
एता. सख्यो नृपा पूर्वमाहूता ये स्वयम्वरे ।
पित्रा धर्मार्थिना दृष्ट्वा रम्या मा यौवनान्विताम् ।३५।

मेरे द्वारा किये गये उस पूजन से प्रसन्न हुए शिवजी ने पार्वतीजी के सहित प्रकट होकर मुझसे कहा कि हे पद्मे ! वर माँगो ।३१। फिर मुझे लज्जा पूर्वक सिर झुकाये देख कर उन्होने कहा कि तुम्हारे पति भगवान् नारायण होगे ।३२। देवता, दानव, गन्धर्व अथवा जो कोई भी हो, यदि तुम्हे काम-भाव से देखेगा तो तुरन्त स्त्री-रूप हो जायगा, इसमे सन्देह नही है ।३३। यह वर देने के पश्चात् शिवजी ने भगवान् विष्णु की जो पूजन विधि बताई थी, वह कहती हूँ, समाहित चित्त से सुनो।३४। यह जितनी भी सखियाँ हैं, सभी पहिले राजा थे । मेरे पिता ने मेरी यौवनावस्था देख कर धर्म की रक्षा के निमित्त इन सब राजाओ को मेरे स्वयम्बर मे बुलाया था ।३५।

स्वागतास्ते सुखासीना विवाहकृतनिश्चय ।
युवानो गुणवन्तश्चरूपद्रविणसम्मता· ।३६।

स्वयवरगता मा ते विलोक्य रुचिरप्रभाम् ।
रत्नमालाश्रितकरा निपेतु काममोहिता ।३७।
तत उत्थाय सभ्रान्ता सप्रेक्ष्य स्त्रीत्वमात्मन ।
स्तनभार नतम्बेन गुरुणा परिणामिता ।३८।
ह्रिया भिया च शत्रूणा मित्राणामतिदु खदम् ।
स्त्रीभाव मनसा ध्यात्वा मामेवानगता शुक ।
पारिचर्य्या हररता सख्य सवगुणान्विता ।
मया सम तपोध्यान पूजा, कुर्व्वन्ति सम्मता ।।४०।।
तदुदितमिति सनिशम्य कीर श्रवणसुख निजमानसप्रकाशम्।
समुचितवचनै'प्रतोक्ष्य पद्मा मुरहरयजन पुन प्रचष्टे ।।४१।।

यह सभी युवावस्था वाले, रूप, गुण एव ऐश्वर्य से सम्पन्न थे । यह सभी मेरे साथ विवाह करने की इच्छा से आकर स्वयवर-स्थल मे सुखपूर्वक बैठ गये ।३६। मुझ सुन्दर प्रभा वाली को हाथ मे रत्नमाला लेकर स्वयवर-स्थल मे घूमती देखकर यह सभी काम मोहित राजागण पृथिवी पर गिर गये ।३७। फिर जब सचेत होकर उठे तो अपने को स्त्रीत्व के सभी लक्षणो से युक्त अर्थात् स्त्री रूप मे पाया ।३८। तब तो यह अपने को स्त्री हुआ जान कर बडे दु खी हुए और शत्रु मित्र आदि की लज्जा छोड कर मेरे ही साथ चल पडे ।३९। अब यह सर्वगुण सम्पन्न नारी रूपी राजागण मेरी सखी होकर मेरे साथही भगवान् विष्णुका तप, ध्यान एव पूजन करते है ।४०। अपनी इच्छा के अनुकूल, सुनने मे सुखदायक इस वार्ता को सुन कर शुक ने समुचित वाणी से पद्मा को प्रसन्न किया और फिर भगवान् विष्णु के पूजन के प्रसङ्ग मे प्रश्न किया ।४१।

—◇—

सप्तम अध्याय

विष्णवर्चनं शिवेनोक्तं श्रोतुमिच्छाम्यहं शुभे ।
धन्यासि कृतपुण्यासि शिवशिष्यत्वमागता ॥१॥
अहं भाग्यवशादत्र समागम्य तवान्तिकम् ।
शृणोमि परमाश्चर्यं कीराकारनिवारणम् ॥२॥
भगवद्भक्तियोगश्च जपध्यानविधिं मुदा ।
परमानन्द-सन्दोह-दान-दक्षं श्रुतिप्रियम् ॥३॥
श्रीविष्णोरर्चनं पुण्यं शिवेन परिभाषितम् ।
यच्छ्रद्धयानुष्ठितस्य श्रुतस्य गदितस्य च ॥४॥
सद्यः पापहरं पुंसां गुरुगोब्रह्मघातिनाम् ।
समाहितेन मनसा शृणु कीर यथोदितम् ॥५॥

शुक बोला—हे शुभे ! शिवजी ने भगवान् विष्णु की जो पूजा-विधि तुम्हें बताई थी, उसे मैं सुनना चाहता हूँ । तुम धन्य हो, तुम अपने पुण्य कर्म द्वारा भगवान् शिव की शिष्या हो गई हो ।१। मैं भाग्य-वशात् ही यहाँ आ पहुँचा हूँ । अब मैं अपने शुक-शरीर का निवारण करने वाली आश्चर्यमयी पूजन विधि का श्रवण करूँगा ।२। भगवान् विष्णु का जप-ध्यान एवं पूजन की यह विधि भगवद्भक्ति के देने वाली, श्रवण में सुखद एवं परमानन्ददायिनी है ।३। पद्मा ने कहा—शिव-वर्णित विष्णु के पूजन की विधि अत्यन्त पुण्यमयी है । इसके श्रद्धापूर्वक सुनने, अध्ययन करने या कहने से गोहत्या, गुरुहत्या और ब्रह्महत्या के पाप भी नष्ट हो जाते हैं । हे कीर ! इसका वर्णन शिवजी ने जिस प्रकार किया था, उसे समाहित चित्त से सुनो ।४-५।

कृत्वा यथोक्तकर्माणि पूर्वाह्णे स्नानकृच्छुचि ।
प्रक्षाल्य पाणी पादौ च स्पृष्ट्वाप स्वासने वसेत् ।६।
प्राचीमुख. संयतात्मा साङ्गन्यास प्रकल्पयेत् ।
भूतशुद्धि ततोऽर्घ्यस्य स्थापन विधिवच्चरेत् ।।७।।
तत. केशवकृत्यादिन्यासेन तन्मयो भवेत् ।
आत्मान तन्मय ध्यात्वा हृदिस्थ स्वासने न्यसेत् ।।८।।
पाद्यार्घ्याचमनीयाद्यै: स्नानवासोविभूषणै ।
यथोपचारै. सपूज्य मूलमन्त्रेण देशिक ।।९।।
ध्यायेत्पादादमदकेशान्त हृदयाम्बुजमध्यगम् ।
प्रसन्नवदनं देव भक्ताभीष्टफलप्रदम् ।१०

प्रात काल स्नानादि नित्यकर्म से निवृत्त होकर हाथ-पावों का प्रक्षालन कर, जल स्पर्श करके अपने आसन पर बैठ जाय ।६। फिर संयतात्मा होकर पूर्वाभिमुख हो और अङ्गन्यास भूतशुद्धि तथा विधिवत् अर्घ्य स्थापन करे ।७। फिर केशव कृत्यादि न्यास युक्त होकर हृदय मे विष्णु का ध्यान करता हुआ, उन्हे कल्पित आसन पर प्रतिष्ठित करे ।८। फिर पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, स्नानार्थ जल, वस्त्राभूषण आदि भेंट करे और यथोपचार देशिक मूलमत्र से पूजन करे ।९। तदुपरान्त भक्तो को इच्छित फलदायक, हृदयाम्बुज मे रमण करने वाले, प्रसन्न मुख भगवान विष्णु का चरणकमलो से केश पर्यन्त ध्यान करे ।१०।

योगेन सिद्धिविबुधै परिभाव्यमान लक्ष्म्यालय
तुलसिकाञ्चितभक्तभृङ्गम् । प्रोत्तुङ्गरक्तनखराङ्गु-
लिपत्रचित्र गङ्गारस हरिपदाम्बुजमाश्रयेऽहम् ।११
गुल्फन्मणिप्रचयघट्टितराजहंससिञ्चत्सुनूपुरयुत
पदपद्मवृन्तम् । पीताम्बराञ्चलविलोलचलत्पता-
क स्वर्णत्रिवक्रवलयञ्च हरे: स्मरामि ।१२
जघे सुपर्णगलनीलमणिप्रवृद्धे शोभास्पदारुण-
मणिद्युतिचंचुमध्ये । आरक्तपादतललम्बनशो-

भभाने लोकेक्षणोत्सवकरे च हरे स्मरामि ।१३
ते जानुनी मखपतेर्भजमूलसङ्गरङ्गोत्सवावृतत-
डिद्वसने विचित्रे । चञ्चत्पतत्रमुखनिर्गतसामगीन
विस्तारितात्मयशसी च हरे स्मरामि ।१४

विष्णो कटि विधिकृतान्तमनोजभूमि जीवाण्ड-
कोषनणसङ्गदुकूलमध्याम् । मानागुणप्रकृतिपी-
तविचित्रवस्त्राध्यायेन्निबद्धवसना खगपृष्ठसस्थाम् ।१५

ध्यान के पश्चात् 'ॐ नमो नारायणाय स्वाहा" कहे और इस स्तोत्र का उच्चारण करे—योग के द्वारा सिद्ध हुए ज्ञानीजन जिनके ध्यान मे सदा रत रहते हैं, जो लक्ष्मी के आश्रय हैं, जिनके भक्तगण भृङ्ग रूपी तुलसी का सदा सेवन करते हैं, जिनके लोहित वर्ण कमलोपम नखयुक्त अंगुलिपत्रो से गगाजल निकल रहा है, उन कमल जैसे चरणो वाले नारायण की शरण लेता हूँ ।११। जिनके चरणो मे विभूषित मणिमान युक्त नूपुर हस के कलरव जैसा शब्द करते है, जिन चरणो मे पीताम्बर का छोर उडती हुई ध्वजा जैसा लगता है, जिन चरणो मे स्वर्णिम त्रिवक्र नामक कडा शोभित है, उन कमल के समान चरणाम्बुजो का मैं स्मरण करता हूँ १२। गरुड के कण्ठ भूषण रूप नीलकान्त मणि की प्रभा से समुज्ज्वल जिन जघाओ के मध्य मे गरुड की अरुणमणि के समान लाल चोच सुशोभित है, जिन जघाओ के नीचे लाल पादतल स्थिर हैं, उन विश्व-लोचन के परमानन्द रूप भगवान् की जघाओ का मैं स्मरण करता हूँ ।१३। सामगान के द्वारा गरुड जिनका यशोगान करते है उत्सव के अवसर पर चित्र विचित्र रगो से युक्त वस्त्रों की विद्युत आभा से विभूषित भगवान् की उन जघाओ का स्मरण करता हूँ ।१४। ब्रह्मा, काल और कन्दर्प की आश्रयभूता जो कटि है तथा जो कटि दुकूल से सुशोभित रहती है, गरुड की पीठ पर स्थित विष्णु की उस कटि का मैं ध्यान करता हूँ ।१५।

शातोदरं भगवतस्त्रिवलिप्रकाशभावर्त्तनाभि-
विकनद्विधिजन्मपद्नम्। नाडीनदीगणरसोत्थ-
सितन्त्रसिन्धु ध्यायेऽण्डकोषनिलय तनुलोमरेखम् ।१६
वक्ष: पयोधितनयाकुङ्कुमेन धारेण कौस्तु-
भमणिप्रभया विभातम्। श्रीवत्सलक्ष्म हरि च-
न्दनजप्रसूममालोचित भगवत: सुभग स्मरामि ।१७

जो उदर त्रिवाली से सुशोभित हैं, जिस उदर के नाभि कमल से ब्रह्माजी उत्पन्न हुए हैं, जिस उदर मे नाडी रूपी सरिताओ के रथ से अन्त्र रूप समुद्र तरगित हो रहा है, ब्रह्माण्ड के आश्रय रूप जिस उदर मे लोभ रेखाएं सुशोभित है, भगवान् के उस उदर का मैं स्मरण करता हूँ ।१६। जिस हृदय मे समुद्रजा लक्ष्मी के वक्षस्थल की केसर लगी हुई है, जो हृदय कठहार और कौस्तुभ मणि से दमक रहा है, जो हृदय श्रीवत्स के चिह्न से युक्त है और जिस पर हरिचन्दन फूलो की माला विभूषित है उस प्रभु-हृदय का मैं स्मरण करता हूँ ।१७।

बाहू सुवेशसदनौ वलयाङ्गदादिशोभास्पदौ दुरित
दैत्यविनाशदक्षौ। तौ दक्षिणौ भगवतश्च गदासु-
नाभतेजोजितौ सुललितौ मनसा स्मरामि ।१८
वामौ भुजौ मुररिपोर्धृतपद्नशखौ श्यामौ करीन्द्रकर
वन्मणिभूषणाढयौ। रक्ताङ्गुलिप्रचयचुम्बिमजानु
मध्यौ पद्नालयाप्रियकरौ रुचिरौ स्मरामि ।१९
कण्ठ मृणालममलं मुखपङ्कजस्य लेखात्रयेणावन
मालिकया निवतम्। किवा मुक्तिवसमन्त्रकस
त्फलस्य वृन्ते चिरं भगवत सुभग स्मरामि ।२०

जिन श्रेष्ठ भुजाओ मे वलय अगद आदि सुन्दर आभूषण सुशोभित है, जो भुजाएँ असख्य दानवो का संहार कर चुकी है, जिन भुजाओ की प्रभा के समक्ष गदा और चक्र आदि अस्त्रो का तेज भी नगण्य है, मैं

उन्ही भुजाओ का मन मे स्मरण करता हूँ।१८। हाथी की सूड जैसी जिन भुजाओ मे मणिमय आभूषण और शख पद्म आदि विभूषित हैं, जिन भुजाओ की लाल वर्ण वाली अ गुलियाँ जानु स्पर्श कर रही हैं, उन कमलासना पद्मा को प्रसन्न करने वाली भुजाओ का मैं स्मरण करता हूँ।१९। मृणाल के समान जिस कठ मे मुखारविन्द की तीन रेखाये और वनमाला सुशोभित है तथा जो कठ मोक्ष-मत्र के शुभफल का गुच्छा-स्वरूप है, उस श्रीहरि-कठ का मैं स्मरण करता हूँ।२०।

रक्ताम्बुज दशनहासविकाशरम्य रक्ताधरौष्ठधर
कोमलवाक्सुधाढ्यम् । सनमानसोद्भवचलेक्षणपत्रचित्रं

लोकाभिराममलञ्च हरे. स्मरामि ।२१
शूरात्मजावसथगन्धविदसुनाश भ्रूपल्लव स्थितिल-
यादयकर्मदक्षम् । कामोत्सवञ्च कमलाहृदयप्रका-
श सञ्चिन्तयामि हरिवक्त्रविलासदक्षम् ।२२
कर्णौ लसनमकरकुण्डलगण्डलोलौ नानादिशाश्च
नभसश्व विकासगेहौ । लोलालकप्रचयचुम्बनकु-
ञ्चिताग्रौ लग्नौ हरेर्मणिकिरीतटे स्मरामि ।२३
भाल विचित्रतिलक प्रियचारुगन्धगोरोचनारचनया
ललनाक्षिसख्यम् । ब्रह्मैकधाममणिकान्तकिरीट
जुष्ट ध्यायेन्मनोनयनहारकमोश्वरस्य ।२४।

लाल कमल के समान लाल अधरो के मध्य मुसकराते हुए दाँत, शोभामय कोमल वचन, मन को प्रसन्नता प्रदान करने वाले चचल नेत्र, जिस मुखमडल मे सुशोभित हैं, प्रभु के उस मुखारविन्द का मैं स्मरण करता हूँ।२१। जिन भृकुटि पत्रों की कृपा से यम सदन की गध भी नही आती जिनके समीप ही नासिका सुशोभित रहती है, जिनके संकेतमें सृष्टि, स्थिति एव प्रलय निहित हैं, जो मदनोत्सव को प्रकट करने वाले एवं

लक्ष्मीजी के हृदय को प्रफुल्लित करने वाले हैं, हरि के उन भृकुटि-पत्रो का मैं स्मरण करता हूँ ।२२। जिनमे मकराकार कुण्डल शोभा पाते हुए दिशाओं और आकाशको प्रकाशित करते है, जो अग्रभाग मे चचल अलको के स्पर्श से कुछ सकुचित हुए प्रतीन होते हैं, जो मणिमय किरीट के तीर पर स्थित हैं, भगवान के उन कानो का मैं स्मरण करता हू ।२३। जिस ललाट मे सुगधित अद्भुत गोरोचन तिलक नेत्रो में मैत्री भाव प्रकट करता है, जो ललाट रूपी ब्रह्मधाम मणिमय मुकुट से दीप्तिमान् है, उस नेत्रो को आनन्द देने वाले हरि के ललाट का मैं स्मरण करता हूँ ।२४।

श्रीवासुदेवचिकुर कुटिल निबद्धम् नानासुगन्धिकुसुमैः
स्वजनादरेण । दीर्घं रमाहृदयगाशमने धुनतं
ध्यायेऽम्बुवाहरुचिर हृदयाब्जमध्ये ।२५
मेघाकार सोमसूर्यप्रकाश सुभ्रून्नस चक्रचापैक
मानम् । लोकातीत पुण्डरीकायताक्ष विद्युच्चैल-
ञ्चाश्रयेऽहं त्वपूर्वम् २६।
दीनं हीन सेवया वेदवत्या पास्तपैः पूरित मे
शरीरम् । लोभाक्रान्त शोकमोहाधिविद्ध कृपा
दृष्ट्या पाहि मा वासुदेव ।२७

जिन कुटिल केशो मे सुगधित पुष्प गूँथ कर स्वजनो ने वेणी बनाई तथा जिन चचल केशों के दर्शन से लक्ष्मीजी का मन शान्त होता है, उन नील मेघ जैसे दीर्घ एव मनोहर केशो का मैं हृदय मे ध्यान करता हूँ ।२५। मेघवर्ण वाले चन्द्रमा और सूर्य के समान प्रकाशित, इन्द्र-धनुष के समान भौंह वाले, विद्युत जैसे समुज्ज्वल वस्त्र धारण करने वाले, लोकातीत, पुण्डरीकाक्ष भगवान् विष्णु की मैं शरण लेता हूँ ।२६। मैं अत्यन्त दीन, वेदोक्त सेवा से हीन और पाप-ताप युक्त देह वाला हूँ । मैं लोभ, शोक, मोह और मानसिक व्यथा से व्यथित हूँ । हे वासुदेव ! अपनी कृपा दृष्टि द्वारा मेरी रक्षा कीजिये ।२७।

ये भक्त्याद्या ध्यायमाना मनोज्ञा व्यक्ति विष्णोः

षोडशश्लोकपुष्पैः । स्तुत्वा नत्वा पूजयित्वा विधिज्ञाः
शुद्धा मुक्ता ब्रह्मसौख्य प्रयान्ति ।२८।
पद्मोरितमिद पुण्य शिवेन परिभाषितम् ।
धन्य यशस्यमायुष्य स्वर्ग्यं स्वस्त्यन दरम् ।२९।
पठन्ति ये महाभागास्ते मुच्यन्तेऽहसोऽखिलात्
धर्म्मार्थकाममोक्षाणां परत्रेह फलप्रदम् ।३०।

इस विधि को जानकर जो मनुष्य भक्ति भाव से भगवान् विष्णु के इस रूप का ध्यान करके षोडश श्लोक रूपी पुष्पो से स्तुति और नमन करके पूजा करते हैं, वह शुद्ध और मुक्त होकर ब्रह्मानन्द को प्राप्त होते हैं ।२८। शिवोक्त यह स्तोत्र, जिसे पद्मा ने कहा है, अत्यन्त पुण्य-मय है तथा धन, यश, आयुष्य, स्वर्ग एवं मगल का देने वाला है ।२९। यह स्तोत्र इहलोक और परलोक मे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूप चारों पदार्थो का दाता है । इसका पाठ करने वाले महाभाग पुरुष सभी पापो से मुक्त हो जाते हैं ।

—*—

द्वितीयांश—

प्रथम अध्याय

इति पद्मावच: श्रुत्वा कीरो धीर सता मत:
कल्किदूत· सखीमध्ये स्थिता पद्मामथाब्रवीत् ।१।
वद पद्मे साङ्गपूजा हरेरद्भुतकर्म्मण· ।
यामास्थाय विधानेन चरामि भुवनत्रयम् ।२।
एव पादादि केशान्तं ध्यात्वा त जगदीश्वरम् ।
पूर्णात्मा देशिको मूल मन्त्र जपति मन्त्रवित् ।३।
जपादनन्तर दण्ड-प्रणति मतिमाश्चरेत् ।
विष्वक्सेनादि कानान्तु दत्वा विष्णुनिवेदितम् ।४।
तत उद्वास्य हृदये स्नापयेन्मनसा सह ।
नृत्यन्गायन्हरेर्नाम त पश्यन्सर्वत स्थितम् ।५।

सूत जी बोले—पद्मा के वचन सुन कर सत्य मत वाले धीर एव कल्कि-दूत शुक ने सखियो के मध्य बैठी हुई पद्मा से कहा ।१। हे पद्मे ! अद्भुत कर्म वाले भगवान विष्णु की पूजा का सागोपाग वर्णन करो। क्योकि मैं उसका विधिवत् अनुष्ठान करके तीनो लोको मे विचरण करूँगा ।२। पद्मा बोली—इस प्रकार चरणो से केश पर्यन्त भगवान विष्णु का ध्यान करके मत्र के ज्ञाता को मूल मन्त्र का जप करना चाहिए ।३। जप के पश्चात् भगवान् को दण्डवत् प्रणाम करे। फिर विष्क्सेन आदि को पाद्य, अर्घ्य नैवेद्य आदि समर्पित करके भगवान् को निवेदन किये गये वस्त्र को धारण कर विष्णु का स्मरण करता हुआ नृत्य-गान और हरिनाम का कीर्तन करे ।४-५।

तत. शेषं मस्तकेन कृत्वा नैवेद्यभुग्भवेत् ।
इत्येतत्कथित कीर ! कमलानाथसेवनम ।६।
सकामना कामपूरणकामामृतदायकम् ।
श्रोत्रानन्दकर देव-गन्धर्व्व-नर-हृत्प्रियम् ।७।
ममीरित श्रुतसाध्वि भगवद्भक्तिलक्षणम् ।
त्वत्प्रसादात्पापिनो मे कीरस्य भुवि मुक्तिदम् ।८।
किन्तु त्वा काञ्चनमयी प्रतिमा रत्नभूषिताम् ।
सजीवामिव पश्यामि दुर्लभा रूपिणी श्रियम् ।६।
नान्या पश्यामि सदृशी रूपशीलगुणैस्तव ।
नान्यो योग्यो गुणी भर्त्ता भुवनेऽपि न दृश्यते ।१०।

फिर भगवान् का निर्माल्य शेष मस्तक पर धारण करे और नैवेद्य ग्रहण करे । हे शुक ! कमलानाथ की सेवा का यह विधान मैंने तुमसे कह दिया ।६। इस प्रकार की पूजा से कामना वालो की कामना पूर्ण होती और कामना न करने वाले को मोक्ष मिलता है । यह कथा देवता, गन्धर्व और मनुष्य सभी के श्रोत्रो को आनन्द देने वाली है ।७। शुक बोला—हे साध्वी ! तुमने मुझ पापिष्ठ तोते को भी मोक्ष देने वाली हरि-भक्ति की विधि कही है, उसे तुम्हारी कृपा से मैंने भली प्रकार सुना है ।८। परन्तु मैं तुम्हे रत्नालकारो से विभूषिता, स्वर्णमयी प्रतिमा के समान तीनो लोको मे दुर्लभ साक्षात् लक्ष्मी रूप मे देख रहा हूँ ।६। ससार मे तुम्हारे समान रूप शील और गुणमयी अन्य नारी मुझे दिखाई नही देती तथा तुम्हारे योग्य कोई अन्य गुणवान् भर्त्ता भी मुझे लोक मे दिखाई नही देता ।१०।

किन्तु पारे समुद्रस्य परमाश्चर्यरूपवान् ।
गुणवानीश्वर साक्षात्कश्चिद्दृष्टोऽतिमानुष. ।११।
न हि धातृकृत मन्ये शरीर सर्व सौभगम् ।
यस्य श्रीवासुदेवस्य नान्तर ध्यानयोगतः ।१२।

त्वया ध्यातं तु यद्रूपं विष्णोरमिततेजसः ।
तत्साक्षात्कृतमित्येव न तत्र कियदन्तरम् ।१३।
ब्रूहि तन्मम किं कुत्र जातः कीर परावरम् ।
जानासि तत्कृतं कर्म्म विस्तरेणात्रवर्णय ।१४।
वृक्षादागच्छ पूजां ते करोमि विधिबोधिताम् ।
बीजपूरफलाहारं कुरु साधु पयः पिब ।१५।

किन्तु, समुद्र के उस पार एक परम आश्चर्यमय रूप वाला, गुणी, अलौकिक एवं साक्षात् ईश्वर स्वरूप मनुष्य मुझे दिखाई दिया है ।११। उसका सर्व सौन्दर्यमय देह ब्रह्मा द्वारा रचित प्रतीत नहीं होता । ध्यान-योग से देखें तो उसमें और भगवान वासुदेव में कुछ भी अन्तर नहीं मिलेगा ।१२। हे पद्मे ! तुम भगवान् विष्णु के जिस अमित तेजमय स्वरूप का ध्यान करती हो, उस रूप में और उस मनुष्य के रूप में कोई अन्तर दिखाई नहीं देता ।१३। पद्मा ने कहा—हे शुक ! तुमने अभी क्या कहा है ? उस बात को पुनः कहो । उन्होंने अवतार लिया है ? यदि तुम उनका पूर्ण वृतान्त जानते हो तो मुझे विस्तार पूर्वक सुनाओ ।१४। तुम वृक्ष से उतर आओ, मैं विधिवत् तुम्हारा सत्कार करूँगी । तुम बीजपूर फलों का भक्षण और दुग्ध का पान करो ।१५।

तव चञ्चुयुगं पद्मरागादरुणमुज्ज्वलम् ।
रत्नसंघट्टितमहं करोमि मनसः प्रियम् ।१६।
कन्धरं सूर्यकान्तेन मणिना स्वर्णघट्टिना ।
करोम्याच्छादनं चारु-मुक्ताभिः पक्षतिं तव ।१७।
पतत्रं कुंकुमेनांगं सौरभेणातिचित्रितम् ।
करोमि नयनानन्ददायकं रूपमीदृशम् ।१८।
पुच्छमच्छमणिव्रात-घर्घरेणातिशब्दितम् ।
पादयोर्नूपुरालाप-लापिनं त्वां करोम्यहम् ।१९।
तवामृतकथाव्रातव्यक्ताधि शाधि मामिह ।

सखीभि सगीताभिस्ते कि करिष्यामि तद्वद ।२०।

मैं तुम्हारी चोच को पद्मरागमणि और रत्नो से मडित करा कर उन्हे मनोमोहक अरुण वर्ण की और दीप्तिमयी कराद़ूँगी ।१६। तुम्हारे कठ मे सूर्यकान्त मणि जटित स्वर्ण पट्टिका बाँध कर दोनो पखो को मोतियो से सजाऊँगी ।१७। तुम्हारे पख और शरीर को कुंकुम से चर्चित करके ऐसा सुशोभित करूँगी कि सब तुम्हे देखते ही अत्यन्त आनन्दित हो जाँय ।१८। तुम्हारी पूँछ को स्वच्छ मणि से गूँथ दूँगी, जिससे तुम्हारे चलने पर सुन्दर घर्घर शब्द सुनाई देगा । तुम्हारे पाँवो मे नूपुर बाँध दूँगी, जिनसे सुमधुर ध्वनि निकलेगी ।१६। तुम्हारा कथामृत सुनकर ही मेरे मन की व्यथा मिट गई । मुझे बताओ कि मुझे क्या करना है ? सखियो के सहित मैं तुम्हारी परिचर्या करूँगी ।२०।

इति पद्मावच. श्रुत्वा तदन्तिकमुपागत ।
कीरो धार. प्रसन्नात्मा प्रवक्तुमुपचक्रमे ।२१।
ब्रह्मणा प्राथित. श्रीशो महाकारुणिको वभौ ।
शभले विष्णुयशसो गृहे धर्म-रिरक्षिषु: ।२२।
चतुर्भिभ्रातृभिर्ज्ञाति-गात्रजै. परिवारित: ।
कृतोपनयनो वेदमधीत्य रामसन्निधौ ।२३।
धनुर्वेदञ्च गान्धर्वं शिवादश्वमसिं शुकम्
कवचञ्च वर लब्धा शम्भल पुनरागत: ।२४।
विशाखयूपभूपाल प्राप्य शिक्षाविशेषत: ।
धर्मानाख्याय मतिमान् अधर्माश्च निराकरोत् ।२५।

पद्मा के वचन सुन कर हर्षित हुआ शुक पद्मा के पास जा पहुँचा और श्रेष्ठ प्रसग करने लगा ।२१। शुक बोला—भगवान् लक्ष्मीपति ने धर्म सस्थापन-हेतु ब्रह्माजी द्वारा प्रार्थना करने पर शभल ग्राम निवासी विष्णुयश के यहाँ अवतार लिया है ।२२। वे चार भाई अपने गोत्र एव परिवार वालो के साथ स्थित हैं, उपनयन सस्कार होने

के बाद उन्होने परशुरामजी से वेद की शिक्षा प्राप्त की।२३। फिर उन्होने धनुर्वेद और गाधर्व वेद की शिक्षा ली और शिवजी से अश्व, असि, शुक, कवच और वरदान पाकर शम्भल ग्राम मे अपने घर लौटे।२४। फिर उन कल्कि भगवान् से विशाखयू राजा ने भेंट की, तब उन्होने अपने धर्माख्यान द्वारा राजा की अधर्मयुक्त शकाओ का निराकरण किया।२५।

इति पद्मा तदाख्यान निशम्य मुदितानना ।
प्रस्थापयामास शुक कल्केरानयनादृता ।२६।
भूषयित्वा स्वर्णरत्नैस्तमुवाच कृताञ्जलि. ।२७।
निवेदित तु जानासि किमन्यत्कथयाम्यहम् ।
स्त्रीभावभयभीतात्मा यदि नायाति स प्रभु ।२८।
तथापि मे कर्मदोषात् प्रणाति कथयिष्यसि ।
शिवेन यो वरो दत्त· स मे शापोऽभवत्किल ।२९।
पुंसा मद्दर्शनेनापि स्त्रीभावं कमत· शुक ।
श्रुत्वेति पद्मामामन्त्र्य प्रणम्य च पुनः पुन ।३०।

इस प्रसग को सुन कर पद्मा बडी प्रसन्न हुई और उसने कल्कि भगवान् को आदरपूर्वक वहाँ लिवा लाने उद्देश्य से शुक को भेजा।२६। पद्मा ने शुक को स्वर्ण एवं रत्नो से सुसज्जित किया और हाथ जोड कर कहने लगी।२७। पद्मा बोली—मैं जो कुछ निवेदन करना चाहती हू, उसे तुम भले प्रकार जानते हो, तो फिर अधिक क्या कहूँ ? मैं स्त्री स्वभाव-वश भयभीत हो रही हूँ। यदि प्रभु यहाँ न आवे तो तुम मेरी ओर से प्रणाम करके मेरे कर्म-दोष के विषय मे उन्हें बताना और कहना कि मुझे शिवजी से जो वर प्राप्त हुआ है वह इस समय शाप के समान हो रहा है। शिवजी के वरदान के अनुसार जो पुरुष मेरी ओर काम-भाव से देखता है, वही नारी हो जाता है। पद्मा की यह बात सुन कर शुक ने उसे बारम्बार प्रणाम किया।२८-३०।

उड्डीय प्रययौ कीरः शम्भलं कल्किपालितम् ।
तमागमं समाकर्ण्य कल्किः परपुरञ्जयः ।। ३१ ।।
क्रोडे कृत्वा तं ददर्श स्वर्णरत्नविभूषितम् ।
सानन्दं परमानन्ददायकं प्राह तं तदा ।। ३२ ।।
कल्किः परमतेजस्वी परस्मिन्नमलं शुकम् ।
पूजयित्वा करे स्पृष्ट्वा पयःपापेन तर्पयन् ।। ३३
तन्मुखे स्वमुखं दत्वा पप्रच्छ विविधाः कथाः ।
कस्माद्देशाच्चरित्वा त्वं दृष्ट्वापूर्वं किमागतः ।। ३४ ।।
कुत्रोषितं कुतो लब्धं मणिकाञ्चनभूषणम् ।
अहर्निशं त्वन्मिलनं वाञ्छितं मम सर्वतः ।। ३५ ।।

फिर वह शुक उड कर कल्किजी द्वारा रक्षित शभल ग्राम मे गया शत्रुपुर-विजेता कल्किजी ने उसे आया देख कर शुक को गोद मे लेकर उसे स्वर्ण रत्नो से मडित देखा तो अत्यन्त हर्षित होते हुए बोले ।३१-३२। अत्यन्त तेजस्वी कल्किजी ने शुक का सत्कार करते हुए उसे दुग्ध-पान कराया और उससे सब प्रसग पूछा—हे शुक ! तुम इस समय किस देश से आरहे हो ? वहाँ तुमने कौन-सी अद्भुत वस्तु देखी है ? ।३३ ३४। तुम कहाँ थे ? किसके द्वारा मणियो और स्वर्ण से विभूषित किये गये ? रात दिन मैं तुमसे मिलने के लिए उत्सुक रहा हूँ ।३५।

तवानालोकनेनापि क्षणं मे युगवद्भवेत् ।। ३६ ।।
इति कल्केर्वचः श्रुत्वा पुणिपत्य शुको भृशम् ।
कथयामास पद्मायाः कथां पूर्वोदितां यथा ।३७।
सवादमात्मनस्तस्या निजालङ्कार धारणम् ।
सर्वं तद्वर्णयामास तस्याः प्रणतिपूर्वकम् ।। ३८ ।।
श्रुत्वेति वचनं कल्किः शुकेन सहितो मुदा ।
जगाम त्वरितोऽश्वेन शिवदत्तेन तन्मनाः ।। ३९ ।।

हे शुक ! मैं जब तुम्हे नही देखता, तब मेरा एक क्षण भी युग के समान व्यतीत होता है ।३६। कल्कि की यह बात सुनकर शुक ने हेउ बारम्बार प्रणाम कर पद्मा की पूर्व कथित कथा को कह

सुनाया ।३७। फिर पद्मा के साथ जो संवाद हुआ वह तथा स्वर्ण-मणियों की उपलब्धि आदि सब वृत्तान्त विनम्र होकर शुक ने उन्हें सुनादिया ।३८। कल्किजी ने जैसे ही यह वृत्तान्त सुना, वैसे ही प्रसन्न होते हुए वे शिवदत्त अश्व पर चढ कर शुक के साथ चल दिये ।३९।

समुद्रपारममलं सिंहलं जलसंकुलम् ।
नानाविमानबहुलं भास्वरं मणिकाञ्चनैः ॥ ४० ॥
प्रासादसदनाग्रेषु पताकातोरणाकुलम् ।
श्रेणीसभापणाट्टाल-पुरगोपुरमण्डितम् ॥ ४१ ॥
पुरस्त्री-पद्मिनी-पद्मगन्धामोद-द्विरेफिणीम् ।
पुरीं कारुमतीं तत्र ददर्श पुरतः स्थिताम् ॥ ४२ ॥
मराल-जाल-सञ्चाल-विलोल-कमलान्तराम् ।
उन्मीलताब्जमालालिकलिताकुलितं सरः ॥ ४३ ॥
जलकुक्कुटदात्यूह-नादितं हंससारसैः ।
ददर्श स्वच्छपथसां लहरीलोलवीजितम् ॥ ४४ ॥

चलते-चलते समुद्र पार पहुँच कर उन्होंने स्वच्छ जल से घिरे हुए, विभिन्न विमानों सेयुक्त, मणियों और स्वर्ण से दमकते हुए, अट्टालिकाओं और भवनों के समक्ष पताकाओं और तोरणों से सजे हुए सभामंडप वाले, दुकानों और गोपुरादि से समन्वित, पद्मिनी नारियों के पद्मगंध से हर्षित मँडराते हुए भ्रमर समूह से युक्त कारुमती सिंहल पुरी को देखा ।४०-४२। जहाँ जलाशयों में हंस-समूह किलोल कर रहे हैं, कमलों पर भ्रमर गुंजार रहे हैं, जलकुक्कुट, दात्यूह, हंस, सारस आदि कलरव कर रहे हैं तथा जल की लोल लहरी के साथ इठलाती वायु प्रवाहित है ।४३-४४।

वनं कदम्बकुद्दाल-शालतालाम्रकेसरैः ।
कपित्थाश्वत्थखर्जूरबीजपूरकरंजकैः ॥४५ ॥
पुन्नागपनसैर्नागरङ्गैरर्जुनशिंशपैः ।
क्रमुकैर्नारिकेलैश्च नानावृक्षैश्च शोभितम् ।

वन ददर्श रुचिर फलपुष्पलावृतम् ।। ४६ ।।
दृष्ट्वा हृष्टतनू शुक सकरुणा. कल्कि पुरान्ते वने
प्राह प्रीतिकर वचोऽत्र सरसि स्नातव्यमित्यादृत. ।
तच्छ्रुत्वा विनयान्वित. प्रभुमताया मीति पद्माश्रम
तत्सन्देशमिह प्रयाणमधुना गत्वा स कीरोऽवदत् ।। ४७ ।।

वन कदम्ब, कुद्दाल, शाल, ताल, आम, केसर, कैथ, अश्वत्थ, खजूर, बीजपूर, करज, पुन्नाग, पनस, नारगी, अर्जुन, शिशपा, क्रमुक, नारियल आदि विविध प्रकार के वृक्षो से सुशोभित और फल, पुष्प, पत्रादि से परिपूर्ण उस स्थान को कल्किजी ने देखा ।४५-४६। यह सब देखते हुए पुरी के समीपस्थ वन मे पहुच कर पुलकित देह हुए कल्किजी ने आदर सहित शुक से कहा—'इस सरोवर में स्नान करने की इच्छा है'। यह सुनकर शुक ने विनय पूर्वक कहा—अच्छा, अब मैं भी पद्मा के निवास स्थान पर जाता हूँ। यह कह कर शुक पद्मा के पास गया और उससे कल्कि भगवान् के आगमन का प्रसग कह दिया ।४७।

— * —

द्वितीय अध्याय

कल्कि सरोवराभ्यासे जलाहरणवर्त्मनि ।
स्वच्छस्फटिकसोपाने प्रवालाचितवेदिके ।१।
सरोजसौरभव्यग्रभ्रमद्भ्रमरनादिते ।
कदम्बपाल्पत्रालि-वारितादित्यदर्शने ।२।
समुवासासने चित्रे सदश्वेनावतारितः ।
कल्किः प्रस्थापयामास शुकं पद्माश्रममुदा ।३।
स नागेश्वरमध्यस्थः शुको गत्वा ददर्श ताम् ।
हर्म्यस्थां विमिनीपत्रशायिनी सखीभिवृताम् त ।४।।
निश्वासवाततापेन म्लायती वदनाम्बुजम् ।
उत्क्षिपन्ती सखीदत्तकमलचन्दनोक्षिनम् ।।५।।

सूतजी वोले—कल्किजी ने अश्व से उतर कर सरोवर के समीप वाले जल लाने के मार्ग मे प्रवालो से युक्त, कमल की सुगध से व्यथित, भ्रमर समूह द्वारा निनादित, उज्ज्वल स्फटिक मणि निर्मित सोपान पर स्थित एव कदम्ब के वृक्षो की नवीन पत्तियो से स्पर्श करती हुई सूर्य किरणो से आच्छादित चबूतरे पर बैठ कर उन्होने शुक को पद्मा के निवास स्थान पर भेजा ।१-३। वहाँ पहुँच कर वह शुक नाग-केशर के वृक्ष पर जा बैठा और उसने अटारी के ऊपर पत्तो की शय्या बनाकर शयन करने वाली पद्मा को सखियो के सहित देखा ।४। उस समय उष्ण वायु के ताप से मलीन मुख हुई पद्मा सखी द्वारा प्रदत्त

चदन चर्चित कमल-पत्र क हिलाती हुई हवा कर रही थी ।५।

रेवावारिपरिस्नात परागास्य समागतम् ।
धृतनीर रसगत निन्दन्ती पवनप्रियम् ।।६।।
शुक सकरुण साधु-वचनैस्तामतोषयत् ।
सा, त्वमेह्यहि,तेस्वस्ति स्वागत? स्वस्ति मे शुभे! ।७।
गते त्वय्यतिव्यग्राह शान्तिस्तेऽस्तु रसायनात् ।
रसायन दुर्लभ मे, सुलभ ते शिवाश्रमे ।८।
क्व मे भाग्यविहीनाया इहैव वरवर्णिनि ।
देवि! तं सरमस्तीरे प्रतिष्ठाप्यागता वयम् ।९।

परागमय जलगर्भ से सरस हुआ प्रिय पवन उस समय पद्मा के द्वारा निन्दा को प्राप्त हो रहा था ।६। तभी शुक ने करुणामय सुन्दर वचन कह कर पद्मा को आश्वासन दिया । जिसे सुन कर पद्मा बोली—तुम्हारा स्वागत है । यहाँ आओ, तुम्हारा मगल हो । शुक बोला—हे शुभे! मेरा सर्व प्रकार से मगल ही है ।७। पद्मा बोली—हे शुक! तुम्हारे जाने से मैं अत्यन्त व्यग्र रही हूँ । शुक ने कहा—तुम्हारे सब दुःख ताप रसायन के द्वारा शान्त हो जाँयगे । पद्मा ने कहा—मेरे लिए तो रसायन भी दुर्लभ है । शुक ने कहा— हे शिवजी की शिष्ये! रसायन तुम्हारे लिए सुलभ ही है ।८। पद्मा बोली—मुझ भाग्यहीना की कामना किस प्रकार और कहाँ पूर्ण होगी ? शुक बोला–हे वरवर्णिनि! तुम्हारी अभिलाषा यहीं पूर्ण होगी । मैं उन्हे सरोवर के तट पर विराजमान करके तुम्हारे पास उपस्थित हुआ हूँ ।९।

एवमन्योन्यसम्वाद-मुदितात्ममनोरथे ।
मुख मुखेन नयन नयने सादृता ददौ ।१०।
विमलामालिनी लोला कमला कामकन्दला ।
विलासिनी चारुमती कुमुदेत्यष्ट नायिकाः ।११।
सख्य एता मतास्ताभिर्जलक्रोडार्थमुद्यताः ।
पद्मा प्राह, सरस्तीरमायान्तु सा मया स्त्रियः ।१२।

इत्याख्यायासु शिबिकामारुह्य परिवारिता ।
सखीभिश्चारुवेशाभिर्भूत्वा स्वान्त पुराद्बहि. ।
प्रययौ त्वरित द्रष्टु भैष्मी यदुपतिं यथा ।१३।
जना पुमास पथि ये पुरस्था· प्रदु द्रु. स्त्रीत्व-
भयाद्दिगन्तरम् । शृङ्गाटके वा विपणि स्थिता
ये निजाङ्गनास्थापितपुण्यकार्य्या. ।१४।
निवारिता ता शिबिका वहन्त्यः नार्य्योऽतिमत्ता
वलवत्तराश्च । पद्मा शुकोक्त्या तदुपर्य्युपस्था
जगाम ताभि. परिवारिताभि ।१५।

इस प्रकार परस्पर सम्वाद होने पर पद्मा अत्यन्त हर्षित हुई वह उसके मुख के समक्ष मुख, नेत्र के समक्ष नेत्र करके उसे आनन्द पूर्वक देखने लगी ।१०। उसकी आठ नायिका सखियाँ है—विमला, मालिनी, लोला, कमला, कामकन्दला, विलासिनी, चारुमती और कुमुदा । उन सखियो सहित जल-क्रीडा के लिए तत्पर होकर पद्मा उनसे बोली कि यह सखियाँ मेरे साथ सरोवर क तट पर चले ।११-१२। यह कह कर पद्मा पालकी पर आरूढ होकर सखियो सहित अन्त पुर से चल पडी। कृष्ण के दर्शनार्थ जाती हुइ रुक्मिणी के समान ही कल्कि भगवान् के दर्शन के लिए पद्मा ने भी शीघ्रता पूर्वक प्रस्थान किया ।१३। पद्मा जिस मार्ग से जा रही थी, उस माग मे स्थित पुरुष उसे देखते ही कही स्त्री न बन जाय इस आशका से इधर-उधर भाग गये । उन भागने वालो को पत्नियाँ उनके निरापद रहने के लिए पुण्य कर्मों का अनुष्ठान करने लगी ।१४। इस प्रकार मार्ग को पुरुषो से रहित देख कर शक्ति-मती स्त्रियाँ पालकी को स्वच्छन्दता सेवहन करने लगी - शुक के कथना-नुसार पालकी पर चढी हुई पद्मा को घेर कर उसकी सखियाँ भी साथ चल रही थी ।१५।

सरोजल सारसलसनादिटप्रफुल्लपद्मोद्भवरेणुवासितम् ।
चेर्विगाह्याशु सुधाकरालसा. कुमुद्वतीनामुदयाशोभनाः ।१६।

तासा मुखामोदमदान्धभृङ्गा विहाय पद्मानि
मुखारविन्दे । लग्ना· सुगन्धाधिकमाकलय्य
निवारिताश्चापि न तत्यजुस्ते ।१७।
हासोपहासैः सरसप्रकाशैर्वाद्यैश्च नृत्यैश्च जले
विहारै । करग्रहैस्ता जलयोधनार्त्ताश्चकर्ष
ताभिर्वनिताभिरुच्चै १८।
सा कामातप्ता मनसा शुकोक्ति विविच्य पद्मा
सखिभि, समेता । जलात्समुत्थाय महार्हभूषा
जगाम निर्दिष्टकदम्बषण्डम् ।१६।
सुखे शयान मणिवेदिकागतं कल्कि पुरस्तादतिसू-
र्य्यवर्च्चसम् । महामणिव्रातविभूषणाचिता शुकेन सार्द्ध
तमुदैक्षतेशम् २०।

फिर सारस, हस आदि के मधुर निनाद और पद्म-रेणु से सुगंधित सरोवर के जल में स्नान करके वह चन्द्रवदनी स्त्रियाँ कुमुदनी युक्त चन्द्रमा की आशा मे विचरण करने लगी। उनके देह की कमल-गध से मत्त हुए भ्रमर उनके मुखो पर गु जा रने लगे। स्त्रियो द्वारा उडाये जाने पर भी वे भ्रमर उन पद्मगधाओ के मुखो से हटते ही नही थे ।१६-१७। रसमय हास-परिहास, वाद्य, नृत्य तथा परस्पर हाथ पकडे हुए विविध प्रकार का जलविहार करती हुई पद्मा ने सखियो के मन को और सखियो ने पद्मा के मन को हर लिया ।१८। फिर सकाम भाव वाली पद्मा शुक के वचनो का स्मरण करके सखियो सहित जल से बाहर निकली और वस्त्राभूषणो से विभूषित होकर उस बताषे हुए महान् कदम्ब के वृक्ष के नीचे गई ।१६। वहाँ उसने मणिमय चबू-तरे पर महामणियो से विभूषित, सूर्य के तेज से भी अधिक तेजोमय कल्किजी को शुक के सहित सुखपूर्वक शयन करते देखा ।२०।

तमालनील कमलापति प्रभु पीताम्बर चारुसरोजलोचनम् ।
आजानुबाहुं पृथुपीनवक्षस श्रीवत्ससत्कौस्तुभकान्तिराजितम्

तदद्भुतरूपमवेक्ष्य पद्मा सस्तम्भिताविस्मृतसत्क्रियार्था
सुप्तं तु संबोधयितुं प्रवृत्तं निवारयामाविशङ्कितात्मा ।२२
कदाचिदेषोऽतिबलोऽतिरूपी मद्दर्शनात्स्त्रीत्वमुपैति
साक्षात् । तदात्र किं मे भविता भवस्य वरेण शापप्रति-
मेन लोके ।२३।
चराचरात्मा जगतामधीशः प्रबोधितस्तद्धृदयं विविच्य ।
ददर्श पद्मां प्रियरूपशोभां यथा रमां श्रीमधुसूदनाग्रे ।२४।
संवीक्ष्य मायामिव मोहिनीं तां जगाद कामाकुलितः स
कल्किः । सखीभिरीशां समुपागतां तां कटाक्षविक्षेपविने-
नामितास्यम् ।२५।

उसने देखा कि तमाल जैसे नीलवर्ण वाले, पीताम्बरधारी, कमल जैसे नेत्र वाले, लम्बी भुजाओं, विशाल वक्ष और श्रीवत्स से चिन्हित हृदय वाले, कौस्तुभ मणि की कान्ति से प्रकाशित भगवान् कल्कि विराजमान है ।२१। उस अद्भुत रूप को देखकर पद्मा ऐसी स्तम्भित हुई कि उनका सत्कार भी करना भूल गई और उसने शंका के कारण उन्हें जगाना उचित नहीं समझा ।२२। उसने सोचा कि कहीं यह महा-बली अत्यन्त रूपवान् पुरुष मुझे देखकर स्त्री न बन जाय ? यदि ऐसा हो गया तो शिवजी का वरदान यहाँ भी अभिशाप हो जायगा ।२३। फिर पद्मा के आन्तरिक अभिप्राय को जान कर चराचर के एवं विश्वेश्वर कल्कि भगवान जाग पड़े । उन्होंने देखा कि लक्ष्मीजी के समान महान् रूपवती पद्मा सामने खड़ी है ।२४। सखियों के सहित आई हुई, अपलक देखती हुई पद्मा को देखकर उस मोह को उत्पन्न करने वाली पद्मा से कल्किजी सकाम-भाव पूर्वक बोले ।२५।

इहैहि सुस्वागतमस्तु भाग्यात्समागमस्ते कुशलाय मे स्यात् ।
त्वदाननेन्दुः किल कामपूरतापापनोदाय सुखाय कान्ते! २६।

लोलाक्षि ! लावण्य-रसामृत ते कामहिदष्टस्य विधातुरस्य ।
तनोतु शान्तिसुकृतेन कृत्या सुदुर्लभां जीवनमाश्रितस्य २७।।
बाहूतवैतौ कुरुता मनोज्ञौ हृदि स्थितं काममुदन्तवासम् ।
चार्वायतौ चारुनरवांकुशेन द्विप यथा सादिविदीर्णकुम्भम् २८
पादाम्बुज तेऽङ्गुलिपत्रचित्रित वर मरालक्वणनूपुरा-
वृतम् । कायाहिदष्टस्य ममास्तु शान्तये हृदि स्थितो प-
द्मघनेसुशोभने ।।२६।।
श्रुत्वैतद्वचनामृता कथिकुलध्वसस्य कल्केरल
दृष्ट्वा सत्पुरुषत्वमस्य मुदिता पद्मा सखीभिवृता ।
कान्ता क्लान्तमना· कृताञ्जलिपुटा प्रोवाचतत्सदरं
घोर घोरपुरस्कृतं निजपतिं नत्वा नमत्कन्धरा ।३०।

हे कान्ते ! तुम मेरे पास आओ, तुम्हारे मिलने से मेरा मंगल हुआ है । तुम्हारे चन्द्रमुख को देखकर मेरा सताप मिट गया ।२६। हे चचलाक्षि ! मुझ ससार के रचने वाले को इस समय वासना रूपी सर्प ने दशित किया है । तुम्हारे लावण्य-रस रूपी अमृत के पान से उसकी शान्ति सभव है । यह शान्ति सुकृत्यो से भी दुर्लभ और जीवन के लिए आश्रय स्वरूप होगी ।२७। जैसे महावत अपने अकुश से गजराज का कुम्भ भेदन करता है, ठीक वैसे ही तुम्हारी यह सुरम्य भुजाएँ नख रूप अकुश के द्वारा मेरे हृदयस्थ कामरूप हाथी के कुम्भ का भेदन करूँ ।२८। मेरे हृदयोदधि के स्वच्छ नीर मे स्थित अगुलि रूपी कमल-पत्र द्वारा चित्रित हस जैसा शब्द करने वाले एव नूपुरो से सुशोभित मंजु घोष करने वाले पादाम्बुज के द्वारा काम-जनित विष का शमन हो ।२६। कलिकुल विध्वसक कल्किजी के वचनामृत सुनकर और उन्हे सत्पुरुषत्व से युक्त जान कर पद्मा अत्यन्त हर्षित हुई । फिर वह क्लान्त मन हुई पद्मा सखियो सहित मस्तक झुकाकर अपने पति कल्कि भगवान् से मद स्वर में कहने लगी ।३०।

तृतीय अध्याय

सा पद्मात हीर मत्वा प्रेमगद्गदभाषिणी ।
तुष्टाव व्रीडिता देवी करुणावरुणालयम् ।१।
प्रसीद जगता नाथ ! धर्म्मन् ! रमापते ! ।
विदितोऽसि विशुद्धात्मन् ! वशगा त्राहि मा प्रभो ! ।२।
धन्याह कृतपुण्याह तपोदानजपव्रतै· ।
त्वा प्रतोष्य दुराराध्यं लब्ध तव पदाम्बुजम् ।।३।।
आज्ञा कुरु पदाम्भोज तव सस्पृश्य शोभनम् ।
भवनं यामि राजानमाख्यातु स्वागत तव ।४।
इति पद्मा रूपसद्मा गत्वा स्वपितर नृपम् ।
वाचागमनम कल्केर्विष्णोरशस्य दौत्यकै: ।।५।।

सूतजी बोले—प्रेम से गद्गद् होकर भाषण करने वाली पद्मा ने कल्किजी को भगवान् विष्णु के रूप मे जान कर उनकी स्तुति की ।१। हे जगदीश्वर ! हे धर्मवर्मन् ! हे लक्ष्मीपते ! मैं आपको जान गई हूँ । अब आप मुझ शरणागता की रक्षा कीजिए ।२। मैं धन्य हो गई प्रभो ! जो अपने पुण्यकर्मों अर्थात् तप, दान, जप और व्रतादि के सहित आपकी आराधना करके आपके दुष्प्राप्य चरण कमलो को प्राप्त कर सकी ।३। अब आप मुझे आज्ञा दे कि मैं आपके पदाम्बुजो का स्पर्श करके अपने घर जाऊँ और महाराज से आपके आगमन की बात सूचित करूँ ।।४।। यह कह कर श्रेष्ठ रूप वाली पद्मा ने अपने पिता राजा

बृहद्रथ के पास जाकर भगवान कल्कि के आगमन का वृत्तान्त निवेदन किया ।।५।।

सखीमुखेन पद्मायाः पाणिग्रहणकाम्यया ।
हरेरागमनश्रुत्वा सहर्षोऽभूद्बृहद्रथ. ।६।
पुरोधसा ब्राह्मणैश्च पात्रै सुमङ्गलै ।
वाद्यताण्डवगीतैश्च पूजायोजनपाणिभिः ।७।
जगामानयितु कल्कि सार्द्धं निजजनैः प्रभु ।
मण्डयित्वा कारुमती पताकास्वर्णतोरणै· ।८।
ततो जलाशयाभ्यास गत्वा विष्णुयश सुतम् ।
मणिवेदिकयासीन भुवनैकगति पतिम् ।९।
घनाघनोपरि यथा शोभन्ते रुचिराण्यहो ।
विद्युदिन्द्रायुधादीनि तथैव भूषणान्युत ।।१०।।

राजा बृहद्रथ ने पद्मा की सखी के मुख से पद्मा के पाणिग्रहण की कामना से भगवान् का आगमन सुन कर हर्ष व्यक्त किया ।६। फिर उसने पुरोहित, ब्राह्मण, परिवारीजन, मित्र, बन्धु आदि को साथ लेकर मगल गीत, वाद्य, नृत्य आदि करते हुए कल्कि भगवान को लाने के लिए प्रस्थान किया। स्वर्ण के तोरण और पताकादि से वह कारुमती नगरी अत्यन्त शोभा पाने लगी ।७-८। राजा बृहद्रथ ने जलाशय पर पहुँच कर देखा कि विष्णुयश के पुत्र कल्किजी मणिमय वेदी पर स्थित हैं ।९। जैसे घनघोर मेघ पर बिजली अथवा इन्द्र-धनुष आदि अत्यन्त शोभा पाते हैं, वैसे ही कल्किजी के कृष्णाग पर भूषण दमक रहे हैं ।१०।

शरीरे पीतवासाग्रघोरभासा विभूषितम् ।
रूपलावण्यसदने मदनोद्यमनाशने ।।११।।
ददर्शपुरतो राजा रूपशीलगुणाकरम् ।
साश्रु सपुलक. श्रीश दृष्ट्वा साधु समर्च्चयत ।१२।
ज्ञानागोचरमेतन्मे तवागमनमीश्वर ! ।

यथा मान्धातृपुत्रस्य यदुनाथेन कानने ।१३।
इत्युक्त्वा तं पूजयित्वा समानीय निजाश्रमे ।
हर्म्यप्रासादसबाधे स्थापयित्वा ददौ सुताम् ।१४।
पद्मा पद्म पलाशाक्षी पद्मनेत्राय पद्मनीम् ।
पद्मजादेशतः पद्नाभायादाद्यथाक्रमम् ।१५।

उन रूप-लावण्य के घर, कामदेव के उद्यम को नष्ट करने वाले, देह के अग्रभाग मे पीताम्बर धारण किये हुए तथा रूप,शील और गुण की खान लक्ष्मीपति कल्किजी को देख कर अश्रुयुक्त पुलकित देह के सहित राजा ने उनका विधि पूर्वक पूजन किया ।११-१२। राजा बोला—हे ईश्वर ! जैसे यदुनाथ वन मे जाकर मान्धाता के पुत्र से मिले थे, वैसे ही आप ज्ञानगोचरातीत का आगमन मेरे लिए हुआ है ।१३। यह कह कर कल्किजी का पूजन करके राजा उन्हे अपने भवन में ले आये और सुसज्जित गृह मे टिका कर उन्हे अपनी कन्या का दान कर दिया ।१४। पद्मोत्पन्न ब्रह्माजी के आदेशानुसर पद्मनाभ एव पद्मलोचन भगवान् कल्कि को पद्म-पत्र जैसे नेत्र वाली पद्मिनी सज्ञक पद्मा का यथाविधि दान किया ।१५ ।

कल्किर्लब्ध्वा प्रिया भार्य्या सिंहले साधुसत्कृत. ।
समुवास विशेषज्ञ समीक्ष्य द्वीपमुत्तमम् ।१६।
राजान. स्त्रीत्वमापन्नाः पद्मायाः सखिता गता' ।
द्रष्टु समीयुस्त्वरिता, कल्कि विष्णु जगत्पतिम् १७।
ताः स्त्रियोऽपि तमालोक्य सस्पृश्यचरणाम्बुजम् ।
पुनः पु स्त्व समापन्ना रेवास्नानात्तदाज्ञया ।१८।
पद्माकल्की गौरकृष्णौ विपरीतान्तरावुभौ ।
बहि.स्फुटौ नीलपीत-वासोव्याजेन पश्यतु ।१९।
दृष्ट्वा प्रभाव कल्केस्तु राजानः परमाद्भुतम् ।
प्रणम्य परया भक्त्या तुष्टुवुः शरणार्थिनः ।२०।

अपनी प्रिय पत्नी को प्राप्त कर साधुजनो से सत्कृत हुए कल्किजी सिंहल द्वीप को श्रेष्ठ स्थान देख कर कुछ दिनो तक वहाँ रहे ।१६। जो राजा स्त्रीत्व को प्राप्त होकर पद्मा की सखी बन गये थे, वे सभी भगवान् कल्कि के दर्शनार्थ वहाँ उपस्थित हुए ।१७। वे सभी स्त्रीत्व को प्राप्त हुए राजागण भगवान् के दर्शन प्राप्त कर उनके चरण स्पर्श करते हुए उनकी आज्ञा से रेवा नदी पर पहुँचे और स्नान करते ही पुरुषत्व को प्राप्त हो गये।१८। पद्मा और कल्कि गौर तथा कृष्ण वर्ण वाले हैं । दोनो विपरीत वर्णों के सम्मिलन से पद्मा के नीलाम्बर और कल्कि के पीताम्बर द्वारा एक बाह्य वर्ण प्रकाशित हुआ और परस्पर समन्वित दिखाई देने लगा ।१६। कल्किजी का अत्यन्त अद्भुत पराक्रम देख कर सभी राजागण उनकी शरण को प्राप्त होकर भक्तिपूर्वक प्रणाम और स्तुति करने लगे ।२०।

जय जय निजमायया कल्पिताशेषकल्पनापरिणाम !
जलाप्लुतलोकत्रयोपकरणमाकलय्य मनुमनिशम्य पूरितमवि-
जनाविजनाविर्भूतमहामीनशरीर ! त्व निजकृतधर्म्मसेतुसर-
क्षणकृतावतार: ।२१।
पुनरिहदितिज-बल-परिलाङ्छित-वासव-सूदनादृत-जितत्रिभुवन
पराक्रम-हिरयाक्षनिधन पृथिव्युद्धरणसकल्प-भिनिवेशेन धृय-
कोलावतार: पाहि न: ।२२।
पुनरिह जलधि मथनादृत-देवदानवगण मन्दराचलानयनव्या-
कुलिताना साहाय्येनादृतचित्त. पर्व्वतोद्धरणामृतप्रासनरचना
वतार: कूर्म्माकार: प्रसीद परेश ! त्व दाननृपाणाम् ।२३।

हे प्रभो ! आपकी जय हो । आपकी ही कल्पना-शक्ति से ससार विविध प्रकार से कल्पित हुआ है । जब तीनो लोग प्रलय मे लीन होगये, तब आपने जनमून्य स्थल मे प्रकट हुए थे । आपने ही धर्म-सेतु के सर-क्षण हेतु महामीन (मत्स्य) देह धारण किया था ।२१। जब दनुज-सैन्य

से इन्द्र पराजित होने लगे और त्रैलोक्य-विजयी हिरण्याक्ष इन्द्र को मारने मे तत्पर हुआ, तब आपने ही वाराह रूप धारण कर उसका सहार कर डाला। ऐसे आप हमारी रक्षा कीजिये ।२२। जब देवता और दैत्य दोनो ही मिल कर समुद्र-मन्थन मे तत्पर हुए, तब मदराचल पर्वत को टिकाने की समस्या उत्पन्न हुई। उस समय आपने कूर्मावतार धारण कर अपनी पीठ पर मन्दराचल को टिका लिया। आपका वह कूर्मावतार देवताओ को सुधा-पान कराने के लिये ही हुआ था। हे परेश ! आप ही हम दीन राजाओ की रक्षा कीजिये ।२३।

पुनरिह त्रिभुवनजयिनो महाबलपराक्रमस्य हिरण्यकशिपोर-र्दितानां देववराणां भयभीतानां कल्याणाय दितिसुतवधप्रे-प्सुर्ब्रह्मणो वरदानादवध्यस्य न शस्त्रास्त्ररात्रि दिवास्वर्गम-र्त्यपातालतले देवगन्धर्वकिन्नरनरनागैरिति विचिन्त्य नर-हरिरूपेण नाखाग्रभिन्नोरु दष्टदन्तच्छद त्यक्तासु कृत वानसि ।२४।

पुनरिह त्रिजगज्जयिनो बले, सत्र शक्रानुजो वटुवामनोदैत्यस माहनाय त्रिपदभूमियाच्ञाच्छलेन विश्वकायस्तदुत्सृष्ट-जल-सस्पर्श-विवृद्धमनोऽभिलाषस्तव भूतले बलेर्दौवारिकत्वमङ्गी-कृतमुचित दानफलम् ।२५।

पुनरिह हैहयादिनृपाणाममितबलपराक्रमाणा नानामदोल्ल-ङ्घितमर्य्यादावर्त्मना निधनाय भृगुवशजो जामदग्न्य पितृहो-मधेनुहरणप्रवृद्धमन्युवशात्त्रिसप्तकृत्वो नि.क्षत्रिया पृथिवी कृ-तवानसि परशुरामावतार: ।२६।

फिर जब त्रैलोक्य विजयी, महाबली और पराक्रमी हिरण्यक-कशिपु देवताओ का उत्पीडन करने लगा, तब आपने भयभीत देवताओ के रक्षार्थ उस दैत्यराज का सहार करने का निश्चय किया। ब्रह्माजी के वर से दैत्य, देवता गन्धर्व, किन्नर, नाग, शस्त्रास्त्र, दिवस, रात्रि, स्वर्ग,

मर्त्यलोक या पाताल लोक मे कही भी, किसी के द्वारा भी मरने वाला नही था। इन सब बातो पर विचार करके आपने नृसिंहावतार धारण किया और जब आपके उस रूप को देख क्रोधित हुआ दैत्य आपसे युद्ध करने लगा, तब आपने अपने नखाग्रो से उसका देह विदीर्ण कर डाला।२४। फिर त्रैलोक्य विजयी राजा बलि के यज्ञ मे आपने इन्द्र के लघु भ्राता बन कर वामनावतार धारण कर दानवराज के समोहनार्थ तीन पद पृथिवी माँग ली। उत्सर्ग के लिये जल छोडते ही आपने छलपूर्वक विराट स्वरूप धारण किया। फिर आप त्रैलोक्यदान के फलस्वरूप राजा बलि के द्वारपाल बन गये।२५। फिर जब महाबल-पराक्रम वाले हैहय आदि राजाओ ने धर्म की मर्यादा को लाँघा, तब आपने उनके विनाशार्थ भृगुवश मे परशुराम का अवतार लिया और अपने पिता की होमधेनु के हर लिये जाने पर आपने इक्कीस बार इस पृथिवी को क्षत्रियो से रहित कर दिया।२६।

पुनरिह पुलस्त्यवशावत सस्य विश्रवस पुत्रस्य निशाचरस्य रावणस्य लोकत्रयतापनस्य निधनमुररीकृत्य रविकुलजातदशरथात्मजो विश्वामित्रादस्त्राण्युपलभ्य वने सीताहरणवशात्प्रवृद्धमन्युना अम्बुधि वानरैर्निबध्य सगण दशकन्धर हतवानसि रामावतार: ।२७।

पुनरिह यदुकुल-जलधिकलानिधि सकलसुरगणसेवितपादारविन्दद्वन्द्व. विविधदानवदैत्यदलनलोकत्रयदुरिततापनो वसुदेवात्मजो रामावतारो बलभद्रस्त्वमसि ।२८।

पुनरिह विधिकृत-वेदधर्म्मानुष्ठान-विहित-नानादर्शनसघृण ससारकर्म्मत्यागविधिना ब्रह्माभासविलासचातुरी प्रकृतिविमाननामसम्पादयन् बुद्धावतारस्त्वमसि ।२९।

फिर पुलस्त्यवशावतस विश्रवापुत्र रावण ने अपने बल से तीनो लोको को भय-सतप्त कर दिया, तब आपने उसका विनाश करने के लिये सूर्यवशी राजा दशरथ के यहाँ अवतार लिया और विश्वामित्र से अस्त्र-

विद्या प्राप्त कर वन-गमन करने और रावण द्वारा सीता का हरण करने पर आपने वानर सेना को साथ लेकर कुल सहित रावण को मार डाला ।२७। फिर आप यदुकुल जलधि-मयङ्क वसुदेवजी के पुत्र रूप श्रीकृष्ण हुए और अनेक दैत्य-दानवो को मार कर तीनो लोको को पाप-मुक्त किया । इसलिये सभी देवता आपके उस श्रीकृष्ण रूप के चरण कमलो की सेवा मे तत्पर हुए । उसी काल मे आपने ही बलभद्रजी का भी अवतार धारण किया था ।२८। फिर आपने ब्रह्मा द्वारा निश्चित वेद-धर्म मे अनेक बाधाएँ देख कर मिथ्या प्रपच को नष्ट करने के निमित्त एव प्राकृतिक विषय की अवमानना न करने के उदेद्श्य से बुद्ध का अवतार लिया ।२९।

अधुना कलिकुलनाशावतारो बौद्धपाखण्डम्लेच्छादीनाञ्चवेदधर्म्मसेतुपरिपालनाय कृतावतारः कल्किरूपेणास्मान् स्त्रीत्वनिरयादुद्धृतवानसि तवानुकम्पा किमिह कथयामः ।३०।

क्व ते ब्रह्मादीनामविदितविलासावतरण
क्व नः कामा वामाकुलितमृगतृष्णार्तमनसाम् ।
सुदुष्प्राप्य युष्मच्चरण जलजालोकनमिद
कृपापारावार' प्रमुदितदृशाश्वासय निजान् ।३१।

अब आप कलिकुल को नष्ट करने तथा बौद्ध पाखण्डियो और म्लेच्छों पर शासन करने के लिये कल्कि अवतार लेकर वेद धर्म रूपी सेतु की रक्षा कर रहे हैं । आपने ही स्त्रीत्व रूपी नरक से हमारा उद्धार किया है । हम आपकी इस कृपा का वर्णन किस प्रकार करे ? ।३०। ब्रह्मादि देवता भी आपकी लीला को जानने मे समर्थ नही हैं । आपको अवतार विषयक कोई कामना नही रहती । हम स्त्री के देखते ही काम-बाण के द्वारा जर्जर एव मृगतृष्णा से सतप्त हृदय वाले विषयी प्राणियो के लिये आपके पदाम्बुजो का दर्शन दुष्प्राप्य था । हे अपार कृपा वाले प्रभो ! हम अनुगामियो की ओर आप एक बार अपना कृपा कटाक्ष करके हमे आश्वासन दीजिये ।३१।

द्वितीयांश—

चतुर्थ अध्याय

श्रुत्वा नृपाणा भक्ताना वचन पुरुषोत्तमः ।
ब्राह्मणक्षत्रविट्शूद्र-वर्णाना धर्ममाह यत् ॥१॥
प्रवृत्ताना निवृत्ताना कर्म यत्परिकीर्तितम् ।
सर्व सश्रावयामास वेदानामनुशासनम् ॥२॥
इति कल्केर्वच· श्रुत्वा राजानो विशदाशयाः ।
प्रणिपत्य पुन प्राहु पूर्वान्तु गतिमात्मनः ॥३॥
स्त्रीत्व वाप्यथवा पुस्त्व कस्य वा केन वा कृतम् ।
जरा-यौवन-बाल्यादि सुखदुःखादिक च यत् ॥४॥
कस्मात्कुतो वा कस्मिन् वा किमेतदिति वा विभो ।
अनिर्णीतान्यविदितान्यपि कर्माणि वर्णय ॥५॥

सूतजी बोले—राजाओ के यह वचन सुन कर पुरुष श्रेष्ठ कल्कि-जी ने उनके प्रति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्णो के धर्म का वर्णन किया।१। ससार मे आसक्त एव संसार से विरक्त दोनो के ही जो कर्म हैं, उनका वर्णत उन्होने किया।२। कल्किजी का उपदेश सुनकर राजाओ के हृदय पवित्र होगये। फिर उन्होने प्रणाम करके कल्किजी से अपनी पूर्वावस्था के विषय मे पूछा।३। हे प्रभो! स्त्रीत्व और पुरुषत्व भेद से मनुष्यो की निवृत्ति किस प्रकार होती है? जरा, यौवन और बाल्यावस्था एव सुख, दुखादि के कारण क्या हैं? इनके अतिरिक्त भी जिन विषयो से हम अनभिज्ञ हैं, उनका भी वर्णन कीजिये।४-५।

(तदा तदाकर्ण्य कल्किरनन्त मुनिमस्मरत्) ।

सोऽप्यनन्तो मुनिवरस्तीर्थपादो बृहद्व्रत ॥६॥
कल्केर्दर्शनतो मुक्तिमाकलय्यागतस्त्वरन् ।
समागत्य पुन· प्राह कि करिष्यामि कुत्र वा ।
यास्यामीति वच: श्रुत्वा कल्कि: प्राह हसन्मुनिम् ।७।
कृत दृष्ट त्वया ज्ञात सर्व याह्यनिवर्त्तकम ।
अदृष्टमकृतञ्चेति श्रुत्वा हृष्टमना मुनि ।८।
गमनायोद्यत त तु दृष्ट्वा नृपगणास्तत: ।
कल्कि कमलपत्राक्ष प्रोचुर्विस्मितचेतस ।९।

(यह सुन कर कल्कि जी ने अनन्त मुनि का स्मरण किया) यह जान कर महानव्रती एव दीर्घ काल से तीर्थ मे निवास करने वाले मुनिवर अनन्त, कल्किजी के दर्शन से अपनी मुक्ति सभव समझ कर शीघ्र ही वहाँ आ उपस्थित हुए। उन्होने भगवान् कल्कि के पास आकर पूछा— मुझे क्या करना है ? कहाँ जाना है ? यह सुन कर कल्कि जी हँस कर मुनि से बोले ।६। हे मुने ! आपने मेरे सब किये हुए कर्म देखे हैं । अदृष्ट को कोई काट नही सकता और कर्म के बिना फल भी नही मिल सकता । यह सुन कर मुनि को प्रसन्नता हुई ।८। और फिर जब मुनि वहाँ से जाने लगे, तब उन्हे देख कर आश्चर्य चकित हुए राजागण कल्किजी से बोले ।९।

किमनेनापि कथितंत्वया वा किमुताच्युत ।
सर्वं तच्छ्रोतुमिच्छाम. कथोपकथनं द्वयो: ।१०।
नृपाणां तद्वच· श्रुत्वा तानाह मधुसूदन: ।
पृच्छतामु मुनि शान्तं कथोपकथनादृता: ।११।
इ तिकल्केर्वचो भूय: श्रुत्वा ते नृपसत्तमा: ।
अनन्तमातु· प्रणता: प्रश्नपारतितीर्षव: ।१२।
मुने ! किमत्र कथन कल्किना धर्मवर्मणा ।
दुर्बोध. केन वा जातस्तत्त्व वर्णय न प्रभो ! ।१

पुरिकाया पुरि पुरा पिता मे वेदपारग. ।
विद्रुमो नाम धर्म्मज्ञः ख्यात. परहिते रतः ।१४।
सोमा मम विभो ! माता पतिधर्म्मपरायणा ।
तयोर्वयः परिणतौ काले षण्डाकृतिस्त्वहम् ।१५।

राजाओ ने कहा—हे प्रभो ! मुनि ने आपसे क्या कहा और आपने क्या उत्तर दिया ? आपका कथोपकथन किम विषय मे हुआ था ? यह सुनने की हमे इच्छा है ।१०। राजाओ की जिज्ञासा सुनकर भगवान् कल्कि ने कहा—हमारे कथोपकथन के विषय मे इन शान्त हृदय वाले मुनि से ही प्रश्न करो ।११। कल्किजी के वचन सुनकर वे सब श्रेष्ठ राजागण प्रश्न का भेद जानने के लिए मुनि को प्रणाम करके पूछने लगे ।१२। राजाओ ने कहा—हे मुने ! भगवान् कल्कि से आपका कथोपकथन गूढरूप से क्यो हुआ ? हे प्रभो ! इसका रहस्य हमे बताइये ।१३। मुनि बोले—पूर्वकाल की बात है—पुरिका नाम पुरी मे वेदो मे पारगत विद्रुम नामक एक धर्मज्ञ मुनि रहते थे, वही मेरे पिता थे ।१४। हे विभो ! मेरी माता का नाम सोमा था, उसी पतीव्रता से मेरा जन्म हुआ, परन्तु मैं पु सत्वहीन था ।१५।

सजात. शोकद पित्रोलोकाना निन्दिताकृति ।
मामालोक्य पिता क्लीबदु:खशोक भयाकल: ।१६।
त्यक्त्वा गृह शिववन गत्वा तुष्टाव शङ्करम् ।
सपूज्येश विधानेन धूपदीपानुलेपनै· ।१७।
शिवं शान्त सर्वलोकैकनाथ भूता-वासं वासुकीकण्ठभूषम् ।
जटाजूटाबद्धगङ्गा तरंगवन्दे सान्द्रानन्दसन्दोहदक्षम् ।१८।
इत्यादि बहुभि. स्तेत्रैः स्तुत: स शिवद: शिव. ।
वृषारूढ: प्रसन्नत्मा पितर प्राह मे वृणु ।१९।
विद्रुमो मे पिता प्राह मत्पु स्त्वं तापतापित ।
हसञ्छिवो ददौ पुस्त्व पार्वाया पृतिमोदितः ।२०।

मुझे इस प्रकार का उत्पन्न हुआ देख कर मेरे माता-पिता को बडा दु ख हुआ। मेरी आकृति निन्दा योग्य थी। यह देख कर दु ख, शोक और भय से व्याकुल हुए पिताजी शिव वन मे जाकर धूप, दीप, गध आदि से विधिवत् पूजन करके शिवजी की स्तुति करने लगे ।१६ १७। उन्होने कहा—हे शिव ! हे शान्त स्वरूप ! आप सब लोको के नाथ और भूतो को आश्रय स्थान हैं। आपके कठ मे वासुकी नाग और जट जाल मे गंग-तरग सुशोभित हैं। आप आनन्द भडार के दाता शिव को मैं प्रणाम करता हूँ ।१८। कल्याण के दाता भगवान् शकर इस स्तोत्र से प्रसन्न होकर वृषभारूढ होकर प्रकट हुए और उन्होने मेरे पिता को वर मागने की आज्ञा दी ।१९। तब मेरे पिता विद्रुम मुनि ने उनसे कहा—हे नाथ ! मेरा पुत्र पु सत्वहीन है, इससे मैं अत्यन्त दु.खी हूँ। तब शिवजी ने हँस कर मेरे पुरुषत्व युक्त होने का वर दिया और पार्वतीजी ने भी उनकी बात का अनुमोदन किया ।२०।

मम पुस्त्व वर लब्ध्वा पितायात· पुनर्गृहम् ।
पुरुष मा समालोक्य सहर्ष: प्रियया सह ।२१।
तत: प्रवयसौ तौ तु पितरौ द्वादशाब्दके ।
विवाह मे कारयित्वा बन्धुभिर्मुदमापतु: ।२२।
यज्ञरातसुतां पत्नी मानिनी रूपशालिनीम् ।
प्राप्याह परितुष्टात्मा गृहस्थ, स्त्रीवशीऽभवम् । २३।
ततः कतिपये काले पितरौ मे मृतौ नृपा. ।
पारलौकिककार्य्याणि सुहृद्भिर्ब्राह्मणैर्वृत· ।२४।
तयोः कृत्वा विधानेन भोजयित्वा द्विजान्बहून् ।
पित्रोर्वियोगतप्तोऽह विष्णुसेवापरोऽभवम् ।२५।

मेरे पुरुष होने का वर प्राप्त कर पिताजी घर लौट आये और तब मुझे पुरुषाकार हुआ देख कर माता के सहित वे बडे प्रसन्न हुए ।२१। फिर जब मैं बारह वर्ष का होगया, तब उन्होने बन्धु-बान्धवो सहित मोद मनाते हुए मेरा विवाह कर दिया ।२२। यज्ञरात की पुत्री को

अपनी भार्या के रूप मे प्राप्त करके मैं बडा सन्तुष्ट हुआ और गृहस्थाश्रम मे प्रवेश करके उस अत्यन्त रूपवती एव माननी स्त्री के वशीभूत हो गया।२३। फिर कुछ काल बीतने पर मेरे माता-पिता मर गये तब मैंने अपने सुहृदो और ब्राह्मणो के साथ उनका परलोक सस्कार किया।२४। माता-पिता का मृतक सस्कार करके मैंने अनेक ब्राह्मणो को भोजन कराया। फिर उनके विरह से दुःखी होकर मैंने भगवन् विष्णु की आराधना की।२५।

तुष्टो हरिर्मे भगवाञ्जप पूजादिकर्मभि ।
स्वप्ने मामाह मायेय स्नेहमोहविनिर्मिता।२६।
अय पितेय मातेति ममताकुलचेतसाम् ।
शोकदु खभयोद्व गजरामृत्युविधायिका।२७।
श्रुत्वेति वचन विष्णो. प्रतिवादार्थमुद्यतम ।
मामालक्ष्यन्तर्हित, स विनिद्रोऽहवम् ।२८।
सविस्मयः सभार्य्योऽह त्यक्त्वा ता पुरिका पुरोम्
पुरुषोत्तमाख्य श्रीविष्णोरालवञ्चागम नृपा. ! ।२९।
तत्रैव दक्षिणे पार्श्वे निर्मायाश्रममुत्तमम् ।
सभार्य्य सानुगामात्यः करोमि हरिसेवनम् ।३०।

मेरे जप, पूजन आदि कर्म से प्रसन्न हुए भगवान् विष्णु ने एक दिन स्वप्न मे मुझसे कहा कि स्नेह, मोह आदि सब मेरी ही माया है।२६। यह मेरे पिता हैं, यह मेरी माता है' ऐसी ममता जिनके चित्त को व्याकुल करती हो तो समझ लो कि इस शोक, दु ख, भय, उद्वेग, वृद्धावस्था और मृत्यु आदि के क्लेश रूप का कारण मेरी माया ही है।२७। भगवान् की वाणी सुन कर मैं जैसे ही प्रतिवाद करने को हुआ, वैसे ही वे अन्तर्धान होगये और मेरी नीद टूट गई।२८। हे राजाओ ! फिर मैं विस्मय मे भर कर पुरिका नामक उस पुरी को छोड कर अपनी पत्नी के सहित पुरुशोत्तम सज्ञक विष्णुधाम में जा पहुँचा।२९। उस पुरुषोत्तम धाम के

दक्षिण भाग में श्रेष्ठ आश्रम बनाकर मैं अपनी पत्नी और अनुगामियों के सहित हरि-सेवा मे तत्पर हो गया ।३०।

मायासदर्शनाकाङ्क्षी हरिसद्मनि सस्थितः ।
गायन्नृत्यञ्जपनाम चिन्तयञ्छमनापहम् ।३१।
एवं वृत्ते द्वादशाब्दे द्वादश्या पारणादिने ।
स्नातुकाम समुद्रेऽह बन्धुभि, सहितो गत ।३२।
तत्र मग्न जलनिधौ लहरीलोलसकुले ।
समुत्थातुमशक्त मा प्रतुदन्ति जलेचरा· ।३३।
निमज्जनो मज्जनेन व्याकुलो कृतचेतसम् ।
जलहिल्लोलमिलनदलिताङ्गमचेतनम् ।३४।
जलधेर्दक्षिणे कूले पतित पवनेरितम् ।
मा तत्र पतित दृष्ट्वा वृद्धशर्मा द्विजोत्तम ।।३५।।
सन्ध्यामुपास्य सघृण स्वपुर मा समानयत् ।
स वृद्धशर्मा धर्मात्मा पुत्रदारधनान्वितः ।
कृत्वारुण्यान्तु मा तत्र पुत्रवत्पर्य्यपालयत् ।३६।

भगवान् के उस धाम मे रहता हुआ प्रभु माया का दर्शन करने की कामना से मैं नृत्य, गायन तथा जप पूर्वक यम का भय दूर करने वाले भगवान् विष्णु का ध्यान करने लगा ।।३१।। इस प्रकार बारह वर्ष व्यतीत होगए । एक दिन द्वादशी का पारण था, तब मैं स्नान करने के विचार से अपने बन्धुओं सहित समुद्र के तट पर पहुँचा ।।३२।। जैसे ही गोता लगाया, वैसे ही मैं समुद्र की भयकर तरगराशि से व्याकुल हो गया । मुझमे उठने की शक्ति नही रही । तभी जलचर जीव मुझे व्यथित करने लगे ।३३। मैं कभी उछलता था, कभी डूबता, इससेमेरा चित्त बडा व्याकुल हुआ । जल की तरगो के थपेडो से शिथिल अग हुआ मैं अचेत हो गया ।।३४।। फिर मैं वायु की हिलोर से बहता हुआ समुद्र के दक्षिण किनारे पर लग गया । मुझे अचेतावस्था में पड़ा देख कर वृद्ध शर्मा

नामक एक ब्राह्मण सध्योपासन से निवृत्त हो कर मुझे अपने घर ले गये। स्त्री पुत्रादि से युक्त, धनवान् एव धर्मात्मा वृद्ध शर्मा मुझे स्वस्थ करके पुत्र के समान पालने लगे ।।३५-३६।।

अहन्तु तत्र दीनात्मा दिग्देशाभिज्ञ एव न।
दम्पती तौ स्वपितरौ मत्वा तत्रावस नृपाः ।३७।
स मा विज्ञाय बहुधा वेदधर्म्मेष्वनुष्ठितम्।
प्रददौस्वा दुहितर विवाहे विनयान्वित ।३८।
लब्ध्वा चामीकराकारा रूपशीलगुणान्विता ।
नाम्ना चारुमती तत्र मानिनी विस्मितोऽभवम् ।३९।
तयाह परितुष्टात्मा नानाभोगसुखान्वित. ।
जनयित्व पञ्चपुत्रान्समदेनावृतोऽभवम् ।।४०।।

हे राजाओ ! उस स्थान पर रहते हुए मुझे दिशा और देश का भी ज्ञान न रहा, इसलिए दुःखित हृदय से उन ब्राह्मण दम्पत्ति को ही अपना माता-पिता मानता हुआ, वही रहने लगा ।३७। उन ब्राह्मण ने मुझे सब प्रकार से वेद-धर्म का अनुष्ठाता जान कर विनय पूर्वक अपनी कन्या का दान कर दिया ।३८। उस तप्त स्वर्ण जैसे वर्ण वाली, रूप, शील और गुण से युक्त कन्या का नाम चारुमती था। उस मानिनी को भार्या रूप मे प्राप्त कर मैं विस्मय मे पड गया ।३९। चारुमती ने मुझे सेवा द्वारा सदा सतुष्ट रखा और मैं उसके साथ विभिन्न प्रकार के सुखो का उपभोग करने लगा। उससे मेरे पाँच पुत्र उत्पन्न हुए और निरन्तर मेरे सुख की वृद्धि होने लगी ।४०।

जयश्च विजयश्चैव कमलो विमलस्तथा।
बुध इत्यादय. पच विदितास्तनया मम ।४१।
स्वजनैर्बन्धुभिः पुत्रैर्धनैर्नानाविधैरहम्।
विदितः पूजितो लोके देवैरिन्द्रो यथा दिवि ।४२।
बुधस्य ज्येष्ठपुत्रस्य विवाहार्थं समुद्यतम्।

दृष्ट्वा द्विजवरस्तुष्टो धर्मसारो निजा सुताम् ।४३।
दित्सु. कर्माणि वेदज्ञश्चकाराभ्युदयान्यपि ।
वाद्यं र्गीतैश्च नृत्यैश्च स्त्रीगणै. स्वर्णभूषतै. ।४४।
अह च पुत्राभ्युदये पितृदेवर्षितर्पणम् ।
कर्तु स मुद्रवेलाया प्रविष्ट परमादरात् ।४५।

मेरे पाँच पुत्र जय, विजय, कमल, विमल, और बुध इत्यादि नामों से जाने गये ।४१। मैं स्वजनों और पुत्रों से युक्त तथा विविध प्रकार के धनों का स्वामी होकर इन्द्र के समान पूजनीय तथा प्रसिद्ध होगया ।४२। जब मैने अपने ज्येष्ठ पुत्र बुध का विवाह करने का विचार किया तब धर्मसार नामक एक ब्राह्मण ने अपनी कन्या देने की इच्छा प्रकट की । फिर उसने अपनी कन्या का वैवाहिक सस्कार करने के लिए वेदज्ञ ब्राह्मणों को बुला कर आभ्युदयादि कर्म को पूर्ण कराया। उस समय स्वर्णाभूषणों से विभूषित स्त्रियाँ वाद्य, गीत और नृत्य कर रही थी-।४३-४४। तब मैं भी पुत्र के अभ्युदय की अभिलाषा करके पितर, देवता और ऋषियों का तर्पण करने के लिए समुद्र के किनारे गया ।४५।

वेलालोलायिततनुर्जलादुत्थाय सत्वर: ।
तीरे सर्वान्स्नानसन्ध्या-परान्वीक्ष्याहमुन्मना. ।४६।
सद्य: समभव भूपा ! द्वादश्या पारणादृतान् ।
पुरुषोत्तमसवासान्विष्णु सेवार्थमुद्यतान् ।।४७।।
तेऽपि मामग्रत. कृत्वा तद्रूपवयसा निधिम् ।
विस्मयाविष्टमनस दृष्ट्वा मामब्रुवज्जना· ।४८।
अनन्त ! विष्णुभक्तोऽसि जले कि दृष्टवानिह ।
स्थले वा व्यग्रमनसं लक्षयाम. कथ तव ।४९।
पारणं कुरु तद्ब्रूहि त्यक्त्वा विस्मयमात्मम. ।
तानब्रुवमह नैव किञ्चिद्दृष्ट श्रुत जना: ।५०।
कामात्मा तत्कृपणधीर्माया सन्दर्शनादृत: ।

तया हरेर्माययाहं मूढो व्याकुलितेन्द्रियः ।५१।

जब मैं स्नान — तर्पणादि से निवृत्त होकर जल से निकल कर तट की ओर चला, तभी देखता हूँ कि मेरे पहिले के सभी बधु बाधव सन्ध्यादि कर्म कर रहे हैं। यह देख कर मेरा मन उद्विग्न हो उठा ।४६। हे राजाओ! पुरुषोत्तम धाम मे रहने वाले उन ब्राह्मणो को भगवान् विष्णु की सेवा एव द्वादशी के पारण मे तत्पर देख कर मैं चकित हुआ ।४७। मेरे रूप और वय मे पहिले से कुछ भी परिवर्तन न हुआ देख कर और मुझे विस्मयपूर्वक अपने को देखता देख कर उन्होने कहा ।४८। हे अनन्त! तुम विष्णु भक्त हो। क्या तुमने जल अथवा स्थल मे कही कुछ ऐसा दृश्य देखा है, जिससे इतने व्यग्रचित्त दिखाई दे रहे हो! ।४६। यदि कुछ देखा हो तो बताओ और विस्मय को छोड कर पारण करो। यह सुन कर मैंने कहा— मैंने कही कुछ भी नही देखा-सुना। परन्तु मैं काम से मोहित होकर दुर्बल हृदय हो गया हूँ। मैं भगवान् श्रीहरि की माया से ही विमूढ और व्याकुल इद्रिय वाला हो रहा हूँ ।५०-५१।

न शर्म्म वेद्मि कुत्रापि स्नेहमोहवशं गत· ।
आत्मनो विस्मृतिरियं को वेद विदिता तु ताम् ।५२।
इति भार्य्या धनागार-पुत्रोद्वाहानुरक्तधी. ।
अनन्तोऽहं दीनमना न जाने स्वापसम्मितम् ।।५३।।
मां वीक्ष्य मानिनो भार्य्या विवशं मूढवस्थितम् ।
क्रन्दन्ती किमहोऽकस्मादालपन्ती ममान्तिके ।५४।
इह ता वीक्ष्य तास्तत्र स्मृत्वा कातरमानसम् ।
हंसोऽप्येको बोधयितुमागतो मां सदुक्तिभिः ।५५।
धीरो विदितसर्वार्थः पूर्णः परमधर्म्मवित् ।५६।
सूर्य्याकार तत्त्वसार प्रशान्त दान्त शुद्ध लोकशोकक्षयिष्णु म्। ममाग्रे त पूजयित्वा मदङ्गाः पप्रच्छुस्ते मच्छुभध्यानकामाः ।५७।

मैं स्नेह और मोह के वशीभूत होकर आत्मविस्मृति को प्राप्त हुआ हूँ, परन्तु इस बात को कौन जानता है ? ।५२। इस प्रकार मैं भार्या, धन के भडार और पुत्र के विवाहादि मे अत्यन्त अनुरक्त शोक और दु ख मे युक्त हो गया। मै सोचने लगा कि मैं अनन्त कौन हूँ ? परतु कुछ भी नही समझ पाया । सभी विषय स्वप्न के समान लगने लगे ।५३। तभी मेरी मानिनी पत्नी मुझे उस विवश और मूढ के समान अवस्था मे देख कर मेरे पास आकर रोती हुई चिल्लाने लगी कि हा, यह क्या हुआ ! ।५४। वहाँ अपनी पूर्व भार्या को इस प्रकार देख कर और फिर उन स्त्री-पुरुषो का स्मरण करके अत्यन्त कातर हृदय तथा सन्नम हो उठा । तभी एक वीर, सर्वज्ञानी, पूर्ण धर्मज्ञ, सूर्य के समान तेजस्वी, सतोगुणी , शान्त, शुद्ध तथा ससार-शोक का नाश करने मे समर्थ परमहस मुझे ज्ञान देने के निमित्त वहाँ पधारे। तभी मेरे बाधवो ने उनका पूजन किया और मेरे कल्याण का उपाय पूछने लगे ।५५-५७।

द्वितीयांश —

पंचम अध्याय

उपविष्टे तदा हंसे भिक्षां कृत्वा यथोचिताम् ।
तत प्राहुरनन्तस्य शरीररोग्यकाम्यया ।१।
हंसस्तेषां मत ज्ञात्वा प्राह मा पुरत स्थितम् ।
तव चारुमतो भार्या पुत्रः पंच बुत्रादय, ।२।
धनरत्नन्वित सद्मा सम्बाध सौख्यसकुलम् ।
त्यक्त्वा कदागतोऽसीह पुत्रोद्वाहदिने न तु ।३।
समुद्रतीरसन्चारः पुराद्धर्म्मजनादृतः ।
निमन्त्र्य मामिहायात. शोकसविग्नमानस· ।४।
त्वञ्च सप्ततिवर्षीयस्तत्र दृष्टो मया प्रभो ! ।
त्रिंशद्वर्षीयवत्कस्मादिति मे सभ्रमो महान् ।।५।।

सूतजी बोले — यथोचित भिक्षा प्राप्त करके परमहंस जब विराजमान हुए, तब पुरुषोत्तम तीर्थ के निवासियों ने उनसे पूछा कि अनन्त का शरीर रोग-रहित कब होगा ? ।१। परमहंस उनके प्रश्न का तात्पर्य जान कर और मुझे अपने सामने स्थित देख कर बोले — हे अनन्त ! तुम अपनी पत्नी चारुमती, बुत्रादि पाँचो पुत्र धन रत्नादि से युक्त भवन आदि को त्याग कर यहाँ कब आये ? क्या आज तुम्हारे पुत्र का विवाह-दिवस है ? ।२-३। मैं आज भी तुम्हे इस समुद्र तट पर घूमते देखता हूँ । वहाँ के सभी धार्मिक व्यक्ति तुम्हारा आदर करते हैं । मैं भी आज निमन्त्रित हूँ । परन्तु तुम यहाँ आकर शोक से सन्तप्त होरहे दिखाई देते हो ।४। हे प्रभो ! वहाँ तो तुम सत्तर वर्ष के वृद्ध थे, परन्तु

यहाँ तीस वर्ष के युवक कैसे दिखाई दे रहे हो ? ।५।

इय भार्या सहाया ते न तत्रालोकिता क्वचित् ।
अह वा क्व कुतस्तस्मात्क थ वा काशित ।६।
स एव वा न वापि त्व नाह वा भिक्षुरेव स. ।
आवयोरिह सयोगश्चेन्द्रजाल इवाभवत् ।७।
त्व गृहस्थ. स्वधर्म्मज्ञो भिक्षुकोऽह परात्मक. ।
आवयोरिह सवादो वालकोन्मत्तयोरिव ।८।
तस्मादीशम्य मायेय त्रिजन्मोहकारिणी ।
ज्ञानाप्राप्याद्वैतलभ्या मन्येहमिति भा द्विज ! ।९।

तुम्हारी इस सहायिका भार्या को मैंने वहाँ कभी भी नही देखा । मैं भी यह नही जानता कि मैं इस स्थान पर कहाँ से और किस प्रकार आ गया ? तथा मुझे यहाँ कौन लाया है ? ।६। क्या तुम वही अनन्त हो या और कोई हो ? मैं भी वही भिक्षुक हूँ या कोई अन्य हूँ ? यहाँ मेरा तुम्हारा मिलन भी इद्रजाल के समान ही प्रतीत होता है ।७। तुम अपना धर्म का पालन करने वाले गृहस्थ हो और मैं परमार्थ चिन्तक भिक्षुक । यहाँ हम-तुम दोनो का पारस्परिक सवाद एक बालक और उन्मत्त के सवाद के समान निरर्थक है ।८। हे द्विज ! इससे मैं समझता हूँ कि यह भगवान् की त्रैलोक्य-मोहिनी माया है । इस माया का रहस्य साधारण ज्ञान से नही, अद्वैत बुद्धि से ही समझा जा सकता है ।९।

इति भिक्षुः समाश्राव्य यदन्यत्प्राह विस्मित. ।
मार्कण्डेय ! महाभाग ! भविष्य कथयामि ते ।१०।
प्रलये या त्वया दृष्टा पुरुषस्योदराम्भसि ।
सा माया मोहजनिका पन्थानं गणिका यथा ।११।
तमोह्ययत‍ासन्नापा नोदनोद्यतमक्षरी
ययेदमखिलं लोकमवृत्या क्स्थयास्थितम् ।१२।
लये लीने त्रिजगति ब्रह्मतन्मात्रतां गतः ।
निरुपाधौ निरालोके सिसृक्षुरभवत् परः ।१३।

ब्रह्मण्यपि द्विधाभूते पुरुष प्रकृती स्वया ।
भासा सजनयामास महान्त कालयोगतः ।१४।
कालस्वभावकर्म्मात्मा सोऽहङ्कारस्ततोऽभवत्
त्रिवृद्विष्णु-शिव-ब्रह्म-मय. ससारकारणम् ।।१५।।

विस्मयान्वित हृदय से भिक्षुक परमहस ने मुझसे इतना ही कहा। फिर उन्होने माकण्डेय से कहा – हे मार्कण्डेय ! हे 'महाभाग ! मैं अब तुम्हें भविष्य की बात सुनाता हूँ ।१०। प्रलयकाल मे उस परम पुरुष के उदर मैं स्थित जल मे, पथ मे बैठने वाली गणिका के समान, सब मे मोह उत्पन्न करने वाली माया निवास करती है ।११। तमोगुण रूप हुई यही माया अनन्त सन्ताप उत्पन्न करने वाली और इस मिथ्या जगत में सब की गति करने वाली है। यही माया तीनो लोको मे व्याप्त होकर उन्हें स्थित करती है । इस मायाका नाश सभव नही है ।१२। प्रलयकाल मे तीनो लोको के लीन होजाने पर सर्वत्र अधकार छा जाता है, तब दिशा देश और काल आदि का भी कोई चिह्न नही रहता। उस समय ब्रह्म ही सृष्टि करने की इच्छा से, अपनी हीं महिमा द्वारा प्रकृति और पुरुष इन दो रूपो मे विभक्त हो जाते हैं। तब काल के सहयोग से प्रकृति और पुरुष, का सयोग होने पर महत्तत्व उत्पन्न होता है ।१३-१४। प्रकृति से काल और स्वभाव उत्पन्न हुए । महत्तत्व से अहकार हुआ । वही अहकार तीनो गुणो मे विभक्त होकर ब्रह्मा, विष्णु और शिव का उत्पन्न करने वाला हुआ । यही ब्रह्मा, विष्णु और शिव सम्पूर्ण विश्व के कारण हैं ।१५।

तन्मात्राणि तत पञ्च जज्ञिरे गुणवन्ति च ।
महाभूतान्यपि तत प्रकृतौ ब्रह्मसश्रयात् ।१६।
जाता देवासुरनरा ये चान्ये जीवजातय· ।
ब्रह्माण्डभाण्डसभार-जन्मनाशक्रियात्मिका: ।१७
मायया मायया जीव-पुरुष परमात्मनः ।
ससारशरणव्यग्रो न वेदात्मगति क्वचित् ।१८
अहो बलवती माया ब्रह्माद्या यद्वशे स्थितः ।

गावो यथा नसि प्रोता गुणबद्धा. खगा इव ।१६।
ता माया गुणमय्या ये तितीर्षन्ति मुनीवरा । ।
स्रवन्ती वासनानक्रां त एवार्थविदो भुवि ।।२०।।

अहङ्कार से प्रथम त्रिगुणात्मक पचतन्मात्र प्रकट हुआ । पचतन्मात्र से पचमहाभूत हुए । इस प्रकार प्रकृति मे पुरुष के अधिष्ठान करने से ही सृष्टि का उदय होता है ।१६। फिर देवता, दानव, मनुष्य तथा अन्यान्य जीव अर्थात जितने भी जन्म लेने वाले और मरणधर्मी प्राणी हैं, वे सब उत्पन्न होते है ।१७। ईश्वर की माया के वश मे पडे रहने से सभी जीव सांसारिक कार्यो मे लिप्त रहे आते हैं तथा अपने उद्धार का प्रयत्न नही कर पाते ।१८। अहो, यह माया कैसी बलवती है, जिसके वश मे ब्रह्मादि देवता भी नाथे हुए बैल और डोरी से बांधे हुए पक्षी के समान नाचते रहते है ।१६। जो मुनिवर इस प्रकार के वासना रूपी नक्र की उत्पत्ति-त्री गुणमयी माया से मुक्त होने का उपाय करते हैं, उन्ही ज्ञानियो का जन्म सार्थक समझो ।२०।

मार्कण्डेयो वसिष्ठश्च वामदेवादयोऽपरे ।
श्रुत्वा गुरुवचो भूय. किमाहु श्रवणादृता ।२१।
राजानोऽनन्तवचनमिति श्रुत्वा सुधोपमम् ।
किं वा प्राहुरहो सूत ! भविष्यमिह वर्णय ।२२।
इति तद्वच आश्रुत्य सूत: सत्कृत्य त पुन: ।
कथयामास कार्त्स्न्येन शोकमोहविघातकम् ।२३।
तत्रानन्तो भूपगणै. पृष्ट प्राह कृतादर ।
तपसा मोहनिधनमिन्द्रियाणाञ्च निग्रहम् ।२४।
अतोऽहवनमासाद्य तप कृत्वा विधानत. ।
नेन्द्रियाणा न मनसो निग्रहोऽभूत्कदाचन ।२५।

शौनक बोले— हे ब्रह्मन् ! मार्कण्डेय, वसिष्ठ, वामदेव तथा अन्यान्य मुनियो ने परमहस के वचन सुन-कर क्या कहा था ? तथा अनन्त के इस उपाख्यान को सुनने वाले राजाओ ने अनन्त के सुधा के समान

वचन सुन कर क्या कहा ? यह सभी भविष्य-वार्ता हमे सुनाइये ।२१-२२। यह सुन कर सूतजी शोक-मोह का नाश करने वाली एव तत्व-ज्ञानमयी उस वार्ता का वर्णन पुन: करने लगे ।२३। सूतजी ने कहा—फिर उन राजागण के जिज्ञासा करने पर अनन्त ने तपस्या के द्वारा माया का निवारण और इन्द्रियो के निग्रह का प्रसग कहा ।२४। । । बोला—मैं वन मे पुन जाकर विधिवत् तप करने लगा, तो भी अपनी इन्द्रियो और मन का निग्रह नही कर पाया ।२५।

वने ब्रह्म ध्यायतो मे भार्य्यापुत्रधनादिकम् ।
विषयचान्तरा शश्वत्सस्मारयति मे मन: ।२६।
तेषा स्मरणमात्रेण दु.खशोकभयादय· ।
प्रतुदन्ति मम प्राणान्धारणा-ध्याननाशका ।२७।
ततोऽह निश्चितमतिरिन्द्रियाणांच घातने ।
मनसो निग्रहस्तेन भविष्ति न सशय ।।२८।।
अतो मामिन्द्रियाणाञ्च निग्रहव्यग्रचेतसम् ।
तदधिष्ठातृदेवाश्च दृष्ट्वा मामीयुरञ्जसा।२९।
रूपिणो मामथोचुस्ते भोऽनन्त ! इति ते दश ।
दिग्व तार्कप्रचेतोऽश्वि-वन्हीन्द्रोपेन्द्रमित्रका: ।।३०।।

मैं जब–जब ब्रह्म का ध्यान करने में तत्पर होता, तब-तब ही मुझे स्त्री, पुत्र, धनादि की बातें स्मरण हो आती और मेरा ध्यान भग हो जाता २६। इस प्रकार स्त्री, पुत्र तथा धनादि का स्मरण होते ही मेरा अन्तरात्मा दु ख, शोक और भय आदि से व्याकुल हो जाता । इस प्रकार ध्यान में बाधा उपस्थित हो गई ।२७। मैंने पुन: यह विचार करके कि इन्द्रिय-निग्रह से मन भी वश मे हो जायगा, इन्द्रियो के निग्रह का ही संकल्प किया ।२८। ऐसा संकल्प करके जब मैं इन्द्रियों के दमन मे तत्पर हुआ, तब इन्द्रियो के अधिष्ठतृ देवता मेरी ओर ताकने लगे ।२९। तब दशो इन्द्रियो के अधिष्ठातृ देवताओ ने साक्षात् प्रकट होकर मुझसे कहा--

हे अनन्त! हम दिशा, वात, प्रचेता, अश्विद्वय, अग्नि, इन्द्र, उपेन्द्र और मित्र देवता हैं।३०।

इन्द्रियाणां वयं देवास्तव देहे प्रतिष्ठिताः।
नखाग्रकाण्डसभिन्नान्नास्मान्कर्तुमिहार्हसि।३१
न श्रयो हि तवानन्त! मनोनिग्रहकर्मणि।
छेदने भेदनेऽस्माकं भिन्नमर्म्मा मरिष्यसि।३२।
अन्धानां बधिराणाञ्च विकलेन्द्रियजीविनाम्।
वनेऽपि विषयव्यग्रं मानसं लक्षयामहे।३३।
जीवस्यापि गृहस्थस्य देहो गेहं मनोऽनुगं।
बुद्धिर्भार्य्या तदनुगा वयमित्यवधारय।३४।
कर्मायत्तस्य जीवस्य मनो बन्धविमुक्तिकृत्।
संसारयति लुब्धस्य ब्रह्मणो यस्य मायया।३५।

हम दश इन्द्रियों के अधिष्ठातृ देवगण तुम्हारे देह में स्थित हैं। हमको नखाग्र से छिन्न-भिन्न करना सर्वथा अनुचित है।३१। इस प्रकार मन को वश करने के प्रयत्न में तुम्हारा कल्याण नहीं होगा। इन्द्रियों के छेदन-भेदन से मर्मस्थल आहत हो जायगा तो तुम्हारी मृत्यु हो जायगी।३२। अन्धे, बहरे अथवा विकल इन्द्रियों वाले जीव भी निर्जन वन में वास करते हुए विषयासक्त दिखाई देते हैं।३३। जीव रूपी गृहस्थ का घर यह देह ही है तथा मन की अनुगता बुद्धि ही इसकी भार्य्या है। इस प्रकार हम सभी उस बुद्धि रूपी भार्य्या के ही अनुगत रहते हैं।३४। सभी जीव अपने कर्म के वश में हैं। मोक्ष और बन्धन का कारण मन है। प्रभु-माया का अनुगत हुआ मन ही इस लोलुप प्राणी को भवचक्र में डालता रहता है।३५।

तस्मान्मनोनिग्रहार्थं विष्णुभक्तिं समाचर।
सुखमोक्षप्रदा नित्यं दाहिका सर्वकर्मणाम्।।३६।
द्वैताद्वैतब्रह्मदानन्दसन्दोहा हरिभक्तिका।
हरिभक्त्या जीवकोष-विनाशान्ते महामते।।३७।

परं प्राप्स्यसि निर्वाण कल्केरालोकनात्त्वया ।
इत्यह् बोधितस्तेन भक्त्वा सपूज्य केशवम् ।३८।
कल्कि दिदृक्षुरायात. कृष्णं कलिकुलान्तकम् ।।३९।।
दृष्ट रूपमरूपस्य स्पृष्टस्तत्पदपल्लवः ।
अपदस्य श्रुत वाक्यमवाच्यस्य परात्मनः ।४०।

इसलिए यदि मन का निग्रह करना है तो भगवान् विष्णु की भक्ति करो। क्योकि वही सब कर्मोकी दाहिका और मोक्ष-सुख के देने वाली है ।।३६।। हरि-भक्ति ही द्वैत-अद्वैत का ज्ञान एव आनन्द और सन्दोह के देने वाली है, उसी के द्वारा जीवकोष का दमन सभव है ।३७। कल्कि भगवान् के दर्शन करने से ही तुम मोक्ष को प्राप्त हो जाओगे । परमहस का यह उपदेश सुनकर मैं भक्ति सहित भगवान् केशव का पूजन करके कलिकुलनाशक कल्किरूप श्रीकृष्ण के दर्शनार्थ यहाँ उपस्थित हुआ हूँ ।३८-३९। यहीं आकर निराकार ईश्वर के रूप का मुझे दर्शन हुआ है । चरण-रहित परमात्मा के चरण-स्पर्श का सौभाग्य प्राप्त हुआ और अवाच्य प्रभु की वाणी सुनाई दी ।४०।

इत्यनन्तः प्रमुदितः पद्मानाथ निजेश्वरम् ।
कल्कि कमलपत्राक्ष नमस्कृत्य ययौ मुनिः ।।४१।।
राजानो मुनिवाक्येन निर्वाण-पदवी गता. ।
कल्किमभ्यर्च्च्य पद्माञ्चा नमस्कृत्य मुनिव्रता. ।।४२।।
अनन्तस्य कथामेतामज्ञानध्वान्त-नाशिनीम
मायानियन्त्री प्रपठञ्छृण्वन्बन्धाद्विमुच्यते ।।४३।।
ससाराब्धि-विलासलालसमति. श्रीविष्णुसेवादरो
भक्त्याख्यानमिद स्वभेद-रहितं निर्माय धर्मात्मना ।
ज्ञानोल्लास-निशात-खड्गमुदित. सद्भक्ति-दुर्गाश्रय:
षड्वर्गजयतादशेषजगतामात्मस्थित वैष्णव. ।।४४।।

यह कह कर अत्यन्त हर्षित हुए मुनिवर अनन्त पद्मपत्राक्ष एवं पद्मा के पति भगवान् कल्कि को नमस्कार करके वहाँ से चले गये ।४१।

मुनिवर अनन्त के इन वचनों को सुन कर राजाओं ने भी उनके ही समान व्रतादि का अनुष्ठान किया और पद्मा सहित भगवान् कल्कि का पूजन करके निर्वाण-पदवी को प्राप्त हुए ।४२। शुक बोला—अनन्त की इस कथा के पढने से अज्ञान रूपी अंधकार दूर होता तथा भव-माया से छुटकारा होकर संसार-बंधन से मोक्ष की प्राप्ति होती है ।४३। जो धर्मात्मा पुरुष विष्णु की सेवा तत्पर रह कर भी वासना जनित भवसिन्धु में गोते लगाते रहते हैं, वे इस प्रसंग के द्वारा अभेद-ज्ञान स्वरूप उल्लसित हुई तीक्ष्ण तलवार को धारण करके, हरि-भक्ति रूपी दुर्ग के आश्रय में स्थित हो काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य रूप अपने छ ओं शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लेते हैं ।।४४।।

द्वितीयांश—

षष्ठम अध्याय

गते नृपगणे कल्कि: पद्मया सह सिंहलात् ।
शम्भलग्राम-गमने मतिं चक्रे स्वसेनया ॥१॥
तत: कल्केरभिप्राय विदित्वा वासवस्त्वरन् ।
विश्वकर्म्माणमाहूय वचनञ्चोदमब्रवीत् ॥२॥
विश्वकर्मञ्छम्भलेत्वं गृहोद्यानाट्ट-घट्टिनम् ।
रत्नस्फटिक-वैदूर्य्य नानामणि-विनिर्मितं. ।
तत्रैव शिल्पनैपुण्य तव यच्चास्ति तत्कुरु ॥४॥
श्रुत्वा हरेर्वचो विश्वकर्मा शर्म निज स्मरन् ।
शम्भले कमलेशस्य स्वस्त्यादि-प्रमुखान्गृहान् ॥५॥

सूतजी बोले—फिर जब वे राजागण चले गए तब भगवान् कल्कि ने पद्मा और सेना के सहित सिंहलद्वीप से प्रस्थान करने का विचार किया ।१। जब इन्द्र ने उनका यह अभिप्राय जाना, तब उसने उसी समय विश्वकर्मा को अपने पास बुला कर कहा ।२। इन्द्र बोला—हे विश्वकर्मन् ! तुम सम्भल ग्राम मे जाकर स्वर्ण से अट्टालिकाओ से युक्त सुन्दर भवन और उद्यान आदि का निर्माण करो और उन्हे रत्न, स्फटिक तथा वैदूर्यादि विविध प्रकार की मणियो से जड़ कर अपना शिल्प-नैपुण्य दिखाओ ।३-४। इन्द्र के वचन सुन कर विश्वकर्मा अपना कल्याण जानता हुआ शम्भल ग्राम पहुँचा और वहाँ उसने पद्मापति के निमित्त स्वस्ति आदि मगल चिन्हो से युक्त सुन्दर भवनादि का निर्माण किया ।५।

हंससिंहसुपर्णादिमुखाश्चक्रे स विश्वकृत् ।

पर्यंपरि तापघ्नवातायनमनोहरान् ।६।
नानावनलतोद्यानसरोवापीसुशोभितः ।
शम्भलश्चाभवत्कल्केर्यथेन्द्रस्यामरावती ।७।
कल्किस्तु सिंहलाद्द्वीपाद्बहिः सेनागणैर्वृत ।
त्यक्त्वा कारुमती कूले पाथोधेरकरोत्स्थितम् ।८।
बृहद्रथस्तु कौमुद्या सहितः स्नेहकातरः ।
पद्मया सहितायास्मै पद्मनाथाय विष्णवे ।९।
ददौ गजानामयुत लक्ष मुख्यञ्च वाजिनाम् ।
रथानाञ्च द्विसाहस्र दासीना द्वे शता मुदा ।१०।
दत्वा वासासि रत्नानि भक्तिस्नेहाश्रुलोचनः ।
तयोर्मुखालोकनेन नाशकत्किंयदीरितुम् ।११।

हस, सिंह, गरुड आदि की आकृति से युक्त अनेक प्रकार के गृह बनाये गये। अनेक भवनो मे कई-कई मंजिले बनाई गईं और गर्मी का ताप शान्त करने के लिए मनोहर वातायन निर्मित किये गये।६। विविध प्रकार के वन, लताओ से युक्त उद्यान, सरोवर और बावडी आदि से समन्वित होने के कारण वह शम्भल ग्राम अमरावती के समान शोभा पाने लगा।७। इधर भगवान् कल्कि सेना के सहित सिंहल द्वीप की कारुमती नगरी से निकल कर समुद्र तट पर आये।८। अपनी रानी कौमुदी के साथ राजा बृहद्रथ स्नेह से कातर हो गया और उसने पद्मा सहित पद्मानाथ को दश हजार हाथी, एक लाख घोडे, दो हजार रथ, दो सौ दासियाँ और विविध प्रकार के वस्त्र-रत्नादि भक्ति सहित दिये और आँखों मे स्नेह के आँसू भर कर अपनी पुत्री और जामाता को अपलक देखते रहे।९-११।

महाविष्णुदम्पती तौ प्रस्थाप्य पुनरागतौ ।
पूजितौ कल्किपद्माभ्या निजकारुमती पुरीम् ।१२।
कल्किस्तु जलधेरम्भो विगाह्य पतना गणै ।
पार जिगमिषु दृष्टवा जम्बुक स्तम्भिताऽभवत् ।१३।

जलस्तम्भमथालोक्य कल्कि. सबलवाहन ।
प्रययौ पथमा राशेरुपरि श्रीनिकेतन. ।१४।
गत्वा पार शुक प्राह याहि मे शम्भलालयम् ।१५।

फिर राजा बृहद्रथ ने अपनी पुत्री और जामाता का पूजन कर उन्हे विदा किया और स्वयं अपनी कारुमती नगरी मे लौट गया ।१२। फिर कल्किजी ने सेना के सहित समुद्र के जल मे स्नान किया और तभी वहाँ एक श्रृगाल उस स्तभित हुए जल पर होता हुआ पार चला गया ।१३। जब कल्किजी ने जल को इस प्रकार स्तभित हुआ देखा तो वे अपनी सेना और वाहनादि के सहित समुद्र के जल पर चलते हुए पार हो गये ।१४। समुद्र के पार पहुँच कर उन्होंने शुक के प्रति कहा—हे शुक ! तुम शम्भल ग्राम स्थित मेरे घर पर जाओ ।१५।

विश्वकर्मकृत यत्र देवराजाज्ञया बहु ।
सद्म सम्बाधममल मत्प्रियार्थ सुशोभनम् ।१६।
तत्रापि पित्रोर्ज्ञातीनां स्वस्ति ब्रूया यथोचितम् ।
यदत्राङ्ग ! विवाहादि सर्व वक्तु त्वमर्हसि ।१७।
पश्चाद्यामि वृतस्त्वेकैस्त्वमादौ याहि शम्भलम् ।१८।
कल्केर्वचनमाकर्ण्य कीरो धीरस्ततो ययौ ।
आकाशगामी सर्वज्ञ. शम्भल सुरपूजितम् ।१९।
सप्तयोजनविस्तीर्ण चातुर्वर्ण्यजनाकुलम् ।
सूर्यरश्मिप्रतीकाश प्रासादशतशोभितम् ।२०।

देवराज इन्द्र की आज्ञा से मेरा प्रिय करने के लिए वहाँ विश्वकर्मा ने अनेको शोभा सम्पन्न भवनो का निर्माण किया है ।१६। तुम वहाँ जाकर मेरे माता-पिता और जाति-बन्धुओ को मेरा कुशल समाचार देकर विवाहादि का प्रसग उन्हे बताना ।१७। तुम आगे-आगे शम्भल ग्राम पहुचो, मैं भी सेना सहित पीछे पीछे आ रहा हूँ ।१८। कल्किजी के वचन सुन कर वह धीर शुक आकाश मार्ग से होता हुआ शीघ्र ही शम्भल ग्राम

मे जा पहुचा ।१९। सात योजन विस्तार वाले उस शम्भल ग्राम मे चारो वर्ण निवास करते हैं । वहाँ सूय किरणो के समान चमचमाते हुए सैकडो प्रासाद सुशोभित हैं ।२०।

सर्वर्तु सुखद रम्य शम्भल विह्वलोऽविशत् ।२१।
गृहाद्गृहान्तर दृष्ट्वा प्रासादपि चाम्बरम् ।
वनाद्वनातर तत्र वृक्षाद्वृक्षान्तर व्रजन् ।२२।
शुक. स विष्णुयशश: सदन मुदितोऽव्रजत् ।
त गत्वा रुचिरालापै. कथयित्वा प्रिया. कथा. ।२३।
कल्केरागमन प्राह सिंहलात्पद्मया सह ।२४।
ततस्त्वरन्विष्णुयशाः समानार्यप्रजाजनान् ।
विशाखयूपभूपाल कथयामास हर्षित. ।२५।

सब ऋतुओ में समान सुख देने वाले सुरम्य शम्भल ग्राम को देखते ही विह्वल हुए शुक ने उसमे प्रवेश किया । वह वहाँ एक घर से दूसरे में, प्रासाद के आगे से आकाश में, एक उद्यान से अन्य उद्यान मे तथा एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर विचरने लगा ।२१-२२ इस प्रकार हर्ष-विह्वल शुक विष्णुयशजी के घर में जाकर अपनी मधुर वाणी में उन्ही सम्पूर्ण प्रिय कथा सुनाने लगा ।२३। तथा पद्मा के सहित भगवान् कल्कि के आगमन का समाचार सुनाया ।२४। यह सुनते ही विष्णुयश हर्ष से पुलकित हो उठे और उन्होने विशाखयूप-नरेश आदि राजाओ और प्रजाजनो को वह सब समाचार सुना दिया ।२५।

स राज्ञा कारयामास पुर-ग्रामादि मण्डितम् ।
स्वर्णकुम्भै. सदम्भोभिः पूरितैश्चन्दनोक्षितैः ।२६।
कालागुरुसुगन्धाढ्यैर्दीपलाजाङ्कुराक्षतै' ।
कुसुमैः सुकुमारैश्च रम्भा-पूग-फलान्वितै. ।
शुशुभे शम्भलग्रामो विबुधाना मनोहरः ।२७।
त कल्किः प्राविशद्भीम-सेनागण-विलक्षण ।

कामिनी-नयनानन्दमन्दिराग कृपानिधिः ।२८।
पद्मया सहित पित्रोः पदयो. प्रणतोऽपतत् ।
सुमतिर्मुदिता पुत्र स्नुषा शक्रं शचीमिव ।
ददृशे त्वमरावत्या पूर्णकामा दिति सती ।२६।

तब विशाखयूप-नरेश ने चन्दन युक्त जल को स्वर्णकलश मे भरवा कर नगर और ग्राम मे उससे छिड़काव कराया ।२६। उस समय वह शम्भल ग्राम दीपमाल, पुष्पो, अगर आदि सुगंधित द्रव्यो, कदली, पुंगीफल, नवीन किसलय, अक्षत तथा ताम्बूल आदि से समन्वित होकर देवताओ की पुरी के समान मनोहर दिखाई देने लगा ।२७। इसी अवसर पर स्त्रियो के नेत्रों को आनन्द देने वाले भगवान् कल्कि अपनी सेना आदि के सहित ग्राम मे प्रविष्ट हुए ।२८। भगवान् कल्कि ने पद्मा के सहित अपने माता पिता के चरणो मे प्रणाम किया । जैसे इन्द्र और शची को प्रणाम करते देख कर दिति को आनन्द हुआ था, वैसे ही सुमति भी अपने पुत्र और पुत्रवधू को देख कर पूर्ण मनोरथ एव अत्यत हर्षित हुई ।२९।

शम्भलग्राम नगरी पताका ध्वज-शालिनी
अवरोधसुजघना प्रासादविपुलस्तनी ।
मयूरचूचका हस-सघहारमनोहरा ।३०।
पटवासोद्योतधूमवसना कोकिलस्वना ।
सहासगोपुरमुखी वामनेत्रा यथांगना ।
कल्कि पति गुणवती प्राप्य रेजे तमीश्वरम् ।३१।
स रेमे पद्मया तत्र वर्षपूगानजाश्रय· ।
शम्भले विह्वलाकारः कल्किः कल्कविनाशन. ।३२।
कवेः पत्नी कामकला सुषुवे परमेष्ठिनौ ।
बृहत्कीर्त्तिबृहद्बाहू महाबल पराक्रमौ ।३३।।
प्राज्ञ य सन्नतिर्भार्या तस्या पुत्रौ बभूवतु ।

यज्ञविज्ञौ सर्वलोकपूजितौ विजितेन्द्रियौ ।३४।
सुमन्त्रकस्तु मालिन्या जनयामास शासनम् ।
वेगवन्तञ्च साधूना द्वावेतावुपकारकौ ।।३५।।

शम्भल ग्राम नामक वह नगरी ध्वजा-पताका से युक्त उन्नत प्रासादो वाली, मयूर, हसादि से सुशोभिता, सुगन्ध-धूम-वसना कोकिल के समान मधुरालाप युक्ता तथा कामिनी के समान सर्व प्रकार सजी हुई थी। वह कल्किजी को पति रूप मे प्राप्त कर अत्यन्त शोभामयी हो गई ।३०-३१। वे अजन्मा, सर्वाश्रय रूप एव कलि-विनाशक कल्किजी अनेक वर्ष तक शम्भल मे रह कर पद्मा के साथ विहार करते रहे ।३२। तदनन्तर कवि की पत्नी कामकला ने दो पुत्र उत्पन्न किये जिनके नाम बृहत्कीर्ति और बृहद्बाहु हुए। यह दोनो अत्यन्त बली और पराक्रमी थे १३। प्राज्ञ की भार्या सुमति ने जितेन्द्रिय और सर्वलोक पूजित यज्ञ और विज्ञ नामक दो पुत्र उत्पन्न किये ।३४। सुमन्त्र की पत्नी मालिनी ने शासन और वेगवान् नामक दो पुत्रो को जन्म दिया। यह दोनो साधुजनो का उपकार करने वाले हुए ।३५।

तद्वौत: कल्किश्च पद्मायां जयो विजय एव च ।
द्वौ पुत्रौ जनयामास लोकख्यातौ महाबलौ ।।३६।।
एतै परिवृतोऽमात्यै सर्वसम्पत्समन्वितौ ।
वाजिमेधविधानार्थ मुद्यत पितर प्रभु ।३७।
समीक्ष्य कल्कि प्रोवाच पितामहमिवेश्वरर. ।
दिशा पालान्विजित्याह धनान्याहृत इत्युत ।३८।
कारयिष्याम्यश्वमेध यामि दिग्विजयाय भो ! ।३९।
इति प्रणम्य त प्रीत्या कल्कि पटपुरञ्जय: ।
सेनागणै: परिवृत: प्रययौ कीकट पुरम् ।४०।

कल्किजी की पत्नी पद्मा ने जय, विजय नामक दो पुत्र प्रसव किये। यह दोनो महाबली तीनो लोको में प्रसिद्ध हुए ।३६। इस प्रकार उनका परिवार पुत्रवान् और सर्व ऐश्वर्य सम्पन्न हो गया। फिर कल्कि

जी ने अपने पिता को अश्वमेध यज्ञ के अनुष्ठान मे ब्रह्माजी के समान तत्पर देखकर कहा—हे पिताजी ! मैं दिक्पालो को जीत कर धन एकत्र करूँगा, जिससे आपका अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न होगा । अब मैं दिग्विजय के लिए प्रस्थान करता हूँ ।३७-३६। शत्रु-पुर पर विजय प्राप्त करने वाले कल्किजी ने यह कह कर प्रसन्नतापूर्वक अपने पिता को प्रणाम किया और सेना को साथ लेकर कीकटपुर की ओर चल दिये ।४०।

बुद्धालय सुविपुल वेदधर्मबहिष्कृतम् ।
पितृदेवार्चनाहीन परलोकविलोपकम् ।४१।
देहात्मावादबहल कुलजातिविवर्जितम् ।
धनै स्त्रीभिर्भक्ष्यभोज्यै. स्वपराभेददर्शिनम् ।४२।
नानाजनैः परिवृत पानभोजनतत्परैः ।४३।
श्रुत्वा जिनो निजगणै कल्केरागमन क्रुधा ।
अक्षौहिणीभ्या सहित. सबभूव पुराद्बहि ।४४।
गजरथतुरगै समाचिता भू कनक विभूषणभूषितैर्वराङ्गै ।
शत शतरथिभिर्धृतास्त्रशस्त्रै । ध्वजपटराजि-
निवारितातपैर्वभौ सा ।।४५।।

अत्यन्त विस्तार वाला कीकटपुर बौद्धों का निवास स्थान था । यहाँ रहने वाले व्यक्ति वैदिक धर्म तथा देवता और पितरो के अर्चन से हीन और परलोक के न मानने वाले थे ।४१। यह लोग देहात्मवादी, कुल धर्म और जाति धर्म के न मानने वाले तथा धन, स्त्री और भोजनादि मे अभेद देखने वाले थे ।४२। पान एव भोजन मे ही व्यस्त रहने वाले विविध प्रकार के मनुष्यो से ही यह नगर परिपूर्ण था ।४३। वहाँ के अधिपति जिन ने जब युद्ध के अभिप्राय से सेना रहित कल्किजी का आगमन सुना तो वह प्रतीकारार्थ दो अक्षौहिणी सेना को लेकर नगर से बाहर आया ।४४। असख्य हाथी, रथ, अश्व स्वर्ण के आभूषणों से भूषित श्रेष्ठ रथी और शस्त्रास्त्रधारी वीरो से पृथिवी ढक गई । सेनाओ के ध्वजो से धूप भी रुक गई ।४५।

—✿—

सप्तम अध्याय

ततो विष्णु : सर्वजिष्णु कल्कि कल्कविनाशनः ।
कालयामास ता सेना करिणीमिव केसरी ।१।
सेनागना ता रतिसगरक्षती रक्ताक्तवस्त्रा
विवृतोरुमध्याम् । पलायती चारुविकीर्णकेशा
विकूजती प्राह स कल्किनायक· ।।२।।
रे बौद्धा ! मा पलायध्व निवर्तध्व रणाङ्गणे ।
युध्यध्व पौरुष साधु दर्शयध्व पुनर्मम ।।३।।
जिनो हीनबल कोपात्कल्केराकर्ण्य तद्वच· ।
प्रतियोद्धु वृषारूढ· खड्गचर्मधरो ययौ ।४।
नाना प्रहरणोपेतो नानायुधविशारद
कल्किना युयुधे धीरी देवाना विस्मयावहः ।।५।।

सूतजी बोले—जैसे सिंह हथियो पर आक्रमण करता है, वैसे ही पाप का नाश करने वाले तथा सब विजेता कल्किजी ने उसकी सेना पर आक्रमण कर दिया ।१। युद्ध रुधिर रूपी वस्त्रो का धारण करने वाली विवृत ऊरु सम्पन्ना, विकीर्ण केशा प्रलाप करती हुई अर्थात हाहाकार करती हुई, रति युद्ध में आहत नारी के समान भागने वाली उस सेना से कल्किजी ने कहा ।२। अरे बौद्धो ! तुम इस युद्ध स्थल से मत भागो । आओ, लौट आओ और अपना पौरुष दिखाने मे पीछे न हटो ।३। कल्कि की बात सुन कर बल से हीन हुआ जिन क्रोध पूर्वक चर्म की तलवार लेकर युद्ध करने के लिए उनके समक्ष आया ।४। विविध प्रकार के युद्धो मे विशारद जिन कल्किजी से युद्ध करने लगा । उसका रणचातुर्य देख कर देवता भी आश्चर्य करने लगे ।५।

शूलेन तुरग विद्धा कल्कि बाणेन मोहयन् ।
क्रोडीकृत्य द्रुत भूमेर्नाशकत्तोलना द्दत ।५।
जिनो विश्वम्भर ज्ञात्वा क्रोधाकुलितलोचन: ।
चिच्छेदास्य तनुत्राण कल्के: शस्त्रञ्च दासवत् ।७।
विशाखयूपोऽपि तथा निहत्य गदया जिनम् ।
मूर्च्छित कल्किमागाय लीलया रथमारुहत् ।८।
लब्धसज्ञस्तथा कल्कि· सेवकोत्साहदायक. ।
समुत्पत्य रथात्तस्य नृपस्य जिनमाययौ ।६।
शूलव्यथा विहायजौ महासत्वस्तुरङ्गम
रिगणैर्भ्रमणै· पादविक्षेपहननैर्मुहु: ।१०।
दण्डाघातै. सटाक्षेपैंर्बौद्धसेनागणान्तरे ।
निजघान रिपून्कोपाच्छतशोऽथ सहस्रश. ।११।

उसने अपने शूल से अश्व को विद्ध कर दिया तथा बाण से कल्किजी को समोहित कर अक मे भरने लगा, परन्तु उसे सफलता नही मिली ।८। जिन न कल्कि को विश्वभर रूप जान लिया और क्रोध पूर्वक नेत्रो से उन्हे वदी के समान देखता हुआ, उसने उनके शस्त्रास्त्र और कवच को छिन्न-भिन्न कर दिया ।७। यह देख कर विशाखयूप-नरेश ने अपनी गदा से जिन को आहत कर दिया और लीला पूर्वक मूर्च्छित हुए कल्किजी को लेकर रथ पर चढ गये ।८। जब उन्हे चेत हुआ, तब वे भक्तो को उत्साह देने वाले कल्किजी राजा के रथ से उतर कर जिन के सामने पहुँचे ।६। कल्किजी का अश्व भी शूल की वेदना को भूल कर युद्धभूमि मे कूद पडा और घूमता हुआ पदाघात, दन्ताघात, केशघात आदि के द्वारा बौद्ध सेना के हजारो वीरो को क्रोधपूर्वक मारने लगा ।१०-११।

निश्वासवातैरुड्डोय केचिद्द्वीपान्तरेऽपतन् ।
हस्त्याश्वरथसबाधा: पतिता रणमूर्द्धनि ।१२।

गर्ग्यो जध्नु षष्टिशत भर्ग्य कोटिशतायुतम् ।
विशालास्तु सहस्राणा पचाविश रणे त्वरन् ।१३।
अयुते द्वे जघानाजौ पुत्राभ्या सहित: कवि ।
दशलक्ष तथा प्राज्ञ पञ्चलक्ष सुमन्त्रक ।१४।
जिन प्राह हन्सकल्किस्तिाष्ठाग्रे ममदुर्मते ! ।
दैव मा विद्धि सर्वत्र शुभाशुभफलप्रदम् ।१५।

अश्व के भयंकर श्वास से उड कर कोई-कोई वीर तो अन्य द्वीपो मे जाकर गिर गये तथा कुछ वीर गज, अश्व एव रथादि से टक्कर खा कर युद्ध स्थल मे ही धराशायी हो गये ।१२। गर्ग्य ने अपने अनुगामियो को साथ लेकर बौद्धो की छ. हजार सेना का सहार कर दिया। भर्ग्य और उसकी सेना ने दस हजार सेना मार दी तथा विशाल और उसकी सेना ने पच्चीस हजार सेना नष्ट कर डाली ।१३। कवि और उमके दोनो पुत्रो ने बीस सहस्र सैनिक मार डाले । प्राज्ञ ने दस लाख और सुमत्रक ने पाँच लाख सेना का सहार कर दिया ।१४। फिर जिन को भागता देख कर कल्किजी ने हँस कर उससे कहा—अरे दुर्मते ! भाग कर न जा । तू मुझे अदृष्ट स्वरूप एव सभी शुभाशुभ फलो का देने वाला समझ कर मेरे सामने आ ।१५।

मद्बाणजालभिन्नाङ्गो नि.सङ्गो यास्यसि क्षयम् ।
न यावत्पश्य तावत्व बन्धूना ललित मुखम् ।१६।
कल्केरितीरित श्रुत्वा जिन प्राह हसन्बली ।
दैव त्वदृश्य शास्त्रे ते वधोऽयमुररीकृत: ।
प्रत्यक्षवादिनो बौद्धा वय यूय वृथाश्रमा: ।१७
यदि वा दैवरूपस्त्व तथाप्यग्रे स्थिता वयम् ।
यदि भेत्तासि बाणौघैस्तदा बौद्धै: किमत्र ते ।१८।
सोपालम्भ त्वया ख्यातं त्वयेवास्तु स्थिरो भव ।
इति क्रोधाद्वाद्वाजालै. कल्कि घोरै. समावृणोत् ।१९।

स तु बाणमयं वर्षा क्षय निन्येऽर्कवद्धिमम् ।२०।

तू मेरे बाणो से आहत होकर अभी परलोक को प्राप्त होगा । तब तेरा साथ कोई भी नही देगा । इसलिए अब तू अपने बधु-बाधवो का सुन्दर मुख देख ले । १६। कल्किजी के वचन सुन कर वह बली जिन हँसा हुआ बोला—अदृष्ट कभी प्रमक्ष नही हो सकता । हम बौद्ध गण प्रत्यक्षके अतिरिक्त अन्य कुछभी नही मानते । हमारा शास्त्र कहता है कि हम अदृष्ट को नष्ट कर देगे ।१७। यदि तुम दैव रूप हो तो हम तुम्हारे सामने खडे हैं । यदि तुम हमे बाण से आहत करोगे तो क्या बौद्ध गण तुम्हे छोड देगे ।१८। जो तुम हमारे प्रति तिरस्कार के वचन कहते हो, वे वचन तुम पर ही लौट जाएँगे, अब तुम सावधान होजाओ । यह कह कर जिन ने अपने तीक्ष्ण बाणो से कल्किजी को समावृत्त कर दिया ।१६। जैसे सूर्य के दिखाई देने पर हिमपात नाश को प्राप्त होता है, वैसे ही जिन द्वारा की गई बाण-वर्षा कल्किजी के स्पर्श से क्षीण होने लगी ।२०।

ब्राह्म वायव्यमाग्नेय पार्जन्य चान्यदायुधम् ।
कल्केर्दर्शनमात्रेण निष्फलान्यभवन्क्षणात् ।२१ ।
यथोपरे बीजमुप्त दानमश्रोत्रिये यथा ।
यथा विष्णौ मता द्वषाद्भक्तिर्येन कृताप्यहो ।२२।
कल्किस्तु त वृषारूढमवप्लुत्य कचेऽग्रहीत् ।
ततस्तौ पेततुर्भूमौ ताम्रचूडाविव क्रुधा ।२३।
पतित्वा स कल्किकच जाग्राह कल्कर करे ।२४।
तत. समुत्थितौ व्यग्रौ यथा चाणरकेशवौ ।
धृतहस्तौ धृतकचौ ऋक्षाविव महाबलौ ।
युयुधाते महावीरौ जिनकल्की निरायुधौ ।२५।

जिन द्वारा प्रेरित ब्रह्मास्त्र, वायव्या, आग्नेयास्त्र, मेघास्त्र और अन्यान्य सभी अस्त्र कल्किजी के दर्शन मात्र फल-हीन हो गये ।२१। जैसे

ऊसर मे बीज बोने पर भी अन्न उत्पन्न नही होता तथा अश्रोत्रिय को दिया हुआ दान निष्फल हो जाता है, अथवा साधुजनो का अनिष्ट चाहने वालो की हरि-भक्ति फलवती नही होती, वैसे ही 'जिन' के सभी अस्त्र निष्फलता को प्राप्त हो गये ।२२। फिर कल्किजी ने उछल कर वृषभ पर चढ़े हुए जिन क केश पकड लिए तथा दोनो ही पृथिवी क्रोधपूर्वक अरुण ज्वाल-शिखा के समान युद्ध मे गुँथ गये ।२३। धरती पर गिरे हुए जिन ने भी अपने एक हाथ मे कल्किजी के केश और दूसरे से हाथ पकड रखे थे ।२४। फिर जैसे चाणूर और श्रीकृष्ण के मध्य युद्ध हुआ था, उसी प्रकार दोनो पृथिवी मे उठ कर परस्पर केश और हाथ पकड कर निरस्त्र उसी प्रकार लड़ने लगे, जैसे दो महाबली रीछ परस्पर मे युद्ध करते हैं ।२५।

तत कल्की महायोगी पदाघातेन तत्कटिम् ।
विभज्य पातयामास ताल मत्तगजो यथा ।२६।
जिन निपतित दृष्ट्वा बौद्धा हाहेति चक्रुशु ।
कल्केः सेनागणा विप्रा जहृषुर्निहतारय· ।२७।
जिने निपतिते भ्राता तस्या शुद्धोदनो बली ।
पदाचारी गदापाणि कल्कि हन्तु द्रुत ययौ ।२८।
कविस्तु त बाणवर्षै परिवार्य समन्ततः ।
जगर्ज्ज परवीरघ्नो गजमावृत्य सिहवत् ।२९।
गदाहस्त तमालोक्य पति स धर्मवित्कवि ।
पदातिगो गदापाणिस्तयौ शुद्धादनाग्रत ।३०।

जैसे मदमत्त गजराज ताल के वृक्ष को उखाड कर धराशायी कर देता है, वैसे ही कल्किजी ने पदाघात करके जिन की कमर तोड़ कर उसे धरती पर गिरा दिया ।२६। हे विप्रो ! उसको धराशायी हुआ देख कर बौद्ध सेना हाहाकार कर उठी तथा शत्रु का सहार हुआ देख कर कल्कि-सेना हर्षित हो गई ।२७। जिन को युद्ध स्थल मे गिरा देखते ही उसका भाई बलवान् शुद्धोदन गदा लेकर कल्किजी को मारने के लिए

पैदल ही उन पर झपटा ।२८। हाथी पर सवार शत्रु-नाशक कवि ने शुद्धोदन को बाणो से ढक दिया और सिंहवत् गर्जन करने लगे ।२९। धर्मविद् कवि ने शुद्धोदन को गदा लिए पैदल ही युद्ध करते देखा तो वह भी पैदल ही उसके सामने जा डटे ।३०।

स तु शुद्धोदनस्तेन युयुधे भीमविक्रम. ।
गज प्रतिगजेनेव दन्ताभ्यां सगदाबुभौ ।३१।
युयुधाते महावीरौ गदायद्ध विशारदौ ।
कृतप्रतिकृतौ मत्तौ नदन्तौ भैरवानृवान् ।३२।
कविस्तु गदया गुव्या शुद्धोदनगदा नदन् ।
करादपास्याशु तया स्वया वक्षस्यताडयत् ।३३।
गदाघातेन निहतो वीर· शुद्धोदनो भुवि ।
पतित्वा सहसोत्थाय त जघ्ने गदया पुन ।३४।
सताडितेन तेनापि शिरसा स्तम्भित कवि. ।
न पपात स्थितस्तत्र स्थाणुवद्विह्वलेन्द्रिय ।३५।

जैसे हाथी शत्रु के हाथी से दाँतो के द्वारा युद्ध करता है, वैसे ही गदाधारी कवि और महापराक्रमी शुद्धोदन गदा-युद्ध मे रत हो गए। युद्ध-मत्त दोनो वीर भयकर शब्द करते हुए परस्पर गदाओ को रोकने लगे ।३१-३२। फिर सिंहनाद करते हुए कवि ने अपने गदाघात द्वारा शुद्धोदन की गदा गिरादी और फिर तुरन्त ही उसके हृदय पर पदाघात किया ।३३। गदाघात को प्राप्त हुआ शुद्धोदन तुरन्त ही पृथिवी पर पडा तथा पुन सहसा उठ कर उसने कवि पर गदाघात किया ।३४। गदा लगने से कवि विकलेन्द्रिय और मूर्छित के समान खडे हो गये, परन्तु पृथिवी पर गिरे नही ।३५।

शुद्धोदनस्तमालोक्य महासार रथायुतः ।
प्रावृत तरसा माया-देवीभानेतुमाययौ ।३६।
यस्या दर्शनमात्रेण देवासुरनरादयः ।

निःसारा. प्रतिमाकारा भवन्ति भुवनाश्रया ।३७।
बौद्धा शौद्धोदनाद्यग्रे कृत्वा तामग्रतः पुन :
योद्धु समागता म्लेच्छकोटिलक्षशतैर्वृ‌ताः ।३८।
सिंहध्वजोत्थितरथा फेरु-काक-गणावृताम् ।
सर्वास्त्रशस्त्रजननी षड्वर्गपरिसेविताम् ।१६।
नानारूपा बलवती त्रिगुणव्यक्तिलक्षिताम् ।
माया निरीक्ष्य पुरत कल्किसेना समापतत् ।४०।

तब शुद्धोदन ने कवि को अत्यन्त पराक्रमी और रथ-सेना से सम्पन्न देख कर कर माया देवी आह्वानाथ तुरन्त ही वहाँ से प्रस्थान किया ।३६। जिस माया देवी का दर्शन करते ही देवता, दैत्य, मनुष्य आदि सभी सासारिक जोव तेजहीन और प्रतिभा के समान निश्चेष्ट हो जाते है, उसी को साथ लेकर शुद्धोदन आदि बौद्धगण अपने करोडो म्लेच्छ वीरो के सहित रणस्थल मे पहुँचे ।३७-३८। सिंहध्वजा वाले रथ पर माया देवी आरूढ हुई और उसने अनेक प्रकार के शस्त्रास्त्र प्रकट किये । कौए और शृगाल उस माया देवी को सब ओर से घेरे हुए थे तथा काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर—यह षड्वर्ग उसकी सेवा कर रहे थे ।३६। वह अनेक प्रकार के रूप-धारण मे समर्थ, बलवती, त्रिगुणात्मिका माया देवी जैसे ही कल्कि सेना के समक्ष पहुँची, वैसे ही उसे देख कर कल्कि-सेना क्षीणता को प्राप्त हो गई ।४०।

निःसारा प्रतिमाकाराः समस्ता शस्त्रपाणयः ।४१।
कल्किस्तानालोक्य निजान्भ्रातृज्ञातिसुहृज्जनान् ।
मायया जायया जीर्णान्विभुरासीत्तदग्रतः ।४२।
तामालोक्य वरारोहा श्रीरूपा हरिरीश्वरः ।
सा प्रियेव तमालोक्य प्रविष्टा तस्य विग्रहे ।।४३।।
तामनालोक्य ते बौद्धा मातर कतिश्चा वराः ।
रुरुदुः सघशो दीना हीनस्वबलपौरुषाः ।।४४।।

कल्किजी के शस्त्रधारी वीरगण प्रतिमा के समान चेष्टाहीन तथा बलहीन होगए ।४१। फिर कल्किजी ने जब अपने बन्धु, जाति-बाधव और सुहृदों को मायारूपिणी अपनी पत्नी के द्वारा जीर्ण होते देखा तो वे उसके समक्ष पहुँचे ।४२। जैसे ही उन्होंने श्रीस्वरूपा अपनी उस प्रिया की ओर देखा, वैसे ही वह वरारोहा उनके देह मे प्रविष्ट हो गई ।४३। तब अपनी उस माता माया देवी को न देख कर सभी प्रमुख बौद्ध बल पौरुष से रहित होकर रुदन करने लगे ।४४।

विस्मयाविष्टमनस क्व गतेयमथाब्रुवन् ।
कल्कि. समालोकनेन समुत्थाप्य निजाञ्जनान् ।४५।
निशातमसिमादाय म्लेच्छाहन्तु मनो दधे ।
सन्नद्ध तुरगारूढ दृढहस्तधृतत्सरुम् ।४६
धनुर्निषङ्गमनिश बाणजालप्रकाशितम् ।
धृतहस्ततनुत्राणगोधाङ्गुलि वराजितम् ।४७।
मेघोपर्युप्तताराभ दशनस्वर्णबिन्दुकम् ।
किरीटकाटिविन्यस्त-मणिराजिविराजितम् ।४८।
कामिनीनयनानन्दसन्दोहरसमन्दिरम् ।
विपक्षपक्षविक्षेपक्षिप्तरूक्षटाक्षकम् ।४९।
निजभक्तजनोल्लास-सवासचरणाम्बुजम् ।
निरीक्ष्य कल्कि ते बौद्धास्तत्रसुर्धर्मनिन्दका ।५०।

माया को न देख वे आश्चर्य चकित होकर परस्पर कहने लगे कि माया देवी कहाँ चली गई ? इधर कल्किजी ने अपनी सेना पर दृष्टि डाली यो यह स्वस्थ और सचेत हो गई तथा म्लेच्छो का सहार करने की इच्छा से कल्किजी तीक्ष्ण खग लेकर घोडे पर सवार हुए ।४५-४६। उस समय बाणो से परिपूर्ण तरकश श्रेष्ठ धनुष, कवच एव अगुलित्राण

था तथा किरीट के अग्रभाग मे विविध प्रकार की जडी हुई मणियाँ चमक रही थी ।४८। कामनियो के नयनो को आनन्द देने वाले रस के सदन रूप कल्किजी उस समय शत्रु-पक्ष को विक्षिप्त करने के उद्देश्य से उनकी ओर कटाक्ष करने लगे ।४६। भक्तजन अपने भगवान् कल्किजी के चरणारविन्दो का दर्शन करके उल्लसित हो उठे और धर्म-निन्दक बौद्धगण भय से काँपने लगे ।५०।

जहृषुः सुरभङ्घाः खे यागाहुतिहुताशना· ।५१।
सुबलमिलनहृष' शत्रुनाशंतकर्ष समरवरविलास
साधुसत्कारकाश । स्वजनदुरितहर्त्ता जीवजातस्य
भर्त्ता रचयतु कुशल व. कामपूगावतार ।५२।

यह देख कर आकाश मे स्थित देवता कहने लगे कि अब युद्धभूमि रूपी यज्ञस्थल मे स्थित अग्नि मे पुन आहुति डाली जाने को है ।५१। जो अस्त्रशस्त्रो से सुसज्जित सेनाओ को इकट्ठी करके शत्रुओ को नष्ट करने वाले, लीलापूवक सग्राम मे तत्पर साधुओ के सत्कार-कर्त्ता, स्वजनो के दु खो का विनाश एव सब प्राणियो का भरण करने वाले है, वे सतो की अभिलाषा पूर्ण करने वाले भगवान् कल्किजी सब प्रकार कल्याण करे ।५२।

॥ द्वितीय अंश समाप्त ॥

प्रथम अध्याय

ततः कल्किर्म्लेच्छगणान्करवालेन कालितान् ।
बाणैः सन्ताडितानन्याननयद्यमसादनम् ।१।
विशाखयूपोऽपि तथा कविप्राज्ञसुमन्त्रका ।
गार्ग्यभार्ग्यविशालाद्या म्लेच्छान्निन्युर्यमक्षयम् ।२।
कपोतरोमा काकाक्ष काककृष्णादयोऽपरे ।
बौद्धा. शौद्धौदना याता युयुधु कल्किसैनिकै ।३।
तेषा युद्धमभूद्घोर भयद सवदेहिनाम् ।
भूतेशानन्दजनक रुधिरारुणकर्दमम् ।४।
गजाश्वरथसघाना पतता रुधिरस्रवैः ।
स्रवन्ती केशशैवाला वाजिग्रहा सुगाहिको ।५।

सूतजी बोले--फिर कल्किजी ने कुछ म्लेच्छो को बाणो द्वारा बीध दिया और कुछ को तलवार से मार कर यम लोक मे भेज दिया ।१। विशाखयूपनरेश, कवि, प्राज्ञ, सुमत्रक, गर्ग्य, भर्ग्य और विशालादि ने भी उन म्लेच्छो को यमपुरी पठाया ।२। फिर कपोतरोमा, काकाक्ष, काककृष्ण और शुद्धोदन आदि बौद्ध योद्धागण कल्कि-सेना से युद्ध मे तत्पर हुए ।३। उस घोर सग्राम को देख कर सभी प्राणी भयभीत हुए । रक्त युक्त लाल कीचड से रणभूमि ढक गई, यह देख कर भूतनाथ हर्षित हो उठे ।४। युद्धस्थल मे गिरे हुए हाथियो, अश्वो और रथियो के

रक्तपात से लोहित की नदी बह चली, जिसमें केश सिवार जैसे लगने लगे और अश्व रूपी ग्रह धार मे प्रवाहित होने लगे ।५।

धनुस्तरङ्गा दुष्पारा गजरोधः प्रवाहिणी ।
शिर कूर्मा रथतरि. पणिमीनासृगापगा ।६।
प्रवृत्ता तत्र बहुधा हर्षयन्तो मनस्विनाम् ।
दुन्दुभेयरवा फेरुशकुनानन्ददायिनी ।७।
गजैर्गजा नरैश्‍रवा. खरैरुष्ट्रा रथै रथाः ।
निपेतुर्बाणभिन्नाङ्गा· छिन्नबाह्वङ्घ्रिकन्धरा ।८।
भस्मना गुण्ठितमुखा रक्तवस्त्रा निवारता. ।
विकीर्णकेशाः परितो ताग्नित सन्यासिनो यथा ।९।
व्यग्रा केऽपि पलायन्ते याचन्त्यन्य जल पुन. ।
कल्किसेनाशुगक्षुण्णा म्लेच्छा नो शर्म लेभिरे ।१०।

उस लोहित नदी मे धनुष तरग के समान उछलने लगे हाथी इस नदी मे सेतु के समान लगते थे, कटे हुए शीश कछुओ के समान, रथ नाव के समान और कटे हुए हाथ मछली के समान दिखाई देते थे ।६। लोहित नदी के किनारे गीदडो और बाज पक्षियो की हर्ष ध्वनि दु दुभि की ध्वनि जैसी लगती थी । उसे देख कर मनस्वी लोग हर्षित हो उठे ।७। युद्ध क्षेत्र मे हाथी सवार हाथी सवार से, अश्वारोही अश्वारोही से, ऊँट वाला ऊँट वाले से, रथ रथी से भिडा हुआ था । उस समय बाणो से कट-कट कर हाथ, पाँव और मस्तक धरती पर गिर रहे थे ।८। बहुत से वीरो ने भयभीत होकर गेरुए वस्त्र धारण कर, भस्म रमा ली तथा विकीर्ण केश होकर संन्यासी बन कर रोके जाने पर भी पलायन कर गये ।९। कोई-कोई विकल होकर भागा, कोई जल माँगता रहा । इस प्रकार कल्कि-सेना के बाणो की मार से कोई म्लेच्छ वीर सकुशल न रहा ।१०।

तेषा स्त्रियो रथारूढा गजारूढा विहङ्गमा ।
समारूढा हयारूढा खरोष्ट्रवृषवाहना ॥११॥
योद्धु समाययुस्त्यक्त्वा पत्यापत्यसुखाश्रयान् ।
रूपवत्योऽतिबलवत्य पतिव्रतता ॥१२॥
नानाभरणभूषाढ्या सन्नधा विशदप्रभा ।
खड्गशक्तिधनुर्बाणवलयाक्तकराम्बुजा ॥१३॥
स्वैरिण्योऽप्यतिकामिन्यो पुंश्चल्यश्च पतिव्रता ।
ययुर्योद्धु कल्किसैन्यै पतीना निधनातुरा ॥१४॥
मृद्भस्मकाष्ठचित्राणा प्रभुताम्नायशासनात् ।
साक्षात्पतीना निधन कि युवत्योऽपि सेहिरे ॥१५॥

उन म्लेच्छों की रूपवती बलवती, पतिव्रता युवती स्त्रियाँ भी सन्तान-सुख की और उनके आश्रय की कामना छोड कर कोई रथ पर चढ कर, कोई हाथी पर चढ कर, कोई विहग पर चढ कर, कोई घोडे, गधे, ऊँट पर, कोई बैल पर चढ कर युद्ध करने के लिए अपने-अपने पति के पास पहुँची ।११-१२। इन्होने अनेक प्रकार के उज्ज्वल आभूषण एव शस्त्रास्त्र धारण कर रखे थे । इनके हाथो मे कडो के साथ ही खड्ग और बाण भी सुशोभित थे ।१३। सुन्दर लावण्यमयी यह स्त्रियाँ कोई स्वैरिणी, कोई वार-विलासिनी अथवा कोई पतिव्रता थी । यह पति-वियोग मे व्याकुल हुई स्त्रियाँ कल्कि सेना से युद्ध करने को अग्रसर हुई ।१४। क्योकि मनुष्य मिट्टी, काष्ठ एव राख की वस्तु पर भी प्राण देने मे तत्पर होजाते है, इसी प्रकार अपने प्राण के समान पति का मरण सहन करना युवतियो के लिए भी सभव नही होता ।१५।

ता स्त्रिय स्वपतीन्बाणभिन्नान्व्याकुलितेन्द्रियान् ।
कृत्वा पश्चाद्युयुधिरे कल्किसैन्यैर्धृतायुधा ॥१६॥
ताः स्त्रीरुद्वीक्ष्य ते सर्वे विस्मयस्मितमानसा ।
कल्किमागत्य ते योधाः कथयामासरादरात ॥१७॥

स्त्रीणामेव युयुत्सूना कथा श्रुत्वा महामति ।
कल्कि समुदित प्रायात्स्वसैन्यै सनुगो रथः ।१८।
ता. समालोक्य पद्मेश सर्वशस्त्रास्त्रधारिणी. ।
नानावाहनसारूढा कृतव्यूहा उवाच सः ।१९।
रे स्त्रिय शृणुतास्माक वचन पथ्यमुत्तमम् ।
स्त्रिया युद्धेन कि पु सा व्यवहारोऽत्र विद्यते ।२०।

वे म्लेच्छ स्त्रियाँ अपने पतियो को बाणो मे बिंधे हुए तथा व्याकुल देख कर उन्हे पीछे हटाती हुई हथियार लेकर कल्कि सेना से युद्ध करने लगी ।१६। उन स्त्रियो को युद्ध मे तत्पर देख कर कल्कि-सेना आश्चर्य में पड गई और उसने कल्किजी के समक्ष जाकर उन्हे सब वृत्तान्त सूचित किया ।१७। युद्ध की इच्छा वाली उन स्त्रियो का युद्ध करना सुन कर प्रसन्न हुए कल्किजी रथ पर चढ कर सेना और अनुचरो के सहित रणभूमि मे पहुचे ।१८। अनेक शस्त्रास्त्रो से सुसज्जिता, अनेक प्रकार के वाहनो पर चढी हुई, व्यूह रचना करके युद्ध मे तत्पर उन स्त्रियो को देख कर कल्किजी बोले ।१९। कल्किजी ने कहा—हे स्त्रियो ! मैं तुम्हारे हितार्थ श्रेष्ठ वचन कहता हूँ, वह सुनो । स्त्रियो को पुरुषो के साथ युद्ध नही करना चाहिए ।२०।

इति कल्केर्वचः श्रुत्वा प्राहस्य प्राहुरादृता ।
अस्माक त्व पतीन् हसि तेन नष्टा वयं विभो ! ।
हन्तु गतानामस्त्राणि कराण्येवागतान्युत ।२१।
खड्ग-शक्ति धनुर्बाण-शूल तोमर-यष्टय ।
ताः प्राहुः पुरतो मूर्त्ताः कार्तस्वरविभूषणाः ।२२।
यामासाद्य वय नार्यो हिसायामः स्वजेतसा ।
तमात्मन सर्वमय जानीत कृतनिश्चया ।२३।
तमीशमात्मना नार्यः ! चरामो यदनुज्ञया ।
यत्कृता नामरूपादिभेदेन विदिता वयम् ।२४।

रूप-गन्ध-रस-स्पर्श-शब्दाद्या भूतपञ्चकाः ।
चरन्ति यदधिष्ठानात्सोऽयं कल्कि. परात्मक ।२५।

कल्किजी के वचन सुन कर म्लेच्छ-पत्नियाँ हँस पडी । उन्होने कहा—हे विभो ! जब तुम्हारे द्वारा हमारे पति ही नाश को प्राप्त हो गये, तब हम भी नष्ट हो चुकी । यह कह कर वे नारियाँ कल्किजी को मारने को तत्पर हुई । उन्होने जो अस्त्र छोडने चाहे, वे अस्त्र उनके हाथो मे ही रुके रह गये ।२१। खड्ग, शक्ति, धनुष-बाण, शूल, तोमर, यष्टि आदि शस्त्रास्त्रो के स्वर्ण-सज्जित देवता साक्षात् प्रकट हो कर उन म्लेच्छ-पत्नियो के प्रति बोले ।२२ देव रूपी अस्त्रो ने कहा—हे नारियो । हम जिस तेज क द्वारा जीवो का सहार करते रहते हैं, वह तेज हमे जिनसे प्राप्त हुआ है, वह सर्वमय ईश्वर यही हैं, यह समझ लो ।२३। हे स्त्रियो ! हम इन्ही परमात्मा की प्रेरणा प्राप्त कर गतिशील होते हैं तथा इनके द्वारा ही हम नाम-रूप को पाकर जाने जाते हैं ।२४। रूप, गन्ध, रस, स्पर्श तथा शब्दादि पचगुण के आश्रय रूप पचभूत जिनके अधिष्ठान से अपने-अपने कार्य मे उद्यत रहते है, यह कल्किजी वही ईश्वर है ।२५।

काल स्वभाव-सस्कार-नामाद्या प्रकृति परा ।
यस्येक्षया सृजत्यण्ड महाहङ्कारकादिकान् ।२६।
य-मायया जगद्यात्रा सर्गस्थित्यन्तसज्ञिता ।
य एवाद्यः स एवान्ते तस्याय सोऽयमोश्वर ।२७।
असौ पतिर्मे भार्याहमस्य पुत्रास्तबान्धवाः ।
स्वप्नोपमास्तु तन्निष्ठा विविधाश्चैन्द्रजालवत् ।२८।
स्नेहमोनिबन्धाना यातायातदृशा मतम् ।
न कल्किसेविना रागद्वेषविद्वेषकारिणाम् ।२९।
कुतः कालः कुतो मृत्यु क्व यमः क्वास्तिदेवताः
स एव कल्किर्भगवान्मायया बहुलीकृत. ।३०।

इन्ही की आज्ञा से काल, स्वभाव, संस्कार तथा संज्ञा आदि की आश्रयभूता परा प्रकृति, महत्तत्व और अहंकार आदि को उत्पन्न करने मे समर्थ होती हैं ।२६। सर्ग, स्थिति और प्रलयात्मक यह सम्पूर्ण विश्व जिनकी माया ही है, यह वही सबके आदि-रूप ईश्वर है। इनके द्वारा ही लोक मे शुभाशुभ का प्रवर्तन होता है ।२७। यह मेरा पति है और मै इसकी भार्या हूँ, यह मेरा पुत्र अथवा बान्धव है। ऐसे स्वप्न अथवा इन्द्रजाल के समान विविध प्रकार के व्यवहार की उत्पत्ति इन्ही के द्वारा होती है ।२८। स्नेह और मोहादि के बन्धन मे पड़े रह कर जो प्राणी इस विश्व के आवागमन मे रहे आते हैं अथवा जो राग, द्वेष एव विद्वेषादि के आश्रय रहने वाले जीव तथा भगवान कल्कि की सेवा में अनुराग न रखने वाले हैं, वही इस जगत को सत्य मानते हैं ।२९। काल कहा से आया ? मृत्यु कहाँ से उत्पन्न हुई ? यम तथा देवगण कौन है ? यह कल्किजी के अतिरिक्त अन्य कोई नही है, यही अपनी माया के द्वारा बहुरूप हो गए हैं ।३०।

न शस्त्राणि वय नार्यः सप्रहार्या न च क्वचित् ।
शस्त्र प्रहर्तृभेदोऽयमविवेक परात्मन. ।३१।
कल्किदासस्यापि वय हन्तु नार्हा कथोद्भुतम् ।
हनिष्यामो दैत्यपते· प्रहलादस्य यथा हरिम् ।३२।
इत्यस्त्राणा वच. श्रुत्वा स्त्रियो विस्मितमानसा. ।
स्नेहमोहर्विनिर्मुक्तास्त कल्कि शरण ययुः ।।३३।।
ताः समालोक्य पद्मेशः प्रणता ज्ञाननिष्ठया ।
प्रोवाच प्रहसन् भक्ति-योग कल्मषनाशनम् ।३४।

हे स्त्रियो ! हम शस्त्र नहीं हैं, हम किसी पर आघात करने मे भी समर्थ नही हैं । यही परमात्मा स्वय शस्त्र हैं और यही आघात करने की शक्ति से सम्पन्न हैं । इनमे जो भेद प्रतीत होता है, वह सब इनकी माया ही है ।३१। दैत्यराज प्रह्लाद की प्रार्थना पर जब भगवान् विष्णु

विष्णु नृसिंह रूप हुए थे, उस समय हम जैसे उन पर आघात करने मे समर्थ नही हो सके थे, वैसे ही इन कल्किजी और उनके सेवको पर भी आघात करने मे पूर्णतया असमर्थ हैं ।३२। अस्त्रो के यह वचन सुनकर स्त्रिया अत्यत विस्मित हुई और तब वे स्नेह और मोह से युक्त होकर कल्किजी की शरण मे पहुँची ।३३। भगवान कल्कि म्लेच्छ-नारियो को ज्ञाननिष्ठा मे स्थित देखकर उनके प्रति पापो का नाश करने वाला भक्ति-योग हँसते हुए कहने लगे ।३४।

कर्मयोगश्चात्मनिष्ठ ज्ञानयोगं भिदाश्रयम् ।
नैष्कर्म्यलक्षण तासा कथयामास माधवः ३५।
ताः स्त्रियः कल्कि गदित ज्ञानेन विजितेन्द्रिया· ।
भक्त्या परमवापुस्तत्योगिना दुर्लभ पदम् ।३६।
दत्वा मोक्ष म्लेच्छबौद्धपियाणा कृत्वा युद्ध
भैरव भीमकर्मा । हत्वा बौद्धान् म्लेच्छ सघाश्च
कल्किस्तेषा ज्योति स्थानापूर्प रेजे ।३७।
येश्शृण्वन्ति वदन्ति बौद्धनिधन म्लेच्छक्षय सादराल्लोका·
शोकहर सदा शुभकर भक्तिप्रदं माधवे ।
तेषामेव पुनर्न जन्ममरण सर्वार्थसम्पत्कर
माया मोहविनाशन प्रतिदिन ससारतापच्छिदम् ।३८।

तदनन्तर उन्होने उन नारियो को कर्मयोग, आत्मनिष्ठात्मक ज्ञान-योग, भेदाश्रय, निष्कर्मत्व के लक्षण आदि का प्रसग सुनाया ।३५। इस प्रकार जब वे म्लेच्छ रमणियाँ कल्कि-प्रदत्त ज्ञानोपदेश से सचेत होकर इन्द्रियो का दमन करके, भक्ति करती हुई, योगियो को भी दुर्लभ मोक्ष पद को प्राप्त हो गई ।३६। इस प्रकार उन भीमकर्मा कल्किजी घोर युद्धमे बौद्ध और म्लेच्छो का सहार कर दिया, और उनकी स्त्रियो को मोक्षपद प्रदान करके मरे हुए म्लेच्छो और बौद्धो को ज्योतिर्मय स्थान में स्थित कर विराजमान हुए ।३७। जो इस बौद्धो के निधन एव म्लेच्छो के क्षीण होने की कथा को सुनेगे, वे सभी शोको से मुक्त होकर कल्याण को प्राप्त होगे । भगवान के प्रति उनके हृदय मे भक्ति का संचार होगा और वे जन्म- मरण के चक्र से छूट जाँयगे । इस कथा के सुनने से सर्व ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है और माया-मोह का विनाश होता है, तथा संसार के ताप का सदा उच्छेद करने मे समर्थ होता है ।३८। —:—

द्वितीय अध्याय

ततो बौद्धान् म्लेच्छगणान्विजित्य सह सैनिकै. ।
धनान्यदाय रत्नानि कीकटात्पुनरव्रजत् ।१।
कल्कि· परमतेजस्वी धर्माणा परिरक्षक ।
चक्रतीर्थ समागत्य स्नान विधिवदाचरत् ।२।
भ्रातृभिर्लोकपालाभैर्बहुभि स्वजनैर्वृ त ।
समायातान्मुनी स्तत्र ददृशे दीनमानसान् ।३।
समुद्भियागतास्त परिपाहि जगत्पते ।
इत्युक्तवन्तो बहुधा ये तानाह हरि पर ।४।
वालखिल्यादिकानल्पकायाञ्चीरजटाधरान् ।
विनयावनत. कल्किरतनानाह कृपणान्भयात् ।५

सूतजी बोले—हे ऋषियो ! बौद्धो और म्लेच्छो पर विजय प्राप्त करके भगवान कल्कि धन रत्नादि लेकर सेना के सहित उस कीकटपुरी से चल दिये ।१। फिर वे परम तेजस्वी एव धर्मवान् कल्किजी चक्रतीर्थ मे पहुचे और वहाँ उन्होने विधिपूर्वक स्नान किया ।२। तदनन्तर वे अपने बन्धु-बाधवो के साथ लोकपाल के समान सुशोभित होते हुए वही निवास करने लगे । कुछ समयोपरान्त उन्होने दीनता पूर्वक आये हुए कुछ मुनियो को देखा ।३। वे भयभीत मुनिवरण कल्किजी की शरण मे पहुँच कर बोले—हे जगत्पते ! हमारी रक्षा करो, रक्षा करो । इस पर भगवान श्रीहरि बोले ।४। उन्होने अल्प देह वाले छिन्न वस्त्राभूषण और जटा धारण करने वाले बालखिल्यादि मुनियो से विनय और कृपा पूर्वक कहा ।५।

कस्माद्यूय समायाता केन वा भीषिता वत ।
तमहं निहनिष्यामि यदि वा स्यात्पुरन्दर ।६।
इत्याश्रुत्य कल्किवाक्य तेनोल्लासितमानसा ।
जगदु पुण्डरीकाक्ष निकुम्भदुहितु कथा ।७।
शृणुविष्णुयश.पुत्र ! कुम्भकर्णात्मजात्मजा ।
कुथादरीति विख्याता गगनार्द्ध समुत्थिता ।८।
कालञ्जस्य महिषी विकञ्जजननी च सा ।
हिमालये शिर: कृत्वा पादौ च निषधाचले ।
शेते स्तनं पाययन्ती विकञ्ज प्रस्नुतस्तनी ।६।
तस्या निश्वासवातेन विवशा वयमागता: ।
दैवेनैव समानीता सप्राप्तास्त्वत्पदास्पदम् ।
मुनयो रक्षणीयास्ते रक्ष सु च विपत्सु च ।।१०।।

आप कहाँ से आ रहे हैं ? किससे डरे हुए हैं ? यह सब वृतान्त मुझे बताओ, फिर यदि आपका अपकार करने वाला इन्द्र भी होगा, तो भी मै उसे नष्ट कर दूँगा ।६। पुण्डरीकाक्ष कल्किजी के वाक्य सुनकर आश्वस्त हुए मुनियो के हृदय प्रफुल्लित हो गये और तब उन्होने दैत्यराज निकुंभ की पुत्री की कथा सुनाई ।७। मुनियो ने कहा—हे विष्णुयश के पुत्र ! हे प्रभो ! सुनिये, कुम्भकर्ण का एक पुत्र निकुम्भ था, उसकी एक कन्या कुथोदरी नाम की है । उसका आकार गगनमंडल से भी ऊँचा है ।८। वह कालकज नामक दैत्य की पत्नी है, उसका पुत्र विकज है । वह राक्षसी अपना मस्तक हिमालय पर और पाव निषध पर्वत पर रखकर विकज को स्तन पिला रही है ।६। हे देव ! हम उसकी श्वासवायु से उत्पीडित होकर दैव-प्रेरणा वश यहाँ उपस्थित हुए हैं । अब हम आपके चरणाश्रय को प्राप्त हो चुके हैं अत. उससे हमारी शीघ्र रक्षा कीजिये ।१०

इति तेषा वच. श्रुत्वा कल्कि' परपुरञ्जय. ।

सेनागणै परिव्रतो जगाम हिमबद्गिरिम् ।११।
उपत्यका समासाद्य निशामेका निनाय स. :
प्रार्तजिगमिषु' सैन्यैददृशे क्षीरनिम्नगाम् ।१२।
शखेन्दुधवलाकारा फेनिला बृहती द्रुतम् ।
चलन्ती वीक्ष्यते सर्वे स्तम्भिता विस्मयान्विता. ।१३।
सेनागणगजाश्वादिरथयोधै' समावृत. ।
कल्किस्तु भगवास्तत्र ज्ञातार्थोऽपि मुनीश्वरान् ।१४।
पप्रच्छ का नदी चेयं कथ दुग्धवहाभवत् ।
ते कल्केस्तु वच श्रुत्वा मुनयः प्राहुरा दरात् ।।१५।।

उनके यह वचन सुनकर शत्रु-नगरो को विजय करने वाले भगवान् कल्कि अपनी सेना के सहित हिमालय की ओर चले ।११। वहाँ पहुँच कर उन्होने एक रात्रि निवास किया और प्रात काल होते ही, जैसे ही सना के सहित आगे चलने लगे, वैसे ही उन्हे एक दूध की नदी दिखाई दी ।१२। यह नदी शख तथा चन्द्रमा के समान श्वेत थी, वह दीर्घाकार वाली फेनिल नदी वेगपूर्वक बह रही थी । सेना के सभी लोग उस दूध की नदी को देखकर आश्चर्य से चकित हो गये ।१३। यद्यपि भगवान् कल्कि उस नदी के विषय में सब कुछ जानते थे, फिर भी गज, अश्व, रथ तथा पदाति सैनिको से युक्त कल्किजी ने उन मुनीश्वरो से पूछा—'इस नदी का नाम क्या है ? इसमे यह दुग्ध किस प्रकार प्रवाहित है ?' यह सुनकर वे मुनिगण आदरपूर्वक बोले ।१४-१५।

शृणु कल्के पयस्वत्या' प्रभव हिमवद्गिरौ ।
समायाता कुथोदर्या. स्तनप्रस्नवनादिहि ।१६।
घटिकासप्तकैश्चान्या पयो यास्यति वेगितम् ।
हीनसारा तटाकारा भविष्यति महामते ।१७।
इति श्रुत्वा मुनीनान्तु वचन सैनिकैः सह ।
अहो किमस्या राक्षस्या. स्तनादेका त्विय नदी ।१८

एक स्तन पाययति विकञ्जं पुत्रमादरात् ।
न जानेऽस्या· शरीरस्य प्रमाण कति वा भवेत् ।।१९।।
बल वास्या निशाचर्य्या इत्यूचुर्विस्मयान्विता: ।
कल्कि. परात्मा सन्नह्य सेनाभि सहसा ययौ ।।२०।।

हे प्रभो ! हे कल्के ! इस पयस्विनी नदी की उत्पत्ति के विषय मे कहते है, इसे सुनिये । उस कुथोदरी नाम की राक्षसी के स्तनो स निकला हुआ दूध हिमालय पर्वत से गिरता हुआ नदी रूप मे वह रहा है ।। १६ ।। हे महामते ! सात घडी के पश्चात् इसी प्रकार की एक अन्य पयस्विनी नदी प्रवाहित होगी । इसके पश्चात् यह नदी सूख कर तटाकार मे परिवर्तित हो जायगी ।।१७।। सेना सहित सुशोभित कल्कि जी मुनियो के वचन सुनकर बोले—अहो, कैसे विस्मय का विषय है कि राक्षसी के स्तनो से निर्गत हुए दुग्ध से इतनी बडी नदी उत्पन्न होकर वह रही है ।।१८।। वह अपना एक स्तन अपने पुत्र विकुन्ज को पिला रही है तो इसके देह का परिमाण क्या होगा ? यह किस प्रकार जाना जा सकता है ? ।।१९।। तब सभी आश्चर्य मे भर कर बोल उठे—अहो ! इस राक्षसी मे कितना बल है ? तदनन्तर सेना से सुसज्जित हुए कल्कि जी उस राक्षसी की ओर चल पडे ।।२०।।

मुनिदर्शितमार्गेण यत्रास्ते सा निशाचरी ।
पुत्र स्तन पाययन्ती गिरिमूर्द्धिन घनोपमा ।।२१।।
श्वासवातातिवातेन दूरक्षिप्तवनद्विपा· ।
यस्या कर्णबिलावास प्रसुप्ता: सिहसकुला ।।२२।
पुत्रपौत्रपरिवृता गिरिगह्वरविभ्रमा: ।
केशमूलमुपालम्ब्य हरिणा शेरते चिरम् ।। २३ ।।
यूका इव न च व्यग्रा लुब्धजातङ्कया भृशम् ।
तामालोक्य गिरेर्मूर्ध्नि गिरितत्परमाद्भुताम् ।।२४।।
कल्कि. कमलपत्राक्ष· सर्वास्तानाह सैनिकान् ।
भयोद्विग्नान्बुद्धिहीनान्त्यक्तोद्यमशमपरिच्छदान् ।।२५।।

वे मुनिगण उस मार्ग का दर्शन करने लगे जो राक्षसी के स्थान को जाता था। वहाँ पहुच कर उन्होंने उस मेघाकार राक्षसी को गिरि शिखर पर अपने पुत्र को स्तन-पान कराते हुए देखा ॥२१॥ बन के हाथी उसकी श्वास-वायु के थपेडे खाकर दूर जा गिरते है तथा उसके कानो के छेदो मे सिह पडे सो रहे हैं ॥२२॥ उसके रोम छिद्रो को गिरि-गुहा समझ कर अपने पुत्र पौत्रो से युक्त हरिण गण भी उनमे घुस कर सो रहे हैं ॥२३॥ वहाँ रह कर व्याध के भय से बचे हुए है तथा लीख के समान स्थित है। पर्वत की चोटी पर अन्य पवत के समान स्थित उस राक्षसी को देख कर हत बुद्धि एव भयभीत तथा शस्त्रास्त्र त्याग कर भागने को उद्यत अपने सैनिको से भगवान् कल्कि बोले ॥ २४-२५ ॥

गिरिदुर्गेवन्हिदुर्ग कृत्वा तिष्ठान्तु मामकाः ।
गजाश्वरथयोधा ये समायान्तु मया सह ॥२६॥
अह स्वल्पेन सैन्येन याम्यस्याः समुख शनैः ।
प्रहर्तु बाणसन्दोहैः खड्गशक्तिपरश्वधै, ॥२७॥
इत्युक्त्वास्थाप्य पश्चात्तान्बाणैस्ता समहनद्बली ।
सा क्रुधोत्थाय सहसा ननर्द परमाद्भुतम् ॥२८॥
तेन नादेन महता वित्रस्ताश्चाभवञ्जनाः
निपेतु सैनिका सर्वे मूर्च्छिता धरणीतले ॥२९॥
सा रथाश्च गजाश्चापि विवृतास्या भयानका ।
जघास प्रश्वासवातैः समानीय कुथोदरी ॥ ३०॥

उन्होने कहा—इस पर्वतीय, दुर्ग मे अग्नि दुर्ग बना कर तुम सब यही ठहरो तथा गजारूढ, अश्वारूढ और रथी वीर हमारे साथ आगे बढ़े ॥ २६ ॥ मैं अल्प सेना को साथ लेकर बाणो, तलवारो और फरसो के द्वारा प्रहार करने के लिए अग्रसर होता हूँ ॥२७ ॥ यह कह कर कल्कि जी ने सेना को तो पीछे छोडा और आगे बढ कर रासक्षी पर बाणो से प्रहार करने लगे। यह देख कर राक्षसी ने भी

क्रोध पूर्वक अद्भुत नाद किया ।। २८ ।। उस घोर निनाद को सुन कर सभी भयभीत हो गये तथा सब सेनापति मूच्छित एव धराशायी हो गये ।।२९।। तब वह राक्षसी कुथोदरी अपने भयकर मुख को खोल कर अपने प्रश्वास के द्वारा ही रथ, अश्व, गजादि को खीच-खीच कर हडप करने लगी ।। ३० ।।

सेनागणास्तदुदर प्रविष्टा कल्किना सह ।
यथर्क्षमुखबातेन प्रविशन्ति पिपोलिका: ।।३१।।
तद्दृष्ट्वा देवगन्धर्वा हाहाकार्हं प्रचक्रिरे ।
तत्रस्था मुनय: शेपुर्जेपुश्चान्ये महर्षय ।। ३२।।
निपेतुरन्ये दु खार्त्ता ब्राह्मणा ब्रह्मवादिन ।
रुरुदु शिष्टयोधा ये जहृषुस्तन्निशाचरा ।। ३३ ।।
जगता कदन दृष्ट्वा सस्मारात्मानमात्मना ।
कल्कि: कमलपत्राक्ष: सुरारातिनिषूदन ।। ३४ ।।
बाणाग्नि चेलचर्माभ्या कर्म्मनैर्यानदारुभि, ।
प्रज्वाल्योदरमध्येन करवाल समाददे ।। ३५ ।।

जैसे रीछ के प्रश्वास खीचने से चीटियाँ आकर्षित होकर उसके मुख मे पहुच जाती है, वैसे ही अपनी सेना के सहित भगवान कल्कि उस राक्षसी के मुख मे प्रविष्ट हो गये ।।३१।। यह देख कर सब देवता-गन्धर्व हाहाकार कर उठे, मुनिगण ने उस राक्षसी को शाप दिये और महर्षिगण कल्कि जी की कुशल के निमित्त मन्त्र-जप मे सलग्न हुए ।।३२।। वेदज्ञ ब्राह्मण दु ख से अचेत हो गये, प्रभु-भक्त वीर रोने लगे और राक्षस गण आनन्द मे निमग्न हो गये ।। ३३ ।। देव शत्रुओ के नाशक भगवान कल्कि ने जब सम्पूर्ण विश्व को इस प्रकार दु खी देखा तो वे स्वय अपना ही स्मरण करने लगे ।।३४।। फिर कल्कि जी ने राक्षसी के उस अन्धकार मय उदर मे अपने बाण द्वारा अग्नि उत्पन्न की और चर्म तथा रथ के काष्ठादि के द्वारा उस अग्नि को प्रज्वलित कर हाथ मे तलवार ग्रहण की ।।३५।।

तेन खड्गेन महता दाक्ष्य निर्भिद्य बन्धुभि· ।
बलिभिर्भ्रातृभिर्बाहैर्वृत. शस्त्रास्त्रपाणिभि ॥३६॥
बहिर्बभूव सर्वेश कल्कि. कल्कविनाशन: ।
सहस्राक्षौ यथा वृत्रकुक्षि दम्भोलिनेमिना ॥३७॥
यानिरध्राद्गजरथस्तुरगाश्चाभवनन्बहि: ।
नासिकाकर्णविवरान्कऽपि तस्या विनिर्गता: ॥३८॥
ते निर्गतास्ततस्तस्या सैनिका रुधिरोक्षिता: ।
ता विव्यधुर्निक्षिपन्ती तरसा चरणौ करौ ॥३९॥
ममार सा भिन्नदेहा भिन्नकुक्षिशिरोधरा ।
नादयन्ती दिशो द्यो· ख चूर्णयन्ती च पर्वतान् ॥४०॥

जैसे देवराज इन्द्र वृत्रासुर की कुक्षि को अपने वज्र से भेद कर बाहर आये थे, वैसे ही सर्वेश्वर एव पापो का नाश करने वाले कल्कि-जी ने अपनी वृहद् तलवार से राक्षसी की दक्षिण कुक्षि चीर डाली और अपने शस्त्रास्त्र धारी बाधवो के सहित बाहर निकल आये ॥ ३६-३७ ॥ बहुत से गज, अश्व रथ और पैदल उसके अधो मार्ग मे और बहुत से उसके कानो तथा नासिका छिद्रो से होकर बाहर आ गये । ३८॥ फिर वे रक्त से भीगे हुए वीर गण राक्षसी के देह से बाहर निकल कर, को हाथ-पैर चलाती देख कर बाणो द्वारा उसका वेधन करने लगे ॥३९॥ जब उसके उदर मस्तक तथा अन्यान्य अग छिन्न—भिन्न होने लगे तब उसकी घोर चीत्कार से दशों दिशाएँ गूँज उठी । फिर वह पर्वतो पर गिर कर उन्हे चूर-चूर करती हुई मृत्यु को प्राप्त हुई ॥४०॥

करञ्जोऽपि तथा बीक्ष्य मातरं कातरोऽभवत् ।
स विकञ्ज क्रुधा धावन्सेनामध्ये निरायुध ॥४१॥
गजमालाकुलो वक्षोवाजिराजिविभूषण ।
महासर्पकृतोष्णीष। केसरीमुद्रिताङ्गुलि। ॥४२॥
ममर्द कल्किसेना ता मातुर्ध्वंसनकर्षित: ।
स कल्किरत्त ब्राह्ममस्त्र रामदत्त जिघासया ॥४३॥

धनुषा पञ्चवर्षीय राक्षस शस्त्रमाददे ।
तेनास्त्रेण शिरस्तस्य छित्वा भूमावपातयत् ।।४४।।
रुधिराक्तं धातुचित्र गिरिशृङ्गमिवद्भुतम् ।
सपुत्रा राक्षसी हत्वा मुनीना वचनाद्विभु: ।।४५।।

जब विकज ने अपनी माता की यह दशा देखी तो वह क्रोध से कातर होकर निरस्त्र ही सेना में घुस पडा ।। ४१ ।। उसके हृदय मे हाथियो की माला, सब अ गो मे घोडो के आभूषण, मस्तक पर महा-सर्प का मुकुट और अ गुलियो मे सिहो की मुद्रिकाएँ थी ।। ४२ ।। वह अपनी माता के शोक से व्याकुल होकर कल्किजी की सेना का उत्पीडन करने लगा । तब कल्किजीने उस पाँच वर्ष के राक्षस-बालक को मारने के लिए ब्रह्मास्त्र ग्रहण किया और उससे उसका मस्तक काट कर पृथ्वी पर गिरा दिया ।। ४३-४४ ।। इस प्रकार मुनियो द्वारा निवेदन करने पर कल्किजी ने गेरू आदि से चित्रित किये के समान उस रक्ताक्त पर्वत पर पुत्र सहित राक्षसी को नष्ट कर दिया ।।४५।।

गङ्गातीरे हरिद्वारे निवास समकल्पयत् ।
देवाना कुसुमासारैर्मुनिस्तोत्रै: सुपूजितः ।।४६।।
निनाय ता निशा तत्र कल्कि. परिजनावृतः ।
प्रातर्ददर्श गङ्गायास्तीरे मुनिगणान्बहून् ।
तस्या. स्नानव्याजविष्णोरात्मनो दर्शनाकुलान् ।।४७।।
हरिद्वारे गङ्गातटनिकटपिण्डारकवने ।
वसन्तं श्रीमन्त निजगणवृत त मुनिगणाः ।
स्तवै स्तुत्वा स्तुत्वा विधिवदुदितैर्जह्नुतनयां ।
प्रपश्यत कल्कि मुनिजलगणा द्रष्टुमगमन् ।।४८।।

तदनन्तर उन्होने देवताओ द्वारा पुष्प-वृष्टि और मुनियो के स्तोत्रो से भले प्रकार पूजित होते हुए वहाँ चल कर हरिद्वार मे गङ्गा जी के

पावन तीर पर अपनी सेना सहित निवास किया ।।४६।। अपने परिजनो के सहित कल्किजी ने वह रात्रि वही बिताई और प्रात काल उठने पर गगा स्नान के निमित्त आये हुए मुनिगण उनके दर्शनार्थ आते हुए दिखाई दिये ।।४७ ।। वे हरिद्वार मे गगातट के समीप स्थित पिण्डारक बन मे अपनी सेना के सहित निवास करने लगे । एक दिन, जब वे कलिमल-नाशिनी भगवती जाह्नवी की स्तोत्रो के द्वारा स्तुति कर रहे थे, तभी मुनिगण उनके दर्शनार्थ वहाँ आ ये और विविध शब्दो से युक्त स्तोत्र करने लगे ।। ४८ ।।

तृतीय अध्याय

सुस्वागतान्मुनीन् दृष्ट्वा कल्कि. परम धर्मविम् ।
पूजयित्वा च विधिवत्सुखासीनानुवा चतान् ॥१॥
कयूय सूर्यसङ्काशा मम भाग्यादुपस्थिता: ।
तीर्थाटनोत्सुका लोकत्रयाणामुपकारका: ॥२॥
वय लोके पुण्यवन्तो भाग्यवन्तो यशस्विन: ।
यत कृपाकटाक्षेण युष्माभिरवलोकिता. ॥३॥
ततस्ते वामदेवऽत्रिर्व.सष्ठो गालवो भृगु. ।
पराशरो नारदोऽश्वत्थामा राम: कृपस्त्रित: ॥४॥
दुर्वासा देवल: कण्वो वेदप्रमितिरङ्गिरा: ।
एते चान्ये च बहवी मुनय. सशितव्रता. ॥५॥
कृत्वाग्रे मरुदेवापी च.द्रसूयकुलोद्भवौ ।
राजानौ तौ महावीर्यौ तपस्याभिरतौ चिरम् ॥६॥
ऊचु. प्रहृष्टमनस. कल्कि कल्कविनाशनम् ।
महोदधेस्तीरगत विष्णु सुरगणा यथा ॥७॥

परम धर्मविद कल्किजी ने उन मुनिगण को सुखपूर्वक वहाँ आये हुए देखकर स्वागत, आसन और विधिवत् पूजन करके उनसे बोले ॥१॥ सूर्य के समान अत्यन्त तेजस्वी, तीर्थाटन मे उत्सुक एवं तीनो लोको के कल्याण रूप उपकार की कामना वाले आप कौन हैं? जो मेरे सौभाग्यवश यहाँ पधारे हैं ॥२॥ आपके द्वारा कृपा-कटाक्ष पूर्वक देखे जाने से मैं आज इस लोक मे अपने को पुण्यवान्, भाग्यवान्

और यशवान् ही मानता हूँ ।। ३ । फिर वामदेव, अत्रि, वसिष्ठ, गालव, भृगु, पराशर, नारद, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, त्रित, दुर्वासा, देवल, कण्व, वेद प्रमिति और अ गिरा आदि यह सब तथा अन्यान्य श्रेष्ठ व्रत वाले मुनिगण चन्द्र सूर्यवंश मे उत्पन्न, महा वीर्यवान एव तपोनिष्ठ राजा मरु और देवापि उनको सामने देख कर, जैसे प्रसन्न मनसे देवताओ ने महोदधि के तीर पर भगवान् विष्णु से कहा था, वैसे ही पापो का नाश करने वाले कल्किजी के प्रति बोले ।।४-७ ।।

जयाशेषजगन्नाथ ! विदिताखिलमानस ! ।
सृष्टिस्थितिलयाध्यक्ष ! परमात्मन्प्रसीद नः ।।८।।
कालकर्म्मगुणावास प्रसारितनिजक्रिय ! ।
ब्रह्मादिनुतपादाब्ज ! पद्मानाथ प्रसीद न. ।।९।
इति तेषा वच श्रुत्वा कल्कि· प्राह जगत्पति ।
कावेतौ भवतामग्रे महासत्वौ तपस्विनौ ।।१०।।
कथमत्रागतौ स्तुत्वा गङ्गा मुदितमानसौ ।
का वा स्तुतिस्तु जाह्नव्या युवयोर्नामनी च के ।।११।।
तयोर्मरु· प्रमुदितः कृताञ्जलिपुट· कृती ।
आदावुवाच विनयी निजवशानुकीर्त्तनम् ।।१२।।

मुनियो ने कहा—हे सर्व विजयी जगदीश ! हे सम्पूर्ण विश्व के जीवो के घट-घट के ज्ञाता ! हे सृष्टि स्थिति और प्रलय के स्वामिन् ! हे परमात्मदेव ! प्रसन्न होइये ।।८।। हे पद्मा के पते ! काल, कर्म और गुण के आप ही आश्रय हैं । ब्रह्मादि देवता भी आपके ही चरणारविन्दो की पूजा किया करते हैं । आप हम पर प्रसन्न होइये ।। ९ ।। मुनियो के यह वचन सुन कर कल्किजी ने उनसे कहा—हे मुनियो ! आपके आगे यह महान् बल सम्पन्न एवं तपस्वी कौन हैं ? ।।१०।। गगाजी की स्तुति करके अत्यन्त प्रसन्न हृदय से यह यहाँ क्यो पधारे हैं ? यह किस कारण भगवती जान्हवी की स्तुति मे लगे हैं ? इनके नाम क्या-क्या हैं ? ।।११।। तब वे दोनो मरु देवादि प्रसन्न हृदयसे हाथ

जोड कर बिनय पूर्वक अपने वश का यश-वर्णन करने लगे ॥ १२ ॥

सर्ववेत्सि परात्मापि अन्तर्यामिहृदि स्थिति ।
तवाज्ञया सर्वमेनत्कथयामि श्रृणु प्रभो ।।१३॥
तव नाभेरभूद्ब्रह्मा मरीचिस्तत्सुतोऽभवत् ।
ततो मनुस्तत्सुतोऽभूदिक्ष्वाकु सत्यविक्रम ॥१४॥
युवनाश्व इति ख्यातो मान्धाता तत्सुतोऽभवत् ।
पुरुकुत्सस्तत्सुतोऽभूदनरण्यो महामतिः ॥१५॥
त्रसदस्यु. पिता तस्माद्धर्य्यश्वस्त्वरुणस्नत ।
त्रिशङ्कुस्तत्सुतो धीमान्हरिश्चन्द्र· प्रतापवान् ॥१६॥
हरितस्तत्सुतस्तस्माद्भरुकस्तत्सुतो वृका ।
तत्सुत सगरस्तस्मादसमञ्जास्तोऽशुमान् ॥१७॥

मरु बोले—हे प्रभो ! आप तो अन्तर्यामी एव घट-घट मे निवास करने वाले है, आपको सब कुछ ज्ञात है । मै आपकी आज्ञा के अनुसार सब कहना हूँ, उसे सुनिये ॥१३॥ आपके नाभि कमल से ही ब्रह्मा जो उत्पन्न हुए हैं । ब्रह्मा के पुत्र मरीचि, मरीचि के मनु और मनु के सत्य विक्रम इक्ष्वाकु हुए ।१४॥ इक्ष्वाकु का पुत्र युवनाश्व, युवनाश्व का मान्धाता, मान्धाता का पुरुकुत्स और पुरुकुत्स का पुत्र अनरण्य हुआ ॥१५॥ अनरण्य का त्रसदस्यु, त्रसदस्यु का हर्यश्व, हर्यश्व का अरुण, अरुण का त्रिशकु हुआ तथा त्रिशकु के पुत्र महा-प्रतापी राजा हरिश्चन्द्र हुए ॥ १६॥ राजा हरिश्चन्द्र का पुत्र हरित, हरित का भरुक, भरुक का वृक, वृक का सगर, सगर का असमजा और असमजा का पुत्र अ शुमान हुआ ॥१७॥

ततो दिलीपस्तत्पुत्रो भगीरथ इति स्मृत. ।
येनानीता जान्हवीयं ख्याता भागीरथी भुवि ।
स्तुता नुता पूजितेय तव पादमुसद्भवा ॥१८॥
भगीरथात्सुतस्तस्मान्नाभस्तस्मादभूद्बली ।
सिन्धुद्वीपसुतस्तस्मादायुतायुस्ततोऽभवत् ॥१९॥

ऋतुपर्णस्तत्सुतोऽभूत्सुदासस्तत्सुतोऽभवत् ।
सौदासस्तत्सुतो धीमानश्मकस्तत्सुतो मत ॥२०॥
मूलकात्स दशरथस्तस्मादेडविडस्तत ।
राजा विश्वसहस्तस्मात्खटवाङ्गो दीर्घबाहुक. ॥२१॥
ततो रघुरजस्तस्मात्सुतो दशरथ:कृती ।
तस्माद्रामो हरि. साक्षादाविर्भूतो जगत्पति ॥२२॥

अ शुमान के पुत्र दिलीप, दिलीप के परम प्रसिद्ध पुत्र भगीरथ हुए । वही भगवती जाह्नवी को भूतल पर लाये थे इसी लिए गगा उनके नाम से भागीरथी कहलाई । आपके चरणों से उत्पन्न होने के कारण ही प्राणी इन गगा जी की स्तुति, प्रणाम तथा पूजन करने में तत्पर रहते हैं ॥१८॥ भागीरथ का पुत्र नाभ हुआ । नाभ का महाबली सिन्धुद्वीप और सिन्धुद्वीप का पुत्र आयुतायु हुआ ॥१६॥ अयुतायु का पुत्र ऋतुपर्ण हुआ । ऋतुपर्ण का सुदास, सुदास का सौदास और सौदास का पुत्र मेधावी अश्मक हुआ ॥२० अश्मक से मूलक और मूलक का दशरथ हुआ । दशरथ का एडविड, और एडविड का विश्वसह, विश्वसह का खट्वाग और खट्वाग का पुत्र दीर्घबाहु हुआ था ॥२१॥ दीर्घबाहु के पुत्र रघु हुए, रघु के अज और अज के दशरथ हुए । इन्ही दशरथ के पुत्र रूप मे साक्षात् जगदीश्वर विष्णु ने अवतार लिया ॥२२॥

रामावतारमाकर्ण्य कल्कि परमहर्षित ।
मरु प्राह विस्तरेण श्रीरामचरित वद ॥२३॥
सीतापतेः कर्म वक्तु क· समर्थोऽस्ति भूतले ।
शेष, सहस्रवदनैरपि लालायितो भवेत् ॥२४॥
तथापि शेमुषी मेऽस्ति वर्णयामि तवाज्ञया ।
रामस्य चरित पुण्य पापतापप्रमोचम् ॥२५॥
अजादिविबुधार्थितोऽजनि चतुर्भिरशै. कुले
रवेरजासुतादजो जगति यातुधानक्षय। ।
शिशु. कुशिकजाध्वरक्षयकरक्षयो यो बला-
द्बलीललितकन्धरो जयति जानकीवल्लभः ॥२६॥

रामावतार का प्रसग आने पर भगवान् कल्कि अत्यन्त हर्षित हुए और उन्होने मरु मे कहा कि राम चरित्र का विस्तार सहित वर्णन करिये ।।२३।। मरु बोले–सीतापति श्रीराम के कर्मों का वर्णन करने में समर्थ इस पृथिवी पर कौन है ? क्योकि सहस्रवदन शेष भी उनका यश वर्णन करने मे समर्थ नही है। फिर भी मैं आपकी आज्ञा के कारण भगवान् श्रीराम का पाप-ताप नाशक चरित्र को अपनी बुद्धि के अनुसार कहता हूँ ।।२४-२५ ।। पुराकाल की बात है—ब्रह्मादि देवताओ के द्वारा राक्षसो के विनाशार्थ प्रार्थना किये जाने पर राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न के रूप मे सीतापति भगवान् रामचन्द्र जी ने सूर्यवंश मे अवतार लिया था। अपने शिशु-काल मे ही उन्होने विश्वामित्र जी के यज्ञ मे विघ्न उपस्थित करने वाले राक्षसो का बलपूर्वक सहार किया था।।२६।।

मुनेरनुसहानुजो निखिलशस्त्रविद्यातिगो ।
ययावतिवनप्रभो जनकराजराजत्सभाम् ।।२७।।
विधाय जनमोहनद्युतिमतीव कामद्रुहः ।
प्रचण्डकरचण्डिमा भवनभजने जन्मन. ।।
तम प्रतिमतेजस दशरथात्मज सानुज
मुनेरनु यथा विधे शशिवदादिदेव परम् ।
निरीक्ष्य जनको मुदा क्षितिसुतापति समत
निजोचितपणक्षम मनसि भत्सयन्नाययौ ।।२८।।
स भूपपरिपूजितो जनकजेक्षितैरर्च्चित
करालकठिनं धनु करसोरुहे सहितम् ।
विभज्य बलदृढ जय रघूवद्‌हेत्युच्चकैर्ध्वनि
त्रिजगतीगत परिविधाय रामो वभौ ।।२९।।
ततो जनकभुपतिर्दशरथात्मजेभ्यो ददौ
चतस्र उषतीर्मुदा वरचतुर्भ्य उद्वाहने ।
स्वलङ्कृतनिजात्मजा. पथि ततो बल भार्गव-

अकार उररीनिज रघुपतौ महोग्र त्यजन् ।।३०।।

जिनकी महिमा से कामना पूर्ति वाले ससार मे पुर्नजन्म की प्राप्ति नही होती । वे महाबली, प्रभायुक्त तथा सम्पन्न शस्त्र विद्या-विशारद भगवान श्रीराम ससार को मोहित करने वाला रूप धारण किये हुए, लक्ष्मण और मुनियो के सहित जनक की राज सभा मे गये ।।२७।। ब्रह्माजी के पीछे सुशोभित चन्द्रमा के समान तेज वाले श्री राम अपने भाई लक्ष्मण के सहित मुनिवर विश्वामित्र के पीछे बैठ गये । तब आदि देव जगदीश्वर को देख कर जनक सोचने लगे कि यह सीता के योग्य श्रेष्ठ वर हैं । तब उन्होने अपने द्वारा किये हुए प्रण की कठोरता देख कर अपनी भर्त्सना की और फिर श्री राम के समीप गये ।।२८।। तब राजा जनक से आदर प्राप्त कर तथा सीता जी के कटाक्ष से प्रेम-पूजित होकर श्री राम ने उस घोर धनुष को हाथ मे उठाया और उसके दो टुकडे कर दिये । तब श्रीराम अत्यन्त शोभा को प्राप्त हुए और उनके जय-घोष से तीनो लोक व्याप्त हो गये ।।२९।।

तत. स्वपुरमागतो दशरथस्तु सीतापति
नृप सचिवसयुतो निजविचित्रसिहासने ।
विधातुममलप्रभ परिजनै क्रियाकारिभि.
समुद्यतमति तवा द्रुतमवारयत्केकयी ।।३१।।
ततो गुरुनिदेशतो जनकराजकन्यायुत.
प्रयाणमकरोत्सुधीर्यदनुन: सुमित्रासुत.
वन निजगण त्यजन्गुहगृहे वसन्नादरात्
विसृज्य नृपलाञ्छन रघुपतिर्जटाचीरभृत् ।।३२।।

तब राजा जनक ने अपनी चारो कन्या—सीता, उर्मिला, माण्डवी और श्रुतिकीर्ति सब प्रकार से अलकृत करके दशरथ जी के चारो पुत्र राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न को क्रमश. दान कर दी । विवाह के पश्चात् जब यह सब अयोध्या नगरी के लिए लौट रहे थे, तब मार्ग मे परशुरामजी मिले और उन्होने श्रीरामको अपना अपार बल

दिखाने का निष्फल प्रयत्न किया ।।३०।। फिर महाराज दशरथने अयोध्या पहुँच कर अपने मन्त्रियो के परामर्श से सीतापति राम को अयोध्या के राज्य सिंहासन पर अभिषिक्त करने का विचार किया । अभिषेक के लिए सम्पूर्ण सामग्री एकत्र होकर जब पूर्ण तैयारी हो गई, तब श्रीराम का अभिषेक करने मे तत्पर राजा दशरथ को कैकेयी ने वरदान माँग कर रोक दिया ।। ३१ ।। तब महाराज की आज्ञा सुन कर जनक सुता और सुमित्रा पुत्र-लक्ष्मण सहित श्रीराम वन मे गये । साथ चलते हुए पुरवासियो को आगे चल कर छोड दिया तथा गुह के घर मे जाकर राजकीय वस्त्राभूषणो का परित्याग कर जटावल्कल धारण कर लिया ।।३२।।

प्रियानुजयुतस्ततो मुनिमतो वने पूजित:
स पञ्चवटिकाश्रमे भरतमातुर सगतम् ।
निवार्य मरण पितु समवधार्य दु खातुर-
स्तपोवनगतोऽवसद्रघुपतिस्ततस्ता समा: ।।३३।।
दशाननमहोदरा विषमबाणवेधातुरां-
समीक्ष्य वररूपिणी प्रहसती सती सुन्दरीम् ।
निजाश्रयमभीप्सती जनकजापतिर्लक्ष्मणा-
त्करालकरवालत समकरोद्विरूपा तत ।।३४।।
समाप्य पथि दानव खरशरै शनैर्नाशयन्
चतुर्दशसहस्रक समहनन्खर सानुगम् ।
दशाननवशानुग कनकचारुच्छन्मृग •
प्रियाप्रियकरो वने समवधीद्बलाद्राक्षसम् ।।३५।।

सीता जी और लक्ष्मण जी के साथ मुनिवेश धारी श्री राम पूजा-सम्पन्न होकर विविध मे वनो निवास करने लगे । इसके पश्चात् कातरता पूर्वक भरतजी वहाँ आये । उनसे पिता का मरण सुन कर श्रीराम को बडा दु ख हुआ और भरत जी को समझा कर लौटा दिया और तपोवन मे रहने लगे ।।३३।। फिर कामबाण से बिद्ध

सुन्दर रूप वाली, हास्ययवदना, वर की कामना करती हुई रावण की बहिन शूर्पणखा को आते देख कर लक्ष्मण जी को सकेत किया, जिसके अनुसार लक्ष्मण जी ने तीक्ष्ण तलवार से उस राक्षसी का रूप भ्रष्ट कर दिया ।।३४।। फिर उन्होने मार्ग मे एक दानव का मार कर, चौदह हजार सेना के अधिपति एव रावण के अनुगामी खरदूषण को सेना सहित नष्ट कर दिया । फिर सीता जी की इच्छा से स्वर्ण-मृग रूपी राक्षस को मार डाला ।।३५।।

ततो दशमुखस्त्थरस्तमभिवीक्ष्य राम रुषा
व्रजन्तमनुलक्ष्मण जनकजा जहाराश्रमे ।
ततो रघुपति· प्रिया दलकुटीरसस्थापिता
न वोक्ष्य तु विमूर्च्छितो वह विलप्य सीतेति ताम् ।।३६।।
वने निजगणाश्रमे नगतले जले पल्वले
विचित्य पतित खग पथि ददर्श सौमित्रिणा ।
जटायुवचनात्ततो दशमुखाहृता जानकी
विविच्य कृतवान्मृते पितरि वह्निकृत्य प्रभु ।।३७।।
प्रियाविरहकातराऽनुजपुर सरो राघवो
धनुर्धरन्धरो हरिबल नवालापिनम् ।
ददर्श ऋषभाचलाद्रविजवालिराजानुज-
प्रिय पवननन्दनं परिणत हित प्रेषितम् ।।३८।।

फिर राम लक्ष्मण को गया हुआ देख कर रावण ने उनके आश्रम से अकेली सीताजी का हरण कर लिया । तदनन्तर श्रीराम ने वहाँ आकर जब सीता को न देखा, तब वे 'हा सीते' 'हा सीते' आदि शोक युक्त शब्दो मे विलाप करते हुए मूर्च्छा को प्राप्त हो गये ।। ३६ ।। फिर वे ऋषियो के आश्रम, पर्वतो की गुफा, जल और स्थल आदि विविध स्थानो मे सीताजी को ढूढने लगे । आगे चलने पर उन्हें मार्ग मे जटायु पडा मिला । उससे उन्हे सीता हरण का समाचार प्राप्त हुआ । जटायु के मरने पर उन्होंने अपने पिता के समान उसका

मृतक संस्कार किया ॥३७॥ सीताजी के वियोग से व्याकुल हुए धनुर्धरो मे श्रेष्ठ श्रीराम लक्ष्मण के सहित नव-परिचय प्राप्त बानर सेना मे मिले और उनकी सूर्य पुत्र बालि के छोटे भाई सुग्रीव द्वारा भेजे हुए उसके मत्री हनुमान से भेट हुई ॥३८॥

ततस्तदुदितं मत पवनपुत्रसुग्रीवयो-
स्तृणाधिपतिभेदन निजनृपासनस्थापितम् ।
विविच्य व्यवसायकैर्निजसखाप्रिय बालिनम्
निहत्य हरिभूपति निजसख स रामोऽकरोत् ॥३९॥
अथोत्तरमिमा हरिजनकजा समन्वेषयन्
जटायुसहजोदितैर्जलनिधि तरन्वायुजः ।
दशाननपुर विशञ्जनकजा समानन्दय
न्नशोकवनिकाश्रमे रघुपति पुन प्राययौ ॥४०॥
ततो हनुमता बलादमितरक्षसा नाशन
ज्वलज्ज्वलनसकुलज्वलितदग्धलङ्कापुरम् ।
विविच्य रघुनायको जलनिधि रुषा शोषयन्
ववन्ध हरियूथप. परिवृतो नगैरीश्वर ॥
बभञ्ज पुरपत्तन विविधसर्न्गदुर्गक्षमम्
निशाचरपते. क्रुधा रघुपति' कृती सद्गति ॥४१॥

फिर सुग्रीव और हनुमान की प्रार्थना पर उन्होने ताल के सात वृक्षो को काट गिराया और बालि का वध करके सुग्रीव को बानरो का राजा बना कर उससे मित्रता स्थापित की ॥३९॥ फिर पवनसुत हनुमान सीता की खोज मे गये और सपाति की प्रेरणा पर लकापुरी मे स्थित अशोक वाटिका पहुँच कर उन्होने सीताजी को राम-सदेश से आनन्दित किया और रामचन्द्रजी के पास लौट आये ॥ ४० ॥ फिर श्रीरामचन्द्र ने हनुमानजी के द्वारा अनेको राक्षसो का मारा जाना और लका का जलाया जाना सुना तो वे शिलाओ द्वारा समुद्र पर सेतु बाँध

कर बानरो के सहित लकापुरी जा पहुचे और रावण के पुर की प्राचीर आदि को उन्होने नष्ट कर डाला ॥४१॥

ततोऽनुजयुतो युधि प्रबलचण्डकोदण्डभृत्
शरै खरतरै क्रुधा गजरथाश्वहृसाकुल ।
करालकरवालत प्रबलकालजिह्वाग्रतो
निहत्य वरराक्षमान्नरपतिर्बभौ सानुग· ॥४२॥

जघान घनघोषगणानुगगणैरसृक् प्राशनै· ।
ततोऽतिबलवानरैर्गिरिमहीरुहोद्यत्करै
करालतरताडनैर्जनकजारुषा नाशिनान् ।
निजघ्नुरमरार्दनानतिबलान्दशास्यानुगान्
नलाङ्गदहरीश्वराऽशुगसुतर्क्षराजादय: ॥४३॥

ततोऽतिबललक्ष्मणाब्दशनाथशत्रु रणे
प्रहस्त विकटादिकानपि निशाचरान्मङ्गनान्
निकुम्भ मकराक्षकोन्निशितखड्ग पातै· क्रुधा ॥४४॥

फिर लक्ष्मण के सहित श्रीराम ने अत्यन्त उग्र बाणो को धारण किया और गज, अश्व तथा रथादि से युक्त होकर तीक्ष्ण बाणो और विकराल असि से अनेक राक्षसो का नाश करके कराल काल की जिह्वा के अग्र भाग के समान अपने अनुगामियो सहित शोभा पाने लगे ॥४२॥ फिर सुग्रीव, पवनसुत हनुमान, नल, नील, अगद और जामवन्त आदि परम पराक्रमी बानरो ने वृक्ष और पर्वत शिलाएँ उखाड कर उनके प्रहार से देव-शत्रु महाबली रावण के उन सेवको को, जो सीताजी के क्रोध से पहिले ही मरे के समान हो रहे थे, नष्ट कर दिया ॥४३॥ महाबली लक्ष्मण ने अत्यन्त घोर शब्द करने वाले रुधिरपायी राक्षसो से समन्वित इन्द्रजित मेघनाद को मार डाला। फिर क्रोध पूर्वक उन्होने निकुम्भ, मकराक्ष और विकटादि नामक बली निशाचरो का भी सहार कर दिया ॥४४॥

ततो दशमुखो रणे गजरथाश्वपत्तीश्वरै-
रलङ्घ्यगुणकोटिभि परिवृतो युयोधायुधैः ।
कपीश्वरचमूपते पतिमनन्तदिव्यायुध
रघूद्वहमनिन्दित सपदि सङ्गतो दुर्जय ॥४५॥
दशाननमरि ततो विधिवरस्मयावर्द्धितम्
महाबलपराक्रम गिरिमिवाचल सयुगे ।
जघान रघुनायको निशितसायकैरुद्धतम्
निशाचरचमूपति प्रबलकुम्भकर्ण ततः ॥४६॥
तयोः खरतरै शरैर्गगनमच्छमाच्छादित
बभौ घनघटासम मुखरमत्तडिद्वह्निभिः ।
धनुर्गुणमहाशनिध्वनिभिरावृत भूतल
भयङ्करनिरन्तर रघुपतेश्च रक्ष. पतेः ॥४७॥

फिर रावण अपने करोडो गज, रथ, अश्व युक्त तथा पदाति सैनिको के सहित रणभूमि मे उपस्थित हुआ और उसने कपीश्वर सुग्रीव के भी स्वामी दिव्यायुध धारी श्रीराम से घोर सग्राम किया ॥४५॥ तब रघुनायक श्रीराम ने ब्रह्माजी के वर से प्रबल हुए महा पराक्रमी और युद्ध क्षेत्र मे पर्वत के समान अडिग रहने वाले राक्षसपति रावण और उसके भाई कुम्भकर्ण को अपने बाणो से रुद्ध कर दिया ॥४६॥ फिर राम-रावण के उस युद्ध मे तीक्ष्ण बाणो से गगन मडल उसी प्रकार आच्छादित हो गया, जिस प्रकार मेघो की घटा से हो जाता है । बाणो के परस्पर टकराने से जो शब्द युक्त अग्नि की चिंगारियाँ निकलती थी, वह ऐसी प्रतीत होती थी, जैसे गर्जन करती हुई बिजली चमक उठती है । विद्युत-गर्जन के समान धनुष की टकार से व्याप्त हुई रणभूमि अत्यन्त भयानक लगने लगी ॥४७॥

ततो धरणिजारुषा विविधरामबाणौजसा
पपात भुवि राणस्त्रिदशनाथविद्रावण. ।
ततोऽतिकुतुकी हरिर्ज्वलनरक्षिता जानकी

समर्प्य रघुपुङ्गवे निजपुरी ययौ हर्षितः ।।४८।।
पुरन्दरकथादर सपदि तत्र रक्ष पतिम् ।
बिभीषणमभीषण समकरोत्ततो राघव. ।।४६।।
हरोश्वरगणावृतोऽवनिसुतायुत सानुजा
रथे शिवसखेरिते सुविमले लसत्पुष्पके ।
मुनीश्वरगणार्चितो रघुपतिस्त्वयोध्या ययौ
विविच्य मुमिलाञ्छन गुहगृहेऽतिसख्य स्मरन् ।।५०।।

फिर इन्द्र को त्रस्त करने वाला रावण जानकी जी के क्रोध से व्याप्त एव श्रीराम के अस्त्रानल से दग्ध होकर धराशायी हो गया । रावण की मृत्यु हो जाने पर वानर श्रेष्ठ हनुमान जानकीजी को शुद्ध करके लाये और उन्हे श्रीराम को समर्पित कर दिया । फिर प्रसन्न चित्त से अपने स्थान को गये ।।४८।। फिर देवराज के कहने से श्रीराम ने रावण के भाई विभीषण को राक्षसो के राज्य पर अभिषिक्त किया ।।४६।। फिर भगवान् रामचन्द्र जी वानर आदि तथा सीताजी और लक्ष्मण को साथ लेकर अत्यन्त सुशोभित पुष्पक यान पर चढ कर अयोध्या नगरी के लिए चले । मार्ग मे चलते हुए जब मध्य वन मे पहुँचे तब उन्हे अपने मुनिवेश और गुह के गृह तथा उसकी मित्रता का स्मरण हुआ । तभी मुनियो ने उनके समीप आकर उनका पूजन किया ।। ५० ।।

ततो निजगणावृतो भरतमातुर सान्त्वयन्
स्वमातृगणवाक्यत: पितृनिजासने भूपति ।
वसिष्ठमुनिपुङ्गवै कृतानिजाभिषेको विभु·
समस्त जनपालक. सुरपतिर्यथा सवभौ ।।५१।।
नरा बहुधनाकरा द्विजवरास्तपस्तत्परा:
स्वधर्म्मकृतनिश्चया: स्वजनसङ्गता निर्भया· ।
घना: सुबहुवर्षिणो वसुमती सदा हर्षिता
भवत्यतिबले नृपे रघुपतावभूत्सज्जगत् ।।५२।।

गतायुतसमाः प्रियैर्निजगणै प्रजा रञ्जयन्
निजा रघुपतिः प्रिया निजमनोभवैर्मोहयन् ।
मुनीन्द्रगणसयुतोऽप्ययजदादिदेवान्मखै-
र्घनैर्विपुलदक्षिणैरतुलवाजिमेधैस्त्रिभि ।।५३।।

फिर अपने जनो से आवृत्त होकर दुःख से कातर हुए भरतजी को सान्त्वना दी और माताओ की आज्ञा से अपने पिता के राज्य सिंहासन पर अभिषिक्त हुए । उस समय वसिष्ठ आदि महर्षियो ने उनका अभिषेक किया और तब वे लोको के स्वामी श्रीराम इन्द्र के समान शोभा पाने लगे ।।५१।। फिर प्रजाजन धन से सम्पन्न हो गए, द्विजवर तपस्या मे मग्न रहने लगे । सभी परस्पर प्रेम-भाव पूर्वक भय-रहित चित्त से रहते हुए अपने-अपने धर्म मे तत्पर हो गए । मेघो द्वारा समय पर वृष्टि होने से पृथिवी मुदित हो गई । इस प्रकार अत्यन्त पराक्रमी श्रीराम के राज्य को प्राप्त होने से सम्पूर्ण विश्व सत्पथ का अनुगामी हो गया । ५२।। भगवान् श्रीराम अपने गुणो से प्रजा को प्रसन्न रखने और अपनी प्राणप्रिया सीताजी के मन को भी आनन्दित करने लगे । उन्होने महर्षियो के सहयोग से बहुत प्रकार की दक्षिणा और दान-यज्ञादि के द्वारा देवताओ को प्रसन्न करते हुए तीन अश्वमेध यज्ञ निर्विघ्न रूप से पूर्ण किये । इस प्रकार उन्होने दस हजार वर्ष तक राज्य किया ।५३।

ततः किमपि कारणं मनसि भावयन्भूपति-
र्जहौ जनकजां वने रघुवरस्तदा निर्घृणः ।
ततो निजमतं स्मरन्समनयत्प्रचेतः सुतो
निजाश्रममुदारधीरघुपतेः प्रियां दुःखिताम् ।।५४।।
ततः कुशलवौ सुतौ प्रसुषुवे धरित्रीसुता
महाबलपराक्रमौ रघुपतेर्यशोगायनौ ।
स तामपि सुतान्वितां मुनिवरस्तु रामान्तिके
समर्पयदनिन्दितां सुरवरैः सदा वन्दिताम् ।।५५।।

ततो रघुपतिस्तु ता सुतयुता रुदन्ती पुरो
जगाद दहने पुन प्रविश शोधनायात्मन. ।
इतीरितमवेक्ष्य सा रघुपते पदाब्जे नता
विवेश जनीयुता मणिगणोज्वल भूतलम् ।।५६।।

फिर किसी कारण वश श्रीराम को अपना हृदय कठोर करना पडा और उन्होने जानकीजी को परित्याग का वन मे पहुँचा दिया । तब महर्षि बाल्मीकि अपने द्वारा रचित रामायण का स्मरण करके दु खित चित्त होते हुए जानकीजी का अपने आश्रम मे लिवा लाये ।।५४।। फिर जानकीजी के कुश और लव नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए । इन दोनो राज पुत्रो ने श्रीराम के समीप पहुच कर उनका यश गाया । फिर महर्षि वाल्मीकि ने अनिन्दित एव देव-पूजिता जानकीजी को इन दोनो पुत्रो के सहित श्रीराम को समर्पित कर दिया ।।५५।। दोनो पुत्रो के सहित रोती हुई जानकी को अपने सामने खडी देख कर श्रीराम उनसे बोले—सीते ! तुम अपनी शुद्धि के लिये पुन: अग्नि-प्रवेश करो । उनके यह वचन सुन कर जानकीजी ने उनके चरणारविन्दो मे प्रणाम किया और अपनी माता पृथिवी के साथ पाताल मे प्रविष्ट हो गई ।।५६।।

निरीक्ष्य रघुनायको जनकजाप्रयाण स्मरन्
वसिष्ठगुरुयोगतोऽनुजयुतोऽगमत्स्व पदम् ।
पुर.स्थितजन.स्वकै पशुभिरीश्वर सस्पृशन्
मुदा सरयुजीवन रथवरै परीतो विभु: ।।५७।।

ये श्रृण्वन्ति रघूद्वहस्य चरित कर्णामृत सादरात्
ससारार्णवशोषणञ्च पठतामामोदद मोक्षदम् ।
रोगाणामिह शान्तये धनजनस्वर्गादिसम्पत्तये
वशानामपि वृद्धये प्रभवति श्रीश: परेश प्रभु: ।।५८।।

जानकीजी को इस प्रकार पाताल में गई देख कर रामचन्द्र भी उनका स्मरण करते हुए अपने गुरु वसिष्ठ, अनुजगण तथा परिजनो

और पशुओं के साथ सरयू तट पर गये और प्रसन्न हृदय से जल का स्पर्श करके दिव्य विमान में आरूढ होकर अपने लोक को गये ।।५७।। कानों के लिए अमृत के समान इस राम चरितामृत को जो आदर सहित सुनेंगे उनकी सभी बाधाएँ श्रीराम-कृपा के दूर हो जायेंगी । रोग नष्ट होंगे, वंश-वृद्धि, धन-जन की समृद्धि और स्वर्ग रूप ऐश्वर्य की प्राप्ति होगी । जो इसका पाठ करेंगे, उनके लिए यह संसार-सागर शुष्क होकर अत्यन्त आनन्द तथा मोक्ष-रूप परम पुरुषार्थ की प्राप्ति होगी ।।५८।।

चतुर्थ अध्याय

रामात्कुशोऽभूदतिथिस्ततोऽभून्निषधान्नभ ।
तस्मादभूत्पुण्डरीक' क्षेमधन्वाऽभवत्तत ।१।
देवानीकस्ततो हीन' परिपात्रोऽथ हीनत ।
बलाहकस्ततोऽर्कश्च रजनाभस्ततोऽभवत ।२।
खगणाद्विधृतस्तस्माद्धिरण्यनाभसञ्ज्ञित' ।
तत पुष्पाद्ध्रुवस्तस्मात्स्यन्दनोऽथा ग्नवर्णक. ।३।
तस्माच्छीघ्रोऽभवत्पुत्र पिता मेऽतुलविक्रम. ।
तस्मान्मरु मां केऽपीह बुधञ्चापि सुमित्रकम् ।४।
कलापग्राममासाद्य विद्धि सत्तपसि स्थितम् ।
तवावतार विज्ञाय व्यासात्सत्यवतीसुतात् ।
प्रतीक्ष्य काल लक्षाब्द कले प्राप्तस्तवान्तिकम् ।
जन्मकोट्यघसा राशेर्नाशन धर्मशासनम् ।
वश'कीर्तिकर सर्वकामपूर परात्मन ।६।

उन श्रीराम के पुत्र कुश हुए। कुश के अतिथि, अतिथि के निषध, निषध के नभ, नभ के पुण्डरीक और पुण्डरीक के पुत्र क्षेमधन्वा हुए ।।१।। क्षेमधन्वा के पुत्र देवानीक, देवानीक के हीन, हीन के परिपात्र, परिपात्र के बलाहक, बलाहक के अर्क और अर्क के पुत्र रजनाभ हुए ।। २।। रजनाभ के खगण, खगण के विधृत, विधृत के हिरण्यनाभ, हिरण्यनाभ के पुष्प, पुष्प ध्रुव, के ध्रुव के स्यन्दन और स्यन्दन के पुत्र

अग्निवर्ण हुए ।३।। अग्निवर्ण के पुत्र शीघ्र हुए, वे अत्यन्त विक्रम वाले ही मेरे पिता थे। मै उन्ही शीघ्र का पुत्र मरु हूँ। कुछ लोग मुझे बुध और कुछ सुमित्र कहते है ।।४।। अब तक मैं कलाप ग्राम मे निवास करता हुआ तपस्या मे रत था। सत्यवती सूनु व्यास जी के मुख मे मुझे आपके अवतार का प्रसग ज्ञात हुआ और तब मै कलियुग की एक लाख वर्ष तक प्रतीक्षा करने पश्चात् आपके समीप उपस्थित हुआ हूँ। क्योंकि आप परमात्मा का सामीप्य प्राप्त होने से करोडो जन्मो के पापो का नाश हो जाता है तथा धर्म-यश की वृद्धि और सभी कामनाओ की पूर्ति होती है ।।५-६।।

ज्ञातस्तवान्वयस्त्वच सूर्यवशसमुद्भवः ।
द्वितोय कोऽपर श्रीमान्महापुरुषलक्षण ।७।
इति कल्किवच, श्रुत्वा देवापिर्मधुराक्षराम् ।
वाणी विनयसम्पन्न. प्रवक्तुमुपचक्रमे ।८।
प्रलयान्ते नाभिपद्मात्तवाभूच्चतुरानन ।
तदोयतनयादत्रेश्चन्द्रस्तस्मात्ततो बुध. ।९।
तस्मात्पुरूरवा जज्ञे ययातिर्नाहुषस्तत. .
देवयान्या ययातिस्तु यदु तुर्वसुमेव च ।१०।
शर्मिष्ठाद्दा द्रुह्युं चानु पूरुञ्च सतते ।
जनयामास भूतादिर्भूतानाव सिसृक्षया ।११।
पूरोर्जन्मेजयस्तस्मात्प्रचिन्वानभवत्तत ।
प्रवीरस्तन्मनस्युर्वै तस्माच्चाभयदोऽभवत् ।१२।
उरुक्षयाच्च त्र्यरुणिस्ततोऽभूत्पुष्करारुणिः ।
बृहत्क्षेत्रादभूद्धस्ती यन्नाम्ना हस्तिनापुरम् ।१३।

कल्कि बोले—तुम्हारी वशावली सुनकर मैं यह जान गया कि तुम सूर्यवश मे उत्पन्न हुए हो। परन्तु तुम्हारे साथ यह महापुरुषो के लक्षणो से सम्पन्न एव श्रीमान् पुरुष दूसरे कौन हैं ? ।।७।। यह सुन कर देवापि ने विनय पूर्ण मधुर वाणी से निवेदन किया। वे बोले—

हे प्रभो ! प्रलय का अन्त होने पर आपके नाभिकमल से ब्रह्माजी की उत्पत्ति हुई थी । उन ब्रह्माजी के पुत्र अत्रि हुए । अत्रि के चन्द्रमा, चन्द्रमा के बुध, बुध के पुरूरवा, पुरूरबा के नहुष और नहुष के पुत्र ययाति हुए । उन ययाति ने अपनी पत्नी देवयानी के गर्भ से यदु और तुर्वंस नामक दो पुत्रो को जन्म दिया ।।९–१०।। हे सत्पते ! उन्ही ययाति ने शर्मिष्ठा नाम को पत्नी से द्रह्यु अनु और पुरु नामक तीन पुत्र उत्पन्न किये । जैसे सृष्टिकाल मे भूतादि के द्वारा पचभूतो की उत्पत्ति होती है, वैसे ही ययाति से इन पाँच पुत्रो की उत्पत्ति हुई ।।११।। पुरु का पुत्र जन्मेजय हुआ, जन्मेजय के प्रचिन्वान्, प्रचिन्वान् के प्रवीर, प्रवीर के मनस्यु, मनस्यु के अभयदा अभयदा के उरुक्षय उनके त्र्यरुणि, त्र्यरुणि के पुष्करारुणि, पुष्करारुणि के बृहत्क्षेत्र और बृहत्क्षेत्र, के पुत्र हस्ती हुए । इन हस्ती नामक राजा के नाम पर ही हस्तिनापुर नामक नगर की स्थापना हुई ।।१२–१३।।

अजमीढोऽहिमीढश्च पुरुमीढस्तु तत्सुता, ।
कजमीढादभूदृक्षस्तस्मात्सवरणात्कुरु ।१४।
कुरो. परिक्षित्सुधनुर्जन्हुर्निषध एव च ।
सुहोत्रोऽभूत्सुधनुषश्चवनाच्च तत कृती ।१५।
ततो बृहद्रथस्तस्मात्कुशाग्राद्दषभोऽभवत् ।
तत सत्यजितः पुत्र पुष्पवान्नहुषस्तत ।१४।
बृहद्रथान्यभार्य्यायां जरासन्ध परन्तप ।
सहदेवस्ततस्मान्सोमापिर्यच्छ्रु तश्रवा ।१७।
सुरथाद्विदूरथस्तस्मात्सार्वभौमोऽभवत्तत ।
जयसेनाद्रथानीकोऽभूद्यु तायुश्च कोपनः ।१८।

हस्ती के तीन पुत्र हुए । उनके नाम अजमीढ, अहिमीढ और पुरुमीढ हुए । अजमीढ़ के पुत्र ऋक्ष, ऋक्ष के सवरण और सवरण के पुत्र कुरु हुए ।१४। कुरु के पुत्र परीक्षित, परीक्षित के सुधनु, जन्हु और निषध—यह तीन पुत्र हुए । सुधनु के पुत्र सुहोत्र और सुहोत्र के पुत्र

च्यवन हुए ।१५। च्यवन के बृहद्रथ बृहद्रथ के कुशाग्र, कुशाग्र के ऋषभ, ऋषभ के सत्यजीत, सत्यजीत के पुष्पवान तथा पुष्पवान् के पुत्र नहुष हुए ।१६। बृहद्रथ की द्वितीय पत्नी के गर्भ से शत्रु पीडक जरासन्ध हुए। जरासन्ध के सहदेव, सहदेव के सोमापि और सोमापि के पुत्र श्रुतश्रवा हुए ।१७। श्रुतश्रवा के पुत्र सुरथ हुए। सुरथ के विदूरथ, विदूरथ के सार्वभौम, सार्वभौम के जयसेन, जयसेन के रथानीक और रथानीक के पुत्र क्रोधी स्वभाव के युतायु हुए ।१८।

तस्माद्देवातिथिस्तस्माद्दक्षरतस्माद्दिलीपकः ।
तस्मात्प्रतीपकस्तस्य देवापिरहमोश्वर ! ।१९।
राज्य शान्तनवे दत्वा तपस्येकधिया चिरम् ।
कलापग्राममासाद्य त्वा दिदृक्षुरिहागत ।२०।
मरुणाऽनेन मुनिभिरेभिः प्राप्य पदाम्बुजम् ।
तव कालकरालास्याद्यास्याम्यात्मवता पदम् ।२१।
तयोरेव वच श्रुत्वा कल्कि; कमललोचनः ।
प्रहस्य मरुदेवापी समाश्वास्य समब्रवीत् ।२२।
युवा परमधर्म्मज्ञौ राजानौ विदितावुभौ ।
मदादेशकरौ भूत्वा निजराज्यं भरिष्यथ. ।२३।

युतायु के पुत्र देवातिथि हुए। देवातिथि के ऋक्ष, ऋक्ष के दिलीप और दिलीप के पुत्र प्रतीपक हुए। हे प्रभो! मैं उन्ही प्रतीपक का पुत्र देवापि हूँ ।१९। मैंने शान्तनु को अपने राज्य पर आसीन किया और स्वय कलाप ग्राम मे रह कर एकचित्त हो तपस्या करता था। अब आपके दर्शन की कामना से ही यहाँ उपस्थित हुआ हूँ ।२०। मैंने मरु और मुनिवरो के सहित यहाँ आकर आपके चरणारबिन्द को प्राप्त किया है। इसके फल स्वरूप मैं काल के कराल गाल मे गिरने से बच गया, आत्म तत्वज्ञो का पद हमे मिल जायगा ।२१। मरु और देवापि की बातो को सुन कर पद्माक्ष कल्किजी अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होने आश्वासन भरे शब्दो मे उनसे कहा। कल्कि बोले—मैं जान गया कि

आप दोनो परम धर्मज्ञ राजा हैं। इस समय आप मेरे आदेश को मान कर राज्य ग्रहण कर उसका परिपालन करो।२२-२३।

मरो त्वामभिषेक्ष्यामि निजयोध्यापुरेऽधुना।
हत्वा म्लेच्छानधर्मिष्ठान्प्रजाभूतविहिंसकान् ।२४।
देवापे तव राज्ये त्वा हस्तिनापुरपत्तने।
अभिषेक्ष्यामि राजये हत्वा पुक्कसकान्रणे।२५।
मथुरायामहं स्थित्वा हरिष्यामि तु वा भयम्।
शय्याकर्णानुष्ट्रमुखानेकजङ्घान्विनोदरान् ।२६।
हत्वा कृत युग कृत्वा पालयिष्याम्यहं प्रजा.।
तपोवेश व्रत त्यक्त्वा समारुह्य रथोत्तमम् ।२७।
युवा शस्त्रास्त्रकुशलौ सेनागणपरिच्छदौ।
भूत्वा महारथौ लोके मया सह चरिष्यथ: ।२८।

हे मरो ! अब मैं प्रजाओ का पीडन करने वाले, जीव-हिंसक अधर्मी म्लेच्छो का सहार करके आपको अपनी राजधानी अयोध्या मे अभिषिक्त करूँगा।२४। हे देवापे ! हे राजर्षे ! युद्ध क्षेत्र मे पुक्कसो को मार कर मैं आपकी राजधानी हस्तिनापुर के राज्य पर आपको अभिषिक्त करूँगा।२५। मैं मथुरा नगरी मे निवास करता हुआ तुम्हारे भय को नष्ट करूँगा तथा शय्याकरण, उष्ट्रमुख और एकजघ आदि को मार कर सत्युग की स्थापना और प्रजा की रक्षा करूँगा। तुम अभी इस तपस्वी वेश का त्यागन करो और श्रेष्ठ रथ पर आरोहण करो।२६-२७। तुम सभी शस्त्रास्त्र विद्या मे पारगत एव महारथी हो, अत. हमारे साथ ही विचरण करो।२८।

विशाखयूपभूपालस्त्तया भिनयान्विताम्।
विवाहे रुचिरापाङ्गी सुन्दपी त्वा प्रदास्यति।२९।
साधो भूपाल लोकाना स्वस्तये कुरु मे वच:।
रुचिराश्वसुता शान्ता देवापे त्वं समुद्वह।३०।
इत्याश्वासकथा कल्के. श्रुत्वा तौ मुनिभि सह।
विस्मयाविष्टहृदयौ मेनाते हरिमीश्वरम् ।३१।
इति ब्रुवत्यभयदे आकाशात्सूर्यसन्निभौ।

रथौ नानमणिव्रातघटितौ कामगौ पुर. ।
समायातौ ज्वलद्दिव्यशस्त्रास्त्रैः परिवारितौ ।३२।
ददृशुस्ते सदो मध्ये विश्वमर्म्मविनिर्मितौ ।
भूपा मुनिगणा सभ्या सहर्षा किमितीरिता ।३३।

हे मरो ! विशाखयूप नरेश अपनी परम शीलवती तथा रुचिरागी कन्या को तुम्हे विवाह देगा। अत तुम ससार का कल्याण करने के उद्देश्य से मेरे वचनो का पालन करो। हे देवापे ! तुम भी रुचिराश्व की शान्त नाम्नी सुपुत्री से विवाह कर लो ॥३०॥ कल्किजी के यह आश्वासन युक्त वचन सुन कर मुनियो के सहित देवापि अत्यन्त विस्मित हुए और फिर सन्देह छोड कर यह विश्वास करने लगे कि कल्कि ही भगवान् विष्णु एव साक्षात् ईश्वर हैं ॥३१॥ कल्किजी ने जैसे ही यह अभयप्रद वचन कहे वैसे ही आकाश मार्ग से स्वच्छा पूर्वक चलने वाले अनेक रत्नादि से निर्मित दो रथ अवतीर्ण हुए। सूर्य के समान तेजोमय उन रथो मे उज्ज्वल दिव्य शस्त्रास्त्र भरे हुए थे ॥३२॥ उस समय उपस्थित सभी मुनिगण और राजागण विश्वकर्मा द्वारा निर्मित रथो को उतरे हुए देख कर 'यह क्या' —'यह क्या' कहते हुए विस्मय एव हर्ष प्रकट करने लगे ॥३३॥

युवामादित्यसोमेन्द्रयमवैश्रवणाङ्गजौ ।
राजानौ लोकरक्षार्थमाविर्भतौ विदन्त्यमी ।३४।
कालेनाच्छादिताकारौ मय सङ्गादिहोदितो ।
युशा रथावारुहतॉं शकदत्त ममाज्ञया ।३५।
एव वदति विश्वेशे पद्मनाथे सनातने ।
देवा ववर्षु कुसुमैस्तुष्टुवुर्मुनयोऽग्रतः ।३६।
गङ्गावारिपरिक्लिन्नशिरोभूतिपरागवान् ।
शगे पर्व्वतजासङ्गशिववत्पवनो ववौ ।३७।
तत्रायातः प्रमुदिततनुस्तप्तचामीकराभो
धर्म्मावासः सुरुचिरजटाचीरभृद्दण्डहस्तः

लोकातीतो निजतनुमरुन्नाशिताऽधर्म्मसंघ-
स्तेजोराशि सनकसदृशो मस्करी पुष्कराक्ष· ।३८।

तभी कल्किजी ने कहा—यह सभी को विदित है कि तुम दोनो राजवश मे विश्व-रक्षा और पृथिवी के पालनार्थ उत्पन्न हुए हो। तुम्हारी उत्पत्ति सूर्य, चन्द्र, यम और कुबेर के अ श से हुई है ।।३४।। अब तक तुम अपने रूप को छिपाये रहे हो। परन्तु अब, जब यहाँ मेरे पास आये हो तो मेरी आज्ञा से इन्द्र द्वारा भेजे गये इन रथो पर आरूढ हो जाओ ।।३५।। पद्मापति कल्किजी के द्वारा उक्त वचन कहे जाने पर आकाश से देवताओ ने पुष्पवृष्टि और मुनियो ने स्तुति की ।।३६।। मन्द वायु प्रवाहित होने लगा। शिवजी के जटा जाल से उन्मुक्त गगा-जल के मिलन से विभूति भीग गई। मन्द पवन ने उस विभूति के कण रूपी परागो को उडा कर पार्वती के अ गो मे लगाते हुए कल्याण गुण की प्राप्ति की ।।३७।। तभी सनक मुनि के समान अत्यन्त तेजस्वी, धर्म भवन रूप सुरुचिर जटाओ को धारण किये और हाथ मे दण्ड लिये एक ब्रह्मचारी वहाँ आये। उनकी देह कान्ति तप्त स्वर्ण के समान चमचमा रही थी। मनोहर वस्त्रधारी उन कमललोचन दिव्य महापुरुष के मुख पर अक्षय भाव परिलक्षित हो रहा था। उनके तेजोमय शरीर का स्पर्श होते ही ससार के सम्पूर्ण पापो का क्षय हो रहा था ।।३८।।

—❀—

पंचम अध्याय

अथ कल्कि समालोक्य सदसाम्पतिभिः सह ।
समुत्याय ववन्दे त पाद्याध्यचिमनादिभि. ।१।
वृद्ध सवेश्य त भिक्षु सर्वाश्रमनमस्कृतम् ।
पप्रच्छ को भवानत्र मम भाग्यादिहागतः ।२।
प्रायशो मानवा लोके लोकाना पारणेच्छया ।
चरन्ति सर्वसुहृद. पूर्णा विगतकल्मषा. ।३।
अह कृतयुग श्रीश तवादेशकर परम् ।
तवाविर्भावविभवमीक्षणार्थमिहागतम् ।४
निरुपाधिर्भवान्काल. सोपाधिस्त्वमुपागत. ।
क्षणदण्डलवाद्यङ्गैर्मायया रचित स्वया ।५।
पक्षाहोरात्रमासत्तु संवत्सरयुगादय ।
तवेक्षया चरन्त्येते मनवश्च चतुर्दश :६।

शुक बोल—इस ब्रह्मचारी को देखते ही भगवान् कल्कि ने अपने सभासदो के सहित उठ कर पाद्य, अर्घ्य और आचमन आदि से उनका पूजन किया ।१। सभी आश्रमो के द्वारा नमस्कार योग्य उन भिक्षु ब्रह्मचारी को आदर पूर्वक बैठा कर कल्किजी ने प्रश्न किया—आप कौन हैं ? हमारे सौभाग्य से ही आपका यहाँ आगमन हूआ है ।२। पापों से परे रहने वाले जो सत्पुरुष सब के सुहृद है, वे लोक-कल्याणार्थ ही पृथिवी पर विचरण किये करते हैं ।३। भिक्षु ने कहा—हे श्रीपते ! मैं आपका आज्ञाकारी सत्युग हूँ । आपके अवतार का प्रत्यक्ष प्रभाव देखने के निमित्त ही यहाँ उपस्थित हुआ हूँ ।४। आप निरुपाधि एव

साक्षात् काल स्वरूप है। परन्तु क्षण, दण्ड और लवादि अंगो के द्वारा इस समय उपाधि सहित हो गए है। यह सम्पूर्ण विश्व आपकी ही माया से प्रकट हुआ है।५। आपकी ही सत्ता का अनुभव करते हुए यह पक्ष, दिवस, रात्रि, मास, ऋतु, सवत्सर, युगादि काल एव चौदहो मनु–यह सभी नियमित रूप से विचरण करते है।६।

स्वायम्भुवस्तु प्रथमस्तत स्वारोचिषो मनु ।
तृतीय उत्तमस्ताच्चतुर्थस्तामस स्मृत ।७।
पञ्चमो रैवत षष्टश्चाक्षुष परिकीर्त्तित ।
वैवस्वत सप्तमो वै ततः सावर्णिरष्टम ।८।
नवमो दक्षसावर्णिर्ब्रह्मसावर्णिकस्तत ।
दशमो धर्म्मसावर्णिरेकादशः स उच्यते ।९।
रुद्रसावर्णिकस्तत्र मनुर्वै द्वादश· स्मृत ।
त्रयोदशमनुर्वेदसावर्णिर्लोकविश्रुत. ।१०।
चतुर्दशेन्द्रसावर्णिरेते तव विभूतयः ।
यान्त्यायान्ति प्रकाशन्ते नामरूपादिभेदत ११।
द्वादशाब्दसहस्रेण देवानाञ्च चतुर्युगम् ।
चत्वारि त्रीणि द्वे चैक सहस्रगणित मतम् ।१२।
तावच्छतानि चत्वारि त्रीणि द्वे चैकमेव हि ।
सन्ध्याक्रमेण तेषान्तु सन्ध्यांशोऽपि तथाविध ।१३।

पहले मनु स्वायंभुव, दूसरे स्वारोचिष, तीसरे उत्तम, चौथे तामस, पाँचवे रैवत छठवे चाक्षुष, सातवे वैवस्वत, आठवे सावर्णिक, नवे दक्षसार्वणि, दसवें ब्रह्मसावर्णि, ग्यारहवे धर्म सावर्णि, बारहवे रुद्र सावर्णि, तेरहवे वेद सावर्णि और चौदहवें इन्द्र सावर्णि-यह चौदहो मनु आपकी ही विभूति रूप है। यह सब अपने-अपने नाम रूपादि के भेद से चलते हुए प्रकाशित होते हैं।७–११। बारह हजार दिव्य वर्षों की एक चतुर्युगी होती है, जिसके अनुसार चार हजार दिव्य वर्षो का सत्युग, तीन हजार दिव्य वर्षों का त्रेता, दो हजार दिव्य वर्षो का द्वापर

और एक हजार दिव्य वर्षों का कलियुग होता है ।१३। इन चारो युगो का सध्याक्रम (सधिकाल) क्रमश चार सौ, तीन सौ, दो सौ, और एक सौ वर्ष का होता है । इन चारो युगो की शेष सध्या का क्रम भी इसी प्रकार समझना चाहिये ।१३।

एकसप्ततिक तत्र युग भुङ्क्ते मनुर्भुवि ।
मनूनामपि सर्वेषामेव परिणतिर्भवेत् ।
दिवा प्रजापतेस्तत्तु निशा सा परिकीर्त्तिता ।१४
अहोरात्रश्च पक्षस्ते माससवत्सरर्त्तव. ।
सद्गुणाधिकृत कालो ब्रह्मणा जन्ममृत्युकृत् ।१५।
शतसवत्सरे ब्रह्मा लय प्राप्नोति हि त्वयि ।
लयान्ते त्वन्नाभिमध्यादुत्थित सृजति प्रभु. ।१६।
तत्र कृतयुगान्तेऽह काल सद्धर्म्मपालकम् ।
कृतकृत्या. प्रजा यत्र तन्नाम्ना मा कृत विदु ।१७।
इति तद्वच आश्रुत्व कल्किर्निजजनावृत ।
प्रहर्षमतुल लब्धा श्रुत्वा तद्वचनामृतम् ।१८।
अवहित्थामुपालक्ष्य युगस्याह जनान्हितान् ।
योद्धुकाम कले पुर्य्या हृष्टो विशसने प्रभु. ।१९,
गजरथतुरगान्नराश्च योधान्कनकविचित्रविभूषणा-
चिताङ्गान् । धृतविविधवरास्त्रशस्त्रपूगान्युधिनिपु-
णान्गणयध्वमानयध्वम् ।२०।

प्रत्येक मनु इकहत्तर चतुर्युगी तक पृथिवी को भोगते है । इसी प्रकार सब मनु बदलते रहते हैं । चौदहवे मनु जितने समय तक पृथिवी का भोग करते है, उतना समय ब्रह्मा का एक दिवस होता है । इतने ही परिमाण की ब्रह्मा की एक रात्रि होती ।१४। इसी प्रकार दिवस-रात्रि, पक्ष, मास, सवत्सर और ऋतु आदि की उपाधि से ब्रह्माजी की जन्म-मृत्यु आदि का विधान होता है ।१५। ब्रह्मा अपनी सौ वर्ष की आयु पूर्ण होने पर वह स्वय मे लय हो जाते है । फिर

जब प्रलय काल बीत जाता है तब आपके नाभि कमल से उनका पुनः उद्भव होता है ।१६। मैं उक्त काल का अंश रूप ही कृतयुग हूँ। मेरे द्वारा श्रेष्ठ धर्म पाला जाता है। मेरे द्वारा सम्पूर्ण प्रजा धर्म का अनुष्ठान करते हुए धन्य हो जाती है इसी लिए ज्ञानीजन मुझे कृतयुग कहते है ।१७। सत्ययुग के इस प्रकार के वचनो को सुन कर अपने जनो के सहित कल्किजी परम हर्षित हुए ।१८। कलियुग के नाश मे समर्थ कल्किजी ने सत्ययुग को आया देख कर कलियुग के शासन मे स्थित विशसन नामक नगरी मे युद्ध करने की इच्छा करते हुए अपने अनुयायियो से बोले ।१९। हाथी पर आरूढ होकर युद्ध करने वाले, अश्व और रथ पर चढ कर युद्ध करने वाले तथा पदाति सैनिक जो देह पर अद्भुत स्वर्णाभूषण और शस्त्रास्त्रो के धारण करने वाले हैं, ऐसे युद्ध-कुशल वीरो की गणना करो ।२०।

—❀—

षष्ठ अध्याय

इति तौ मरुदेवापी श्रुत्वा कल्केर्वच पुग ।
कृतोद्वाहौ रथारूढौः समायातौ महाभुजौ ।१।
नानायुधधरैः सैन्यैरावृतौ शूरमानिनौ ।
बद्धगोधाङगुलित्राणौ दशितौ बद्धहस्तकौ ।२।
काष्र्णायसशिरस्त्राणौ धनुर्द्धरधुरन्धरौ ।
अक्षौहिणीभि. षडभिस्तु कम्पयन्तौ भुव भरै. ।३।
विशाखयूपभूपस्तु गजलक्षैः समावृतः ।
अश्वै सहस्रनियुतै रथै सप्तसहस्रकै ।४।
पदातिभिर्द्विलक्षैश्च सन्नद्धैर्धृतकामुर्कैः ।
वातोद्धतोत्तरोष्णीषै सर्वत परिवारित ।५:
रुधिराश्वसहस्राणा पञ्चाशद्भिर्महारथै ।
गजैर्दशशतैर्मत्तैर्नवलक्षैर्वृतो बभौ ।६।

सूतजी बोले—कल्किजी की आज्ञा से मरु और देवापि ने विवाह कर लिया और वे दोनो महाबाहु दिव्य रथो पर आरूढ हुए वहाँ आ पहुचे ।१। अपने महाबली होने का अभिमान रखनेवाले वे दोनो वीर अपने देह को सुरक्षित किये हुए और अगुलियो मे त्राण धारण किये हुए थे । अस्त्रशस्त्रो से भले प्रकार सुसज्जित उन वीरो के साथ अगणित सेना थी ।२। वे अपने शिरो पर काष्र्ण्य वर्ण का शिरस्त्राण धारण किये थे तथा सर्वश्रेष्ठ धनुप बाणों से सज्जित अपनी छः अक्षौ-

हिणी सेना से पृथिवी को कम्पित कर रहे थे ।३। विशाखयूप-नरेश भी अपनी एक लाख हाथी, एक करोड घोडो और सात हजार रथो मे सम्पन्न सेना के साथ थे ।४। उनके साथ दो लाख पैदल सैनिक धनुप बाणो से सुसज्जित थे । वायु के झोको से उनके सफे और दुकूल हिल रहे थे ।५। इनके अतिरिक्त पचास हजार लाल वर्ण के अश्व, दस हजार मदमत्त गज एव अनेको महारथी तथा नौ लाख पदाति थे ।६।

अक्षौहिणीभिर्दशभि कल्कि परपुरञ्जय ।
समावृतस्तथा देवैरेवमिन्द्रो दिवि स्वराट् ।७।
भ्रातृपुत्रसुहृद्भिश्च मुदित सैनिकैर्वृत. ।
ययौ दिग्विजयाकाङ्क्षी जगतामीश्वर प्रभु: ।८।
काले तस्मिन्द्विजो भूत्वा धर्म्म' परिजनै: सह ।
समाजगाम कलिना बलिनापि निराकृत. । ६।
ऋत प्रसादभय सुख मुदमुथ स्वयम् ।
योभमर्थो ततोऽदर्प स्मृति क्षेम प्रतिश्रयम् ।१०।
नरनारायणो चोभौ हरेरशौ तपाव्रतौ ।
धर्म्मस्त्वेतान्समादाय पुत्रान्स्त्रीश्चागतस्त्वरन् ।११।
श्रद्धा मैत्री दया शान्तिस्तुष्टि' पुष्टि. क्रियोन्नति'
बुद्धिर्मेधा तितिक्षा च ह्रीमूर्तिर्धर्म्मपालका। ।१२।
एतास्तेन सहायता निजबन्धुगणै; सह ।
कल्किमालोकित तत्र निजकार्य्य निवेदितुम् ।१३।

शत्रु पुरो के विजेता कल्किजी स्वर्ग मे सुशोभित सुरपति इन्द्र के समान दस अक्षौहिणी सेना के साथ अत्यन्त शोभा को प्राप्त हुए ।७। इस प्रकार भाई, पुत्र, सुहृद और सैन्य-समूह से सम्पन्न होकर जगदीश्वर कल्किजी ने दिग्विजय की इच्छा से प्रस्थान किया ।८। तभी कलियुग के द्वारा निग्रह किया हुआ धर्म ब्राह्मण वेश मे वहा उपस्थित हुआ ।९। ऋत, प्रसाद, अभय, सुख प्रसन्नता, योग, अर्थ, अदर्प, स्मृति, क्षेम और प्रतिश्रय नामक उसके सेवक साथ थे ।१०। भगवान् विष्णु

के अंश रूप तपोनिष्ठ नर-नारायण को तथा अपने स्त्री पुत्रादि को साथ लेकर धर्म शीघ्रता पूर्वक वहाँ आ गया ।११। श्रद्धा, मैत्री, दया, शान्ति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उन्नति, बुद्धि, मेधा, तितिक्षा, ह्री आदि धर्म की रक्षा मे तत्पर यह सभी साकार रूप मे अपने बान्धवों से युक्त होकर कल्किजी के दर्शनार्थ और स्वकार्य निवेदनार्थ वहा उपस्थित हुए ।१२–१३।

कल्किर्द्विज समासाद्य पूजयित्वा यथाविधि ।
प्रोवाच विनयापन्न कस्त्वं कस्मादिहागत ।१४।
स्त्रीभि पुत्रैश्च सहित क्षीणपुण्य इव ग्रह. ।
कस्य वा विषयाद्राज्ञस्तत्तत्त्व वद तावत ।१५।
पुत्रा स्त्रियश्च ते दीना हीनस्वबलपौरुषा. ।
वैष्णवा साधवो यद्वत्पाखण्डैश्च तिरस्कृता ।१६।
कल्केरिति वच श्रुत्वा धर्म्मः शर्म्म निज स्मरन् ।
प्रोवाच कमलानाथमनाथस्त्वतिकातर ।१७।
पुत्रैः स्त्रीभिर्निजजनै कृताञ्जलिपुटैर्हरिम् ।
स्तुत्वा नत्वा पूजयित्वा मुदित त दयापरम् ।१८।
शृणु कल्के ममाख्यान धर्मोऽह ब्रह्मरूपिणा ।
तव वक्ष स्थलाज्जात· कामद सवदेहिनाम् ।१९।

भगवान् कल्कि ने ब्राह्मण को देखते ही विनय पूर्वक एवं विधिवत् उसका पूजन किया और बोले–आप कौन हैं ? कहाँ से आगमन हुआ ? ।१४। क्षीण पुण्य मनुष्य के समान आप अपने स्त्री पुत्रादि के सहित किस राज्य से यहा आये हैं, यह सब मुझे यथार्थ रूप मे बताइये ।१५। जैसे वैष्णव साधु पाखण्ड के पराजित हो जाते हैं, वैसे ही आप बल-पौरुष से हीन होकर स्त्री पुत्रादि के सहित अत्यन्त कातर क्यो हो रहे हैं ? ।१६। अत्यन्त कातर और अनाथ रूप मे आया हुआ धर्म पद्मा-पति कल्किजी के वचन सुन कर अपने कल्याणार्थ निवेदन करने लगा ।१७। उसने अपने अनुगामियो के सहित हाथ जोडे और आनन्द-धाम

तथा दयावन्त प्रभु का पूजन कर प्रणाम और स्तुति करने लगा ।१।८ धर्म बोला—हे प्रभो ! मैं अपना वृत्तान्त निवेदन करता हूँ, इसे सुनिये ! मैं ब्रह्मस्वरूप धर्म आपके वक्ष स्थल से उत्पन्न हुआ हूँ। मेरे द्वारा सभी प्राणियो के कार्यो की सिद्धि होती है ।१९।

देवानामग्रणीर्हव्यकव्यानां कामधुग्विभु ।
तवाज्ञया चराम्येव साधुकीर्त्तिकृदन्वहम् ।२०।
सोऽहं कालेन वलिना बालनापि निराकृत. ।
शककाम्बोजशबरै. सर्वैरावासवासिना ।२१।
अधुना तेऽखिलाधार ! पादमूलमुपागता ।
यथा ससारकालाग्निसतप्ता साधवोऽर्दिता, ।२२।
इति वाग्भिरपूर्वाभिर्धर्म्मेण परितोषित ।
कल्कि' कल्कहर श्रीमानाह सहर्षयञ्छनैः ।२३।
धर्म्म कृतायुग पश्य नरु चण्डाशुवशजम् ।
मा जानासि यथा जात धातृप्रार्थितविग्रहम् ।२४।
कीटाकैर्बौद्धदलनमिति मत्वा सुखी भव ।
अवैष्णवानामन्येषा तत्रोपद्रवकारिणाम् ।
जिघासुर्यामि सेजाभिश्चर गा त्वं निर्भयः ।२५।

देवताओ मे प्रथम गणना योग्य मे यज्ञाश रूप हव्य-कव्य के अ श का अधिकारी हूँ। मैं यज्ञ फल प्रदान करके साधुजन का अभीष्ट पूर्ण करता हूँ। आपकी आज्ञा से मैं सदैव साधुओ का कार्य सिद्ध करता हुआ घूमता हूँ ।२०। इस समय शक, कम्बोज, शबर आदि कलियुग के शासन मे रहते हैं। कालक्रम के कारण मैं उस बलवान् कलि से ही हारा हुआ हूँ ।२१। हे अखिलाधार ! इस समय साधुजन विश्वरूपी कालाग्नि से सतप्त एव पीडित है। इसी लिए मैं आपके चरणो की शरण मे उपस्थित हुआ हूँ ।२२। धर्म के इन अपूर्व वचनो को सुन कर पाप हारी कल्कि जी सब के लिए प्रसन्न करने वाले वचन कहने लगे ।२३। उन्होने कहा—हे धर्म ! इधर देखो, सत्यग का आगमन हो चुका

है। यह मरु नामक सूर्यवंशी नरेश हैं। तुम्हे यह विदित ही है कि मैंने ब्रह्माजी द्वारा प्रार्थित होकर ही यह देह धारण किया है।२४। कीटक मे बौद्धो का दलन किया और जो तुम्हारे प्रति अधिक उपद्रव करने मे तत्पर रहते हैं तथा जो वैष्णव नहीं है, उन्हे नष्ट करने के लिए मैं सेना सहित विचार कर रहा हूँ। अब तुम भी भय-रहित होकर पृथिवी पर गतिशील रहो।२५।

का भीतिस्ते क्व मोहोऽस्ति यज्ञदानतपोव्रतै.।
सहितैः सचर विभो ! मयि सत्ये व्युपस्थिते।२६।
अहं यामि त्वयाऽगच्छ स्वपुत्रैर्बान्धवैः सह।
दिशा जयार्थं त्वं शत्रुनिग्रहार्थं जगत्प्रिय।२७।
इति कल्केर्वच श्रुत्वा धर्म. परमहर्षित।
गन्तुं कृतमतिस्तेन आधिपत्यममुं स्मरन्।२८।
सिद्धश्रमे निजनानवस्थाप्य स्त्रियश्च त.।२९।
सन्नद्ध. साधुसत्कारर्वेदब्रह्ममहारथः।
नानाशास्त्रान्वेषणेषु सकल्पवरकार्मुक.।३०।
सप्तस्वराश्वो भूदेवसारथिर्वह्निराश्रयः
क्रिय.भेदबलोपेत प्रवयौधर्म्मनायकः।३१।

हे धर्म ! मैं स्वयं उपस्थित हूँ, सत्युग भी आ ही चुका है, तब तुम भयभीत क्यो हो ? तुम व्यर्थ मोहित क्यो हो रहे हो ? अब तुम यज्ञ, दान और व्रत के सहित पृथिवी पर स्वच्छन्द विचरण करो।२६। हे जगत्प्रिय ! तुम अपने पुत्र एवं बाँधवो सहित शत्रुओ के निग्रह और दिग्विजय के उद्देश्य से प्रस्थान करो। मैं भी तुम्हारा साथ दूँगा।२७। कल्किजी के यह वचन सुन कर धर्म अत्यन्त आनन्दित हुआ और अपने अधिपत्य का स्मरण करता हुआ, कल्किजी के साथ प्रस्थान मे तत्पर हुआ।२८। उस समय उसने अपनी स्त्री को सिद्धाश्रम मे स्थित किया।२६। धर्म का युद्ध-वेश साधु-सत्कार था। वेद और ब्रह्म महारथ के रूप मे साकार हुए तथा विविध शास्त्रो के अन्वेषण ने धनुष का रूप धारण किया।३०। वेद के सात स्वर उसके रथ के अश्व हुए, ब्राह्मण

सारथि, अग्नि आसन रूप आश्रय हुआ। इस प्रकार धर्म रूप नायक क्रियानुष्ठान रूपी महाबल से समन्वित होकर चल दिया।३१।

यज्ञदानतप पात्रैर्यमैश्च नियमैर्वृत ।
खशकाम्बोजकान्सर्वाञ्छबरान्बर्वरापि ।३२।
जेतु कल्किर्ययौ यत्र कलेरावासमीप्सितम् ।
भूतवासबलोपेत सारमेयवराकुलम् ।।३३।।
गोमासपूतिगन्धाढ्य काकोलूकशिवावृतम् ।
स्त्रीणा दुर्द्यूतकलहविवादव्यसनाश्रयम् ।३४।
घोर जगद्भयकर कामिनीस्वामिन गृहम् ।
कलिः श्रुत्वोद्यमं कल्के पुत्रौत्रवृत क्रुधा ।३५।
पुराद्विशसनात्प्रायात्प्रेचकाक्षरथोपरि :
धर्म; कलि समालोक्य ऋषिभि. परिवारित: ।३६।
युयुधे तेन सहसा कल्किवाक्यप्रचोदित; ।
ऋतेन दम्भः सग्रामे प्रसादो लोभमाह्वयत् ।३७।

इस प्रकार यज्ञ, दान, तप, यम, नियम आदि से सम्पन्न हुए भगवान् कल्कि खश, कम्बोज, शबर तथा बर्बर आदि म्लेच्छो की विजय कामना से कलि के आवास वाले स्थान मे पहुचे। वहा भूतो का दृढ आवास होने से उस स्थान मे सब ओर श्वान भूँकते थे। ३२–३३। इस स्थान मे गो मास की दुर्गंध आ रही थी। कौओ और उल्लुओ से पूर्ण तथा द्यूत का आश्रय एव स्त्रियो के विवाद रूपी क्लेश इसमे भरा हुआ था।३४। ससार के लिए भयप्रद यह नगरी भय कर प्रतीत होती थी। यहाँ के पुरुष स्त्रियो की आज्ञा के अनुवर्ती थे। वहाँ का अधीश्वर कल्कि जी का आक्रमण सुन कर अपने पुत्र-पौत्रादि के सहित उल्लू की ध्वजा वाले रथ पर आरूढ होकर विशसनपुरी से बाहर आया। उस कलि को देख कर भगवान् कल्कि की आज्ञानुसार ऋषियो के सहित धर्म ने उसके साथ सग्राम प्रारम्भ किया। दभ से ऋत और लोभ से प्रसाद भिड़ गया।३५–३७।

समयादभय क्रोधो भयं सुखमुपाययौ ।
निरयो मुदमाभाद्य युयुधे विविधायुधैः ।३८।
आधिर्योगेन च व्याधि क्षेमेण च बलीयसा ।
प्रश्रयेण तथा ग्लानिर्जरा स्मृतिमुपाह्वयत् ।३९।
एव वृत्तो महाघोरो युद्ध परमदारुणः ।
त द्रष्टुमागता देवा ब्रह्माद्या· खे विभूतिभि. ।४०।
मरु खशैश्च काम्बोजैर्युयुधे भीमविक्रमैः ।
देवापिः समरे चौनैर्बर्बरैस्तद्गणैरपि ।४१।
विशाखयूपभूपाल पुलिन्दै श्वपचै सह ।
युयुधे विविधै शस्त्रै रस्त्रैर्दिव्यैर्महाप्रभैः ।४२।
कल्कि कोकविकोकाभ्या वाहिनीभिर्वरायुधै ।
तौ तु कोकविकोकौ च ब्रह्मणो वरदर्पितौ ।४३।

क्रोध के साथ अभय और भय के साथ सुख का युद्ध होने लगा। निरय ने प्रीति के पास आकर उस पर शस्त्रास्त्रो से प्रहार किये ।३८। आधि से योग का, व्याधि से क्षेम का, ग्लानि से प्रश्रय का और जरा से स्मृति का सग्राम होने लगा ।३९। इस प्रकार अत्यन्त घोर एवं दारुण सग्राम उपस्थित हो गया। ब्रह्मादि देवगण अपनी-अपनी विभूतियो के सहित नभमण्डल मे स्थित होकर युद्ध देखने लगे ।४०। भीषण पराक्रमी खश और कम्बोजो से मरु का युद्ध हुआ। देवापि ने चौन और बर्बरों की सेना से सग्राम किया ।४१। विशाखयूप नरेश पुलिन्द और श्वपचादि से महा पराक्रमी विविध अपने दिव्यास्त्रो के सहित भिडे हुए थे ।४२। कोक-विकोक के साथ स्वय भगवान् कल्कि श्रेष्ठ शस्त्रास्त्र लेकर सेना सहित युद्ध मे तत्पर हुए। यह कोक–विकोक ब्रह्मा जी से वर प्राप्त करने के कारण अत्यन्त अहकारी हो गए थे ।४३।

भ्रातरौ दानवश्रेष्ठौ मत्तौ युद्धविशारदौ ।
एकरूपौ महासत्वौ देवाना भयवर्द्धनौ ।४४।
पदातिकौ गदाहस्तौ वज्राङ्गौ जयिनौ दिशाम् ।

शुम्भैः परिवृतौ मृत्युजितावेकत्र योधनात् ।४५।
ताभ्यां स युयुधे कल्कि सेनागणसमन्वित :
शुभाना कल्किसैन्याना समरस्तुमुलोऽभवत् ।४६।
ह्रेषितैर्बृंहितैर्दन्तशब्दैष्टङ्कारनादितै ।
शूरोत्क्रुष्टैर्बाहुवेगै. सशब्दस्तलताडनै ।४७।
सपूरिता दिश सर्वा लोका नो शर्म्म लेभिरे ।
देवाश्च भयसत्रस्ता दिवि व्यस्तपथा ययु ।४८।
पाशैर्दण्डै खड्गशक्त्यृष्टिशूलैर्गदाघातैर्बाणपातैश्च घोरै ।
युद्धे शूराश्छिन्नबाह्वङ्घ्रिमध्या पेतु सख्ये शतश कोटिशश्च

दैत्यो मे श्रेष्ठ यह दोनो भाई घोर युद्ध मे प्रवीण, अत्यन्त बली और देवताओ को भयभीत करने मे समर्थ थे। इन दोनो का रूप एक सा था ।४४। यह दोनो दिग्विजयी, वज्र जैसे कठोर शरीर वाले थे। दोनो मिल कर मृत्यु को भी युद्ध मे जीत लेने मे समर्थ थे। अपनी बलवती सेना के सहित यह दोनो गदा धारण कर पैदल ही युद्ध मे तत्पर हुए ।४५। इन कोक-विकोक से साथ कल्कि जी का घोर सग्राम हो रहा था उनकी सेना के प्रमुख वीर भयकर युद्ध कर रहे थे ।४६। अश्वो का हीसना, हाथियो की चिघाड तथा दातो का शब्द, धनुषो की टकार, वीरो के भुजाघात आदि से भयप्रद भीषण शब्द होने लगा ।४७। उस शब्द से दशो दिशाएँ गूँज उठी। कोई भी जीव भय-रहित नही था। देवता भी डर के कारण गगन मण्डल से उल्टे–सीधे मार्गों से भागने लगे ।४८। पाश, दण्ड, खड्ग, शक्ति, शूल, गदा तथा भयकर बाणो के आघात से करोडो शूरो के हाथ, पैर, कटि आदि विभिन्न अग कट-कट कर गिर रहे थे, जिनसे युद्ध भूमि आच्छादित होने लगी थी ।४९।

—❀—

सप्तम अध्याय

एव प्रवृत्ते सग्रामे धर्म परमकोपन ।
कृतेन सहितो घोर युयुधे कलिना सह. ।१।
कलिर्दमित्रबाणौघैधर्मस्यापि कृतस्य च ।
पराभूत पुरी प्रायात्त्यक्त्वागर्दभवाहनम् ।२।
बिच्छिन्नपेचकरथ स्रवद्रक्ताङ्गसञ्चय ।
छछुगन्ध करालास्य स्त्रीस्वामिकमगाद्गृहम् ।३।
दम्भ सम्भोगरहितनोद्धृतवाणगणाहत ।
व्याकुल स्वकुलागारो नि मार· प्राविशद्गृहम् ।४।
लोभ प्रसादाभिहतो गदया भिन्नमस्तक: ।
सारमेयरथ छिन्न त्यक्त्वागाद्रुधिर वमन् ।५।
अभयेन जित क्रोध कषायीकृतलोचन ।
गन्धाखुवाह विच्छिन्न त्यक्त्वा विशमन गत ।६।

सूत जी ने कहा—इस प्रकार भयकर युद्ध होता देख कर सत्युग सहित धर्म ने अत्यन्त क्रोधपूर्वक कलि से युद्ध प्रारम्भ किया ।१। तब धर्म और सत्युग की भीषण बाण वर्षा को न सह कर हारा हुआ कलि अपने वाहन गधे को वही छोड कर भागता हुआ अपनी पुरी मे घुस गया ।२। उल्लू की ध्वजा वाला उसका रथ चकनाचूर हो गया । उसकी देह से रक्त बहने लगा, जिससे छछूदर की गन्ध निकल रही थी । मुख पर भयानकता आ गई थी । इस अवस्था को प्राप्त हुआ कलि अपनी स्वामिनी नारी के भवन मे प्रविष्ट हुआ ।३। इस प्रकार बाण वर्षा से आहत एव व्याकुल हुआ कलि दम्भ सभोगादि से रहित होकर

अपने कुल के अ ग र रूप से सार-हीन होता हुआ अपने गृह मे जा पहुँचा ।४। उधर प्रसाद द्वारा पदाघात को प्राप्त हुए लोभ का शिर कट गया। कुत्तो से युक्त उसका रथ छिन्न भिन्न हो गया। तब वह उसे छोड कर रक्त वमन करता हुआ रण क्षेत्र से भाग खडा हुआ।५। अभय से युद्ध करता हुआ क्रोध भी हार गया। उसके छ नेत्रो मे लाली छाई थी। चूहो से युक्त दुर्गंध पूर्ण अपने छिन्न-भिन्न रथ को वही पडा छोड कर वह भी विशमनपुरी मे जा घुसा।६।

भय सुखतलाघाताद्गतासु र्यपतद्भुवि ।
निरयो मुदमुष्टिभ्या पीडितो यममाययौ ७।
आधिव्याध्यादय सर्वे त्यक्त्वा वाहमुपाद्रवन् ।
नानादेशान्भयोद्विग्न कृतवाणप्रपीडिता ।८।
धर्म. कृतेन सहितो गत्वा विशसन कलेः ।
नगर बाणदहनैर्ददाह कलिना सह ।९।
कलिर्विप्लुष्टसर्वाङ्गो मृतदारो मृतप्रज. ।
जगामैको रुदन्दीनो वर्षान्तरमलक्षित. ।१०।
मरुस्तु शककाम्बोजाञ्जघ्नेदिव्यास्त्रतेजसा ।
देवापि शबराश्चोलान्बर्बरास्तद्गणानपि ।११।
दिव्यास्त्रशस्त्रसम्पातैरर्दयामास वीर्यवान् ।
विशाखयूपभूपालः पुलिन्दान्पुक्कसानपि ।१२।

सुख के तलाघात से आहत हुआ भय प्राण त्याग कर धराशायी हुआ। प्रीति के मुष्टि प्रहार से पीडित हुआ निरय भी तुरन्त ही यमालय को चला गया।७। सत्युग के बाणो से आहत हुई आधि-व्याधि अपने वाहनो का परित्याग करके इधर-उधर भाग गईं ।८। इसके पश्चात् सत्युग को साथ लेकर धर्म कलि की राजधानी विनशन में प्रविष्ट हुआ और उसने कलि के सहित सम्पूर्ण नगर को अपनी बाणाग्नि से जला दिया।९। कलि के सभी अ ग जल गये। उसकी सतति और पत्नी भी मरण को प्राप्त हुई और वह स्वय रोता हुआ अप्रकट रूप

से अन्य वर्ष मे पलायन कर गया।१०। अपने दिव्यास्त्रो के तेज से राजा मरु ने भी शक और कम्बोजो का सहार कर दिया तथा राजा देवापि ने चोल और बर्बरो को मृत्यु के घाट उतार दिया।११। महाबली विशाखयूप नरेश ने अपने दिव्य शस्त्रास्त्रो के द्वारा पुलिन्द और युक्कसो को नष्ट किया।१२।

जघानविमलप्रज्ञ खड्गपातेन भूरिणा।
नानास्त्रशस्त्रवर्षैस्ते योधा नेशुरनेकधा।१३।
कल्कि कोकविकोकाभ्या गदापाणियु॑धा पति.।
युयुधे विन्यासविज्ञो लौकाना जनय.भयम्।१४।
वृकासुरस्य पुत्रौ तौ नप्तारौ शकु नेर्हरि:।
तयो. कल्कि स युयुधे मधुकैटभयोर्यथा।१५।
तयोर्गदा प्रहारेण चूर्णितागस्त तत्पते।
कराच्युतापतद्भूमौ दृष्ट्वोचुरित्यहो जना।१६।
तत: पुन क्रुधा विष्णुर्जगर्जिलष्णुर्महाभुज।
भल्लकेन शिरस्तस्य विकोकस्याच्छिनत्प्रभु।१७।
मृतो विकोक: कोकस्य दर्शनादुत्थितो बली।
तद्दृष्ट्वा विस्मिता देवा. कल्किश्च परवीरहा।१८।

उन श्रेष्ठ बुद्धि वाले विशाखयूप–नरेश ने निरन्तर अपने खड्ग एव अनेकानेक शस्त्रास्त्रो के द्वारा शत्रुओ को विनष्ट किया। इस प्रकार पर-पक्ष के बहुत सारे वीर मृत्यु को प्राप्त हुए।१३। गदा–कुशल कल्कि जी गदा लिये हुए ही कोक विकोक से सग्राम कर रहे थे, जिससे सब लोक भयभीत हो रहे थे।१४।

वे दोनो भाई शकुनि के पौत्र और वृकासुर के पुत्र थे। पुराकाल में जैसे विष्णु का मधु कैटभ से युद्ध हुआ था, वैसे ही इन दोनो के साथ कल्कि जी घोर सग्राम कर रहे थे।१५। तभी कोक-विकोक के गदाघात से कल्किजी का देह चूर्ण जैसा हो गया। उनके हाथ से गदा छूट गई। यह दृश्य सभी उपस्थित व्यक्ति आश्चर्य पूर्वक देख

रहे थे ।१६। फिर ससार विजेता महाबाहु कल्कि जी ने क्रोध मे भर कर भल्लास्त्र के द्वारा विकोक का शिर छेदन कर दिया ।१७। महाबली विकोक मृत्यु को प्राप्त हो गया था। परन्तु जैसे ही उसके भाई कोक ने उसे देखा वैसे ही वह पुनर्जीवित हो गया। यह देखा कर सभी देव-गण और स्वय कल्कि जी भी आश्चर्य करने लगे ।१८।

प्रतिकर्त्तुर्गदापाणेः कोकस्याप्यच्छिनच्छिर. ।
मृत. कोको विकोकस्य दृष्टिपातात्समुत्थित ।१६।
पुनस्तौ मिलितौ तेन युयुधाते महाबलौ ।
कामरूपधरौ वीरौ कालमृत्यू इवापरौ ।२०।
खड्गचर्म्मधरौ कल्कि प्रहरन्तौ पुनः पुन ।
कल्कि· क्रुधा तयोस्तद्वद्बाणेन शिरसी हृते ।२१।
पुनर्लग्ने समालोक्य हरिश्चिन्तापरोऽभवत् ।
विसत्त्वत्वमथालोक्य तुरगस्तावताडयत् ।२२।
कालकल्पौ दुराधर्षौ तुरगेणार्दितौ भृशम् ।
कल्केस्त जघ्नतुर्बाणैरमर्षाताम्रलोचनौ ।२३।
तयोर्भुजान्तर सोऽश्व क्रुधा समदशद्भृशम् ।
तौ तु प्रभिन्नास्थिभुजौ विशस्ताङ्गदकार्मुकौ ·
पुच्छ जगृहतु सप्तेर्गोपुच्छ बालकाविव ।।२४।

फिर कल्कि जी ने विकोक को पुनर्जीवित करने वाले गदापाणि कोक का ही रच्छेद कर दिया। इस प्रकार कोक मर गया, परन्तु जैसे ही उसे विकोक ने देखा, वैसे ही वह भी पुनर्जीवित हो उठा ।१६। तब इच्छानुसार रूप धारण मे समर्थ महाबली कोक-विकोक दोनो मिल कर कल्किजी के साथ दूसरे काल के समान घोर युद्ध करने लगे ।२०। वह खड्ग और ढाल धारण कर बारम्बार कल्किजी पर आघात करने लगे। तब कल्किजी ने अत्यन्त क्रोधित होकर उन दोनो के ही अपने बाणो से मस्तक उडा दिये ।२१। परन्तु, जब दोनो के ही मस्तक अपने-अपने धड मे स्वय जुड गये, तब तो कल्कि जी को बडी चिन्ता हुई। फिर वे कोक-विकोक द्वारा अपने पर प्रहार होते देख कर स्वयं भी

उन पर घोर प्रहार करने लगे। २२। युद्ध मे दुर्धर्ष कोक-विकोक कल्कि जी के अश्वो के द्वारा किये गये आघात से अत्यन्त आहत होकर क्रोधित हो उठे और रक्त वर्ण नेत्र करके कल्कि जी पर भीषण बाण-वर्षा मे तत्पर हुए ।२३। तब कल्कि जी के अश्व ने अत्यन्त क्रोध पूर्वक कोक-विकोक के भुजमूल छिन्न कर दिये, उनकी भुजाओ की हड्डियो का चूर्ण हो गया। धनुष भी बाहुओ के सहित कट कर गिर गये। तब जैसे कोई शिशु गौ की पूछ पकड लेता है, वैसे ही उन्होने अश्व की पूछ को पकड लिया ।२४।

धृतपुच्छौ तु तौ ज्ञात्वा सप्ति. परमकोपन ।
पश्चात्पद्भ्या दृढ जघ्ने तयोर्वक्षसि वज्रवत् ।२५।
त्यक्तपुच्छौ मूर्च्छितौ तौ तत्क्षणात्पुनरुत्थितौ ।
पुरत कल्किमालोक्य बभाषाते स्फुटाक्षरौ ।२६।
ततो ब्रह्मा नमम्येत्य कृताञ्जलिपुट शनै ।
प्रवाच कल्कि नैत्रामू शस्त्रास्त्रैर्वधमर्हत: ।२७।
कराघातादेककाले उभयोर्निर्मितो वधः ।
उभयोर्दर्शनादेव नोभयोर्मरण क्वचित् ।
विदित्वेति कुरुष्वात्मन्युभपच्चानयोर्वधम् ।२८।
इति ब्रह्मवच श्रुत्वा त्यक्तशस्त्रास्त्रवाहन ।
तयो प्रहरतो. स्वैर कल्किर्दानवयो क्रुधा ।
मुष्टिभ्या वज्रकल्पाभ्या बभञ्ज शिरसी तयो ।२९।
तौ तत्र भग्नमस्तिष्कौ भग्नश्रृङ्गागाविव ।
पेततुर्दिवि देवाना भयदौ भुवि बाधकौ ।३०।

जैसे ही उन्होने अश्व की पूछ पकडी वैसे ही अश्व ने अत्यन्त क्रोधित होकर अपने पिछले पैरो के द्वारा कोक-विकोक के वक्षस्थल मे वज्र के समान प्रहार किये ।२५। जिसमे वे दोनो राक्षस अश्व की पूँछ को छोड कर पृथिवी पर गिरते हुए मूर्च्छित हो गए। परन्तु, उन्हे तुरन्त ही चेत हो गया और वे कल्कि जी को सामने देख कर युद्ध के

निमित्त पुन, ललकारने लगे ।२६। तभी ब्रह्मा जी वहा आये और कल्किजी से हाथ जोड कर बोले कि हे प्रभो ! यह कोक-विकोक शस्त्रास्त्रो से मृत्यु को प्राप्त नही हो सकते ।२७। इन दोनो को एक समय मे ही थप्पड मार कर इनका वध कर दीजिये । क्योकि जब तक यह दोनो परस्पर एक दूसरे को देखेगे, तब तक इनकी मृत्यु सभव नही है । अत आप इसी प्रकार इनको मारिये ।२८। ब्रह्माजीके वचन सुन कर कल्किजीने शस्त्रास्त्र और वाहन का परित्याग कर दिया और दोनो दानवो के मध्य पहुँच कर दोनो हाथो से एक साथ उन दोनो के वज्र के समान मुष्टिका-प्रहार किया, जिससे उनका मस्तक चूर्ण हो गया ।२९। देवताओ के लिए भयप्रद और सब जीयो का अनिष्ट करने मे तत्पर वे दोनो दानव मस्तको के चूर्ण होने से टूट कर गिरते हुए पर्वत-शिखरो के समान धरती पर आ गिरे ।३०।

तद्दृष्ट्वा महदाश्चर्यं गन्धर्वाप्सरसा गणा ।
ननृतुर्जगुस्तुष्टुबुश्च मुनय सिद्धचारणाः ।
देवाश्च कुसुमासारैर्ववर्षुर्हर्षमानसाः ।३१।
दिवि दुन्दुभयो नेदु प्रसन्नाश्चाभवन्दिश. ।
तयोर्वधप्रमुदितः कविर्दशसहस्रकान् ।
साश्वान्महारथान्साक्षादहनद्दिव्यसायकै.
प्राज्ञः शतसहस्राणा योधाना रणमूर्द्धनि ।
क्षय निन्ये सुमन्त्रस्तु रथिना पञ्चविंशतिः ।३३।
एवमन्ये गार्गभर्ग्यविशालाद्या महारथान् ।
निजघ्नुः समरे क्रुद्धा निषादान्म्लेच्छवर्बरान् ।३४।
एव विजित्य तान्सर्व्वान्कल्किभूपगणैः सह ।
शय्याकर्णैश्च भल्लाटनगरज्जेतुमाययौ ।३५:
नानावाद्यैर्लोकसघैर्वरास्त्रैर्नानावस्त्रभूषणैर्भूषिताङ्गैः
नानावहैश्चामरैर्वीज्यमानैर्यातोयोद्धुं कल्किरत्युग्रसेन ३६

यह देख कर अत्यन्त आश्चर्य मे भरे गंधर्व और अप्सराऐ

नृत्य-गान मे तत्पर हुए तथा देवता, मुनिगण, सिद्धगण और चारणादि प्रयत्न हृदय मे पुष्प बरसाने लगे ।३१। कोक-विकोक का संहार हुआ देख कर कवि ने उत्साह पूर्वक अपने दैत्य शत्रु-पक्ष के दस हजार महा-रथियो को नष्ट कर दिया ।३२। प्राज्ञ के द्वारा एक लाख वीर सैनिको और सुतन्त्रक के द्वारा पच्चीस रथी मृत्यु को प्राप्त हुए ।३३। इसी प्रकार गर्ग्य, भर्ग्य और विशालादि ने भी निषाद, म्लेच्छ और बर्बरो का क्रोध पूर्वक संहार कर दिया ।३४। इस प्रकार विजय को प्राप्त हुए कल्किजी अपनी विशाल सेना के सहित युद्ध के निमित्त आगे बढ़े । उस समय अनेक प्रकार के बाजे बजने लगे । श्रेष्ठ शस्त्रास्त्र धारी वीर उनके साथ-साथ चल रहे थे । अनेक प्रकार के वाहन उस सेना मे आ गये थे । सब ओर से कल्किजी पर चमर ढोरे जा रहे थे ।३५-३६।

●●●

अष्टम अध्याय

सेनागरणै परिवृत: कल्किर्नारायण प्रभु ।
भल्लाटनगर प्रायात्खड्ग धृक्सप्तिवाहन ।१।
स भल्लाटेश्वरो योगी ज्ञात्वा विष्णु जगत्पतिम् ।
निजसेनागणै: पूर्णो योद्धुकामो हरि ययौ ।२।
स हर्षोत्पुलक श्रीमान्दीर्घाङ्ग: कृष्णभावन ।
शशिध्वजो महातेजा गजायुतबल: सुधी ।३।
तस्य पत्नी महादेवी विष्णुव्रतपरायणा ।
सुशान्ता स्वामिन प्राह कल्किना योद्धुमुद्यम् ।४।
नाथ कान्त जगन्नाथ सर्वान्तर्यामिन प्रभुम् ।
कल्कि नारायण साक्षात्कथ त्वं प्रहरिष्यसि ।५।
सुशान्ते परमो धर्म्म: प्रजापतिविनिर्मित ।
युद्धे प्रहार [सर्वत्र गुरौ शिष्ये हरेरिव ।६।

सूत जी बोले—तदनन्तर अपने अश्व पर आरूढ हुए कल्कि जी खडग धारण किये हुए, सेना के सहित भल्लाट नगर मे पहुँचे ।१। योगिराज भल्लाट नरेश ने कल्कि जी को साक्षात् जगदीश्वर विष्णु जाना और वह उनसे युद्ध करने के लिए सेना सहित नगर से बाहर चले ।२। उस समय वह दीर्घांग, श्रीमान्, कृष्ण भक्त, महाबली एव महा तेजस्वी राजा शशि ध्वज हर्ष से पुलकित हो रहे थे ।३। उन राजा की पत्नी विष्णु व्रत-परायणा महादेवी सुशान्ता थी । उसने जब अपने पति को कल्कि जी से युद्ध के लिए जाने को उद्यत देखा तब वह कहने लगी ।४। हे नाथ ! हे स्वामिन् ! कल्कि जी तो साक्षात् जगन्नाथ विष्णु

और सर्वान्तरयामी है। आप उन पर प्रहार कैसे कर सकेंगे ? ।५। शशिध्वज बोले—हे सुशान्ते ! प्रजापति ब्रह्माजी ने जो धर्म निश्चित किया है, उसके अनुसार युद्धेच्छुक गुरु, शिष्य अथवा नारायण ही क्यों न हो, उन सब पर प्रहार करना चाहिए ।६।

जीवतो राजभोग स्यान्मृत स्वर्गे प्रमोदते ।
युद्धे जयो वा मृत्युर्वा क्षत्रियाणा सुखावह ।७।
देवत्व भूपतित्व वा विषयाविष्टकामिनाम् ।
उन्मदाना भवेदेव न हरे पादसेविनाम् ।८।
त्व सेवक: स चापीशस्त्व निष्काम स चाप्रद्भ ।
युवयोर्युद्धमिलन कथ मोहाद्भविष्यति ।९।
द्वन्द्वातीते यदि द्वन्द्वमीश्वरे सेवके तथा ।
देहावेशाल्लीलयैव सा सेवा स्यात्तथा मम ।१०।
देहावेशादीश्वरस्य कमाद्या दैहिका गुण ।
मायाङ्ग यदि जायन्ते विषयाश्च न कि तथा ।११।
ब्रह्मतो ब्रह्मतेशस्य शरीरित्वे शरीरिता ।
सेवकस्याभेददृशस्त्वेव जन्मलयोदया: ।१२।

यदि युद्ध भूमि से सकुशल लौट आवे तो वह अखण्ड राज्य का भोगने वाला होता है और यदि मृत्यु हो जाय तो स्वग की प्राप्ति होती है। इस प्रकार क्षत्रियो के लिये विजय और मरण दोनो मे ही सुख की उपलब्धि है।७। सुशान्ता ने कहा—हे नाथ ! कामी अथवा विषयासक्त पुरुषो के लिए ही युद्ध मे विजय अखण्ड राज्य के देने वाली और मृत्यु देवत्व प्रदान करने वाली होती है। परन्तु हरि-चरणो के सेवको को उससे क्या प्रयोजन है ? ।८। आप हरि-सेवक है। वह ईश्वर आप निष्काम को फल प्रदान नही करेंगे। तब आप दोनो मे मोह पूर्वक युद्ध कैसे सभव है ? ।९। शशिध्वज बोले—परम पुरुष परमात्मा तो सुख दु.ख रूपी सब द्वन्दो से परे है। परन्तु उनके देह धारण कर लेने पर उन ईश्वर और सेवक मे युद्ध होने लगे तो उसे

सेवा-स्वरूप विलास लीला मात्र ही समझना चाहिये ।१०। ईश्वर के अवतार धारण करने पर कामादि माया अंश रूप दैहिक गुणों का समन्वित होना भी अनिवार्य है। जब कामादि विषयों का आरोपित होना देह-धर्म ही है, तो उनके शरीर में भी वह क्यों नहीं व्याप्त होंगे ? ।११। पूर्ण ब्रह्मभाव सम्पन्न ईश्वर ब्रह्म कहे जाते हैं और जब वह शरीर धारण कर लेते हैं तब उन्हें शरीरिता कहते हैं। सेवक की भेद दृष्टि के लय होने अर्थात् अभेद-ज्ञान की उपलब्धि होने पर उनका जन्म लय और उदय भी वैसी प्रकार सम्भव है ।१२।

सेव्यसेवकता विष्णोर्माया सेवेति कीर्तिता ।
द्वैताद्वैतस्य चेष्टैषा त्रिवर्गजनिका सताम् ।१३।
अतोऽहं कल्किना योद्धुं यामि कान्ते स्वसेनया ।
त्वं तु पूजय कान्तेऽद्य कमलापतिमीश्वरम् ।१४।
कृतार्थाऽहं त्वया विष्णुसेवासमिलितात्मना ।
स्वामिन्निह परत्रापि वैष्णवी प्रथिता गतिः ।१५।
इति तस्या वल्गुवाग्भिः प्रणतायाः शशिध्वजः ।
आत्मानं वैष्णवं मेने साश्रुनेत्रो हरिं स्मरन् ।१६।
तामालिङ्ग्य प्रमुदितः शूरैर्बहुभिरावृतः ।
वदन्नाम स्मरन्रूपं वैष्णवैर्योद्धुम ययौ ।१७।
गत्वा तु कल्किसेनाया विद्राव्य महतीं चमूम् ।
शय्याकर्णगणैर्वीरैः सन्नद्धैरुद्यतायुधैः ।१८।

सेव्य-सेवक भाव ही सेवा है। यह कार्य विष्णु-माया का ही है। इस द्वैताद्वैत चेष्टा के द्वारा ही सत्कर्मी पुरुष त्रिवर्ग को प्राप्त कर लेते हैं ।१३। हे कान्ते ! यही कारण है कि मैं अपनी सेना के सहित कल्किजी से युद्ध करने के लिए प्रस्थान कर रहा हूँ। हे प्रिये ! इधर तुम कमलापति भगवान् विष्णु का पूजन करो ।१४। सुशान्ता ने कहा— हे नाथ ! आप विष्णु सेवा द्वारा उन्हीं में लीन हो गये, इससे मैं भी धन्य हो गई हूँ। इहलोक और परलोक में भगवान् विष्णु की सेवा के

अतिरिक्त अन्य कोई गति नही ।१५। सुशान्ता के यह विनम्र वचन सुन कर राजा के नेत्रो मे हर्षाश्रु छा गये और वे अपने को परम वैष्णव मानते हुए भगवान् विष्णु का स्मरण करने लगे ।१६। उन्होने अपनी प्रिय पत्नी को हृदय से लगा लिया और फिर अपने वीर वैष्णव सैनिको के सहित विष्णु नाम का स्मरण करते हुए रण भूमि के लिये चल दिये ।१७। उन्होने कल्कि-सेना मे प्रविष्ट होकर उनकी विशाल-सेना को द्रवित कर दिया । उस समय महाबली शय्या कर्णगण आयुधो से सुसज्जित हुए उनसे युद्ध मे तत्पर हुए ।१८।

शशिध्वजसुत: श्रीमान्सूर्यकेतुर्महाबल ।
मरुभूपेन युयुधे वैष्णवो धन्विनां वर: ।१९।
तस्यानुजो बृहत्केतु: कान्त: कोकिलनिस्वन: ।
देवापिना स युयुधे गदायुद्ध विशारद: ।२०।
विशाखयूपस्तुभूपस्तु शशिध्वजनृपेण च ।
रुधिराश्वो धनुर्धारी लघुहस्त प्रतापवान् ।
रजस्यनेन युयुधे भर्ग्य शान्तेन धन्विना ।२२।
शूलै प्रासैर्गदाघातैर्बाणशक्त्यष्टितोमरै ।
भल्लै खड्गैर्भुशुण्डीभि. कुन्तै. समभवद्रण: ।२३।
पताकाभिर्ध्वजैश्छिन्नैस्तोमरैश्छत्रचामरै
प्रोद्धूतधूलिपटलैरन्धकारो महानभूत ।२४।

महाबली, धनुर्धारी एव परम वैष्णव राज-पुत्र सूर्य केतु राजा मरु से युद्ध करने लगा ।१९। सूर्यकेतु का छोटा भाई बृहत्केतु कोकिल के समान मधुरवाणी वाला और अत्यन्त कमनीय होते हुए भी गदा युद्ध मे पार गत था, वह राजा देवापि के साथ सग्राम मे तत्पर हुआ ।२०। हाथियो से सम्पन्न और विविध प्रकार के शस्त्रास्त्रो से सुसज्जित विशाखयुप-नरेश राजा शशिध्वज से युद्ध करने लगे ।२१। लाल अश्व पर आरोहण किये हुए हस्त लाघव सम्पन्न धनुर्धारी एवं प्रतापी भर्ग्य धूलिमयी पृथिवी पर धनुर्धारी शान्त से युद्ध मे भिड गया ।२२। इस

प्रकार रणक्षेत्र में सब ओर से शूल, प्राम, गदा, बाण, शक्ति, यष्टि, तोमर, भाले, खड्ग, भुशुडी और कुन्त आदि अस्त्र-शस्त्र चलने लगे।२३। उस समय छत्र, चमर, ध्वजा, पताका आदि की छाया और बहुत धूल उडने से रणभूमि मे अन्धकार छा गया।२४।

गगनेऽजुघना देवा केवा वास न चक्रिरे ।
गन्धर्वै साधुसन्दर्भैर्गायनैरमृतायनै. ।२५।
द्रष्टु समागता. सर्वे लोका. समरमद्भुतम् ।
शखदुन्दुभिसन्नादैरास्फोटैर्बृ हितैरपि ।।२६
ह्रेषितैर्योधनोत्कुष्टैर्लोकावमूका इभवन् ।
रथिनो रथिभि साक पदात्राश्च पदातिभि ।।२७।।
हया हयैरिभाश्चेभै समरोऽमरदानवै ।
यथामवत्स तु घनो यमराष्ट्रविवर्द्धन २८।।
शशिध्वजचमूनाथै कल्किसेनाधिप सह ।
निपेतु सैनिका भूमौ छिन्नबाव्हङ्घ्रिकन्धरा: ।२९।।
धावन्तोऽतिब्रुवन्तश्च विकुर्वन्तोऽसृगुक्षिता ।
उपर्युपरि सच्छन्ना गजाश्वरथर्मर्दिता: ।।३०।।

गगन मण्डल मे स्थित हुए देवगण इस सग्राम को देख रहे थे। गधर्व भी अमृत-ध्वनि मे गाते हुए उस युद्ध को देखने के लिए आ गये थे।२५। सभी लोक उस अद्भुत सग्राम को देखने के उद्देश्य से वहाँ आ गये थे। शख और नक्कारे बज रहे थे। परस्पर धौल मारने से, हाथियो की चिघाड से, अश्वो के हिनहिनाने से तथा शस्त्रास्त्रो के टकराने से जो शब्द निकल रहे थे, उनके मिलने से रणभूमि गूँज रही थी। सभी लोक मूक जैसे लग रहे थे, क्योकि किसी को किसी की बात सुनाई नही देती थी, रथी रथी से, पैदल पैदल से, घुडसवार घुडसवार से भिड रहे थे। देवासुर-सग्राम के समान भीषण यह युद्ध यमराष्ट्र की वृद्धि कर रहा था।२६-२८। कल्किजी के सेनापतियो से भिडे हुए शशिध्वज के सैनापति एवं वीरगण शिर कटा कर पृथिवी पर गिर रहे थे।२९।

आहत होकर कोई भाग रहा है, कोई चीत्कार कर रहा है, कोई आर्त्त-नाद कर रहा है, किसी पर रक्त की धार पड रही है, कोई एक-दूसरे से गुँथे हुए ही पृथिवी पर गिर रहे हैं तथा कोई हाथी या अश्व के पावो अथवा रथो के पहियो से ही कुचले जा रहे हैं।३०।

निपेतु प्रधने वीरा. कोटिकोटिसहस्रशः ।
भूते सानन्दसन्दोहा. स्रवन्तो रुधिरोदकम् ॥३१॥
उष्णीषहसा सच्छिन्न गजरोधोरथप्लवा. ।
करोरुमीनाभरणमसिकाच्छानवालुका ३२
एव प्रवृत्ता सग्रामे नद्य सद्योऽतिदारुणा ।
सूर्यकेतुस्तु मरुणा सहितो युयुधे बली ॥३३॥
कालकल्पो दुराधर्षो मरुं बाणैरताडयत् ।
मरुस्तु तत्र दशभिर्मार्गणैरर्दयद्भृशम् ॥३४॥
मरुबाणाहतो वीरा सूर्यकेतुरमर्षित ।
जघान तुरगान्कोत्पापदोद्घातेन तद्रयम् ॥३५॥
चूर्णयित्वाऽथ तेनापि तस्य वक्षस्यताडयत् ।
गदाघातेन तेनापि मरुर्मूर्च्छामवापह ॥३६॥

इस प्रकार, इस युद्ध मे हजारों करोड वीर नाश को प्राप्त हुए। रणक्षेत्र मे रक्त की नदी बह चली। इस नदी के प्रवाह को देख कर भूत-पिशाचादि अत्यन्त आनन्दित हुए।३१। इस लोहित नदी मे बहती हुई पगडिया सरोवरो मे सुशोभित हंस के समान प्रतीत होती थी। उसमें गिरे हुए हाथी ऐसे लगते थे जैसे टापू हो। रथ उसमे नावो के समान तैरने लगे और कटे हुए हाथ-पाँव मच्छ जैसे लगने लगे। उसमे गिरे हुए खड्ग ऐसे लगते थे मानो स्वर्णिम रेती चमक रही हो।३२। इस प्रकार रणक्षेत्र मे यह अत्यन्त दारुण नदी बहने लगी। सूर्यकेतु मरु के साथ युद्ध कर रहा था।३३। काल के समान विकट सूर्यकेतु के बाणो से मरु आहत हो गये तब मरु ने भी दश बाणो से सूर्यकेतु को आहत कर दिया।३४। मरु के बाणो से आहत हुए सूर्यकेतु ने मरु के सभी अश्व

मार डाले और पदाघात से रथ तोड डाला। फिर मरु के हृदय पर भीषण गदाघात किया, जिससे वह मूर्छित होकर पृथिवी पर गिर पडे ।३५–३६ ।

सारथिस्तमपोवाह रथेनान्येन धर्म्मवित् ।
बृहत्केतुश्च देवापि बाणै प्राच्छादयद्बली ।।३७।।
धनुर्विकृष्य तरसा नीहारेण यथा रविम् ।
स तु बाणमय वर्ष परिवार्य निजायुधै ।।३८।।
बृहत्केतुं दृढ जघ्ने कङ्क पत्रै शिलाशितै. ।
भिन्न शूलमथालोक्य धनुर्गृह्य पतत्रिभि ।।३९।।
शितधारं स्वर्ण पुखैर्गाद्ध्रपत्रैरयोमुखै ।
देवापिमाशुगैर्जघ्ने बृहत्केतु ससैनिकम् ।।४०।।
देवापिस्तद्धनुर्दिव्य चिच्छेद निशितै शरै ।
छिन्नधन्वा बृहत्केतु· खड गपाणिर्जिघासया ।।४१।।

तब मरु का धर्मवित् सारथि उन्हे उठा कर अन्य रथमे ले गया। उधर महाबली बृहत्केतु ने देवापि पर बाण-वर्षा की ।३७। जैसे सूर्य कुहरे से आच्छादित हो जाता है, वैसे ही बाणो से आच्छादित देवापि ने तुरन्त धनुष लेकर शत्रु की बाण वर्षा को अपनी बाण वर्षा से काट दिया।३८। बृहत्केतु ने शान चढ़े हुए बाणो से अपने शूल को भी नष्ट हुआ देख कर पुन; धनुष उठाया और उस पर स्वर्ण जटित, गृद्ध पख के समान तथा लौह-मुख वाले तीक्ष्ण बाण चढा कर देवापि पर सैन्य सहित भीषण प्रहार किये ।३९–४०। परन्तु बृहत्केतु के उस दिव्य धनुष को देवापि ने अपने तीक्ष्ण बाणो से काट दिया। तब देवापि को मारने के विचार से वृहत्केतु ने हाथ मे खड्ग ग्रहण किया ।४१।

देवापेः सारथि साश्व जघ्ने शूरो महामृधे ।
स देवापिर्धनुस्त्यक्त्वा तलेनाहत्य त रिपुम् ।।४२।।
भुजयोरन्तरानीय निष्पिपेष स निर्द्दयः ।
तं द्वियष्ठवर्ष निष्क्रान्तं मूर्च्छितं शत्रुणार्द्दितम् ।।४३।।

अनुज बीक्ष्य देवापिमूर्ध्नि सूर्यध्वजोऽवधीत् ।
मु ष्टना वज्रपातेन सोऽपतन्मूच्छितो भुवि ।
मूच्छितस्य रिपु' क्रोधासेनागणमताडयत ।।४४।।
शशिध्वज सर्वजगन्निवास कल्कि पुरस्तादभिसूर्यवर्च्चसम
श्याम पिशङ्गाम्बरमम्बुजेक्षण ।
वृहद्भुज चारुकिरीटभूषिणम् ।४१।
नानामणिव्रातचिताङ्गशोभया निरस्तलोकेक्षणहृत्तमोमयम्
विशाखयू पादिभिरावृत प्रभु ददर्श धर्मेण कृतेन पूजितम् ।।४६

फिर उस घोर युद्ध मे बृहत्केतु ने देवापि के घोड़ो और सारथि को मार डाला । तब देवापि ने भी धनुष छोड कर शत्रु पर हथेली का प्रहार किया ।४२। फिर उसे दोनो भुजाओ मे दबा कर मर्दन करने लगा । उस समय अट्ठाईस वर्षीय वह राजपुत्र बृहत्केतु पीडित होता हुआ मूच्छित हो गया ।४३। अपने छोटे भाई की ऐसी दशा देखकर सूर्यकेतु ने देवापि के मस्तक पर वज्र के समान मुष्टिका-प्रहार किया, इससे देवापि मूच्छित होकर गिर पडा । तब शत्रु को मूच्छित जान कर सूर्यकेतु उसको सेना पर प्रहार करने लगा ।४४। इधर राजा शशिध्वज ने उस रणक्षेत्र में सूर्य के समान तेजोमय, विश्वाधार, कमलाक्ष, पीताम्बर धारी, विशाल भुजा वाले और सुरम्य किरीट से सुशोभित कल्किजी को अपने सामने देखा ।४५। अनेक मणियो से सुसज्जित अङ्ग वाले, प्राणियो के नेत्रो और हृदयों के अन्धकार को नष्ट करने वाले कल्किजी के सब ओर विशाखयूप नरेश जैसे अनेक राजागण नत-मस्तक खडे हैं तथा सत्य और धर्म उनका पूजन कर रहे हैं ।४६।

●●●

तृतीयांश—

नवम अध्याय

हृदि ध्यानास्पदं रूपं कल्केर्दृष्ट्वा शशिध्वजः ।
पूर्णं खड्गधरं चारुतुरगारूढमब्रवीत् ॥१॥
धनुर्बाणधरं चारु-विभूषणवराङ्कम् ।
पापतापविनयाशार्थमुद्यतं जगतां परम् ॥२॥
प्राह तं परमात्मानं हृष्टरोमा शशिध्वजः ।
एह्येहि पुण्डरीकाक्ष ! प्रहारं कुरु मे हृदि ॥३॥
अथवात्मन् बाणभिया तमोऽन्धे हृदि मे विश ।
निर्गुणस्य गुणज्ञत्वमद्वैतस्यास्त्रताडनम् ॥४॥
निष्कामस्य जयोद्योगसहायं यस्य सैनिकम् ।
लोकाः पश्यन्तु युद्धे मे द्वैरथे परमात्मनः ॥५॥
परबुद्धिर्यदि दृढं प्रहर्त्ता विभवे त्वयि ।
शिवविष्णोर्भेदकृते लोकं यास्यामि सयुगे ॥६॥

सूतजी ने कहा—हे ऋषियो ! कल्किजी का हृदय में ध्यान के योग्य, सुन्दर, खड्गधारी एवं तुरंगारूढ पूर्ण स्वरूप देख कर शशिध्वज ने विचार किया ।१। धनुर्बाणधारी सुन्दर आभूषणों से विभूषित जगदीश्वर भगवान् कल्कि का अवतार संसार के पाप-ताप के निवारणार्थ हुआ है ।२। राजा शशिध्वज ने पुलकित शरीर से परब्रह्म कल्किजी के प्रति निवेदन किया—हे पुण्डरीकाक्ष ! आइये, मेरे हृदय पर प्रहार कीजिये ।३। हे परमात्मन् ! मेरे बाणों की मार से बचने के लिए मेरे तमाच्छादित हृदय में आकर छिप जाओ । जो निर्गुण होकर भी गुणों के ज्ञाता हैं, जो अद्वैत होकर भी अस्त्र प्रहार में तत्पर हैं तथा जो निष्काम होकर भी विजय की इच्छा से सैन्य-संहार कर रहे हैं मैं उन्हीं

भगवान् के साथ द्वैरथ युद्ध मे तत्पर हो रहा हूँ। सभी लोक इसका अवलोकन करें ।४–५। मैं आप विभु पर प्रहार करूँगा। परन्तु प्रहार करते समय भी यदि मैं आपको ब्रह्म से भिन्न समझने लगूँ तो शिव और विष्णु मे भेद जानने वाले को जिस लोक की प्राप्ति होती है, मुझे उसी लोक की प्राप्ति हो ।६।

इति राज्ञो वच श्रुत्वा अक्रोध. क्रुद्धवद्‌विभु ।
बाणैरताडयत्सख्य घृतायुधमरिंदमम् ॥७॥
शशिध्वजस्तत्प्रहारमगणय्य वरायुधै. ।
त जघ्ने बाणवर्षेण धाराभिरिव पर्वतम् ॥८॥
तद्‌बाणवर्षभिन्नान्त· कल्कि परमकोपन· ।
दिव्यै शस्त्रास्त्रसघातैस्तयोर्युद्धमवर्त्तत ॥९॥
ब्रह्मास्त्रस्य च ब्रह्मास्त्रे वायव्यस्य च पार्वतै. ।
आग्नेयस्य च पार्ज्जन्यै. पन्नगस्य च गारुडै ॥१०॥
एव नानाविधैरस्त्रैरन्योन्यमभिजघ्नतु· ।
लोका; सपाला सत्रस्ता युगान्तमिव मेनिरे ॥११॥
देवा बाणाग्निसत्रस्ता अगमन्खगमाः किल ।
ततोऽतिवितथोद्योगौ वासुदेवशशिध्वजौ ॥१२॥
निरस्त्रौ बाहुयुद्धेन युयुधाते परस्परम् ।
पदाघातैस्तलाघातैर्मुष्टिप्रहरणैस्तथा ॥१३॥

राजा के इन वचनो को सुन कर क्रोध से परे कल्किजी क्रोधित हो उठे। यह देख कर आयुधधारी एव अरिमर्दन राजा शशिध्वज ने उन पर बाण-प्रहार प्रारम्भ किया ।७। जब राजा ने अपने उस प्रहार को निष्फल हुआ देखा तो वह पर्वत पर वर्षणशील मेघ के समान घोर बाणो की वर्षा करने लगे ।८। उस बाण-वर्षा से कल्किजी का शरीर आहत हो गया। तब वे अत्यन्त क्रोध करके आगे बढे। इस प्रकार दोनो मे घोर युद्ध होने लगा ।९। ब्रह्मास्त्र के द्वारा ब्रह्मास्त्र काटने लगे। पार्वतास्त्र से वायव्यास्त्र, मेघास्त्र से आग्नेयास्त्र और गारुडास्त्र से

सर्पास्त्र नष्ट होने लगे ।१०। इस प्रकार विविध भाँति के दिव्यास्त्रो के द्वारा वे दोनो भीषण प्रहारमे तन्मय थे । इसमे लोक और लोकपाल सभी यह समझते हुए कि कही आज ही प्रलय न हो जाय, अत्यन्त भयभीत हुए ।११। बाणाग्नि का देख कर युद्ध देखने के लिए गगन मण्डल मे एकत्र हुए देवता भयभीत हो गये । दिव्यास्त्रो को व्यथ हुए देख कर कल्किजी और राजा शशिध्वज दोनो बाहु युद्ध के निमित्त अस्त्र त्याग कर उतर पडे । फिर पदाघात, करतलाघात और मुष्टिका–प्रहार से युद्ध होने लगा ।१२–१३ ।

नियुद्धकुशलौ वारौ मुमुदाते परस्परम् ।
वराहोद्धूनशब्देन त तलेनाहनद्धरि· ।१४।
स मूर्च्छितो नृपः कोपात्समुत्थाय च तत्क्षणात् ।
मुष्टिभ्या वज्रकल्पाभ्यामवघ्न त्कल्किमोजसा ।
स कल्किस्तत्प्रहारेण पपात भुवि मूर्च्छित ॥१५॥
धर्म्म. कृतश्च ता तं दृष्ट्वा मूर्च्छित जगदोश्वरम् ।
समागतौ तमानेतु. कक्षे तौ जगृहे नृप ॥१३॥
कल्कि वक्षस्युपादाय लब्धार्त प्रययौ गृहम् ।
युद्धेन नृपाणामन्येषा पुत्रौ दृष्ट्व सुदुर्ज्जयौ ॥१७॥

दोनो ही रणविद्या मे अत्यन्त कुशल थे और परस्पर एक दूसरे के कौशल को देखते हुए प्रसन्न हो रहे थे। सृष्टि के आरम्भ मे पृथिवी का उद्धार करने के लिए वाराह भगवान् ने जैसा शब्द किया था, कल्किजी द्वारा किये गये करतलाघात से वैसा ही भीषण शब्द हुआ ।१। उस आघात से राजा शशिध्वज मूर्च्छा को प्राप्त हो गए फिर तुरन्त ही सचेत होकर उन्होने कल्किजी पर वज्र के समान मुष्टि प्रहार किया, जिससे कल्किजी अचेत होकर पृथिवी पर लेट गये ।१५। तब जगत्पति कल्किजी को मूर्च्छित देख कर धर्म और सत्युग वहाँ आकर उन्हे ले जाने लगे । परन्तु राजा शशिध्वज ने उन दोनो को कांख मे दबा लिया ।१६। और कल्किजी को अङ्क मे उठा कर कृत कृत्य होते हुए

उन्हे अपने घर ले गये और सोचने लगे कि मेरे दोनो पुत्रो को भी युद्ध मे कोई राजा जीत नही सकता है ।१७।

कल्कि सुराधिपपति प्रधने विजित्य धर्म्म कृतञ्च ।
निजकक्षयुगे निधाय । हर्षोल्लसद्धृदय उत्पुलक ।
प्रमाथी गत्वा गृह हरिगृये ददृशे सुशान्ताम् ।।१८।।
दृष्ट्वाव तस्या. सुललितमुख वैष्णवीनाञ्च मध्ये
गायन्तीना हरिगुणकथारतामथ प्राह राजा ।
देवादाना विनयवचसा शम्भले जन्मनावा ।
विद्यालाभ परिणयविधि म्लेच्छपाषण्डनाशम् ।।१९।।
कल्कि: स्वय हृदि समायमिहागोऽद्धा मूर्च्छिच्छ-
लेन तव सेवनीक्षणार्थम् । धर्म्म कृतञ्च मम कक्षा-
युगे सुशान्ते ! कान्ते विलोकय समर्च्चय सविधेहि ।।२०।।
इति नृपवचसाविनोदपूर्णा हरिकृत धम्म यु़त प्रणम्य नाथम्
सह निजसखिभिर्ननर्त्त रामा हरिगुणकीर्त्तनवर्त्तना विलज्जा।।

इस प्रकार देवराज इन्द्र के भी स्वामी कल्किजी को हरा कर और धर्म तथा सत्युग को कांख दवा कर राजा शशिध्वज प्रसन्न हृदय से सेनाओ का मर्दन करता हुआ अपने घर को गया और वहाँ उसने अपनी भार्या सुशान्ता को विष्णु मन्दिर मे स्थित पाया ।१८। उसके चारो ओर वैष्णवी नारियाँ बैठ कर विष्णु-गुण-गान में तन्मय थी । राजा ने सुशान्ता का सुन्दर मुख देखते हुए कहा—हे सुशान्ते ! देवताओ की प्रार्थना पर जो शम्भल ग्राम मे अवतीर्ण हुए हैं और जिन्होने विद्या प्राप्त कर म्लेच्छो और पाखडियो को नष्ट कर दिया है, वही हृदयो मे विहार करने वाले कल्कि भगवान अपनी माया द्वारा मूर्च्छा रूपी छल से आवृत होकर तुम्हारी शक्ति की परीक्षा लेने के निमित्त यहाँ पधारे हैं । मेरी काँखो मे यह धर्म और सत्युग दोनो दबे हुए है, तुम इनका पूजन करो ।१९-२०। राजा के यह विनोदपूर्ण वचन सुन नर रानी बडी प्रसन्न हुई और धर्म तथा सत्युग के सहित कल्किजी को उसने प्रणाम किया । फिर लज्जा को छोड कर सखियो के सहित हरि नाम संकीर्त्तन और नृत्य करने मे तत्पर हुई ।२१।

तृतीयांश —

दशम अध्याय

जयहरेऽमराधीशसेवित तव पदाम्बुज । भूरिभूषणम्
कुरु ममाग्रतः साधुसत्कृत त्यज महामते ! मोहमात्मन. ॥१॥
तव वपुर्जगद्रूपसम्पदा विरचितं सता मानसे स्थितम् ।
रतिपतेर्मनोमोहदायक कुरु विचेष्टित कामलम्पटम् ॥२॥
तव यशो जगच्छोकनाशन मृदुकथामृतप्रीतिदायकम् ।
स्मितसुधोक्षित चन्द्रवन्मुख तवकरोत्वल लोकमङ्गलम् ॥३॥
मम पतिस्त्वय सर्वदुर्जयो यदि तवाप्रिय कर्मणाचरेत् ।
जहि तदात्मन. शत्रुमुद्यत कुरु कृपा न चेदोदृगीश्वर ॥४॥
महदहयुत पञ्चमात्रया प्रकृतिजायया निर्म्मित वपु ।
तव निरीक्षणाल्लीलया जगत्स्थितिलयोदयं ब्रह्मकल्पितम् ॥५॥

सुशान्ता बोली—हे हरे ! आपकी जय हो ! महामते ! अब आप अपने इस महोच्छन्न भाव को त्याग कर इन्द्र से भी सेवित, सुन्दर आभूषणों से विभूषित तथा साधुओं के द्वारा सत्कारित अपने चरणारविन्द मेरे समक्ष कीजिये ।१। जगत् की श्रेष्ठ सम्पदा से विरचित तथा साधुओं के हृदय में विद्यमान रहने वाला आपका यह देह कामदेव को भी मोहित करने वाला है । अब आप हमारी कामना पूर्ण कीजिये ।२। आपके यशगान से जगत् के शोक नष्ट होते हैं, आपके मुस्कान सुधा सम्पन्न चन्द्र वदन से निकली हुई मधुर वाणी सब को प्रसन्न करती है । हे प्रभो ! आपका यह मुख लोककल्याण के करने

वाला है।३। मेरे सर्व दुर्जय पति के द्वारा यदि आपका कोई अपराध बन पड़ा हो तो भी इनके प्रति शत्रु-भाव न रख कर इन पर कृपा करिये, अन्यथा कोई आपको कृपामय ईश्वर नहीं कहेगा।४। आपकी पत्नी प्रकृति महत्तत्व, अहंकार और पंचतन्मात्र के द्वारा देह रचती है। आपके ही निरीक्षण में लीला से ही ब्रह्म कल्पित विश्व मे सृष्टि, स्थिति और लय का क्रम चलता है।५।

भूविषन्मरुद्वारितेजसा राशिभि. शरीरेन्द्रयाश्रितैः ॥
त्रिगुणया स्वया मायया विभो कुरु कृपा भवत्सेवनार्थिनाम्
तव गुणालय नाम पावन कलिमलापहं कीर्तयन्ति ये।
भवभयक्षय तापनाविना मुहुरहो जना. ससरन्ति नो ।।७॥
तव जन्म सता मानवर्द्धन निजकुलक्षय देवपालकम्।
कृतयुगार्पक धर्म्मपूरक कलिकुलान्तक शन्तनोतु मे ॥८॥
मम गृहं पतिपुत्रनप्तृक गजरथैर्ध्वजैश्चामरैर्धनै ।
मणिवरासनसत्कृतिं विना तवा पदाब्जयो. शोभयन्ति किम्
तव जगद्वपुः सुन्दरस्मित मुखमनिन्दित सुन्दरारवम् ।
यदि नमे प्रिय वल्गुचेष्टिते परिकरोत्यहो मृत्युरस्त्विह ॥१०॥

हे देव ! पृथिवी, जल, तेज, वायु और आकाश तत्व से युक्त यह पंच भूतात्मक शरीर इन्द्रियो के आश्रित रहते हैं। अपनी त्रिगुणात्मिका माया से अपने भक्तो पर कृपा कीजिये।६। हे प्रभो! आपके नाम गुण-कीर्तन से कलियुग के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। आपका वह नाम अनन्त गुणो से युक्त और भवभय का नाश करने वाला है, जो संसार ताप से पीडित प्राणी उसका स्मरण करते हैं, उनका जन्म-मरण रूप बंधन कट जाता है।७। आपका यह अवतार साधुओ का मान बर्द्धक, कलिकुल नाशक, देवताओ का पालक, धर्म पूरक तथा सत्युग का पुनः स्थापक है। आपके इस अवतार से हमारा कल्याण हो।८। मेरे घर मे पति, पुत्र, पौत्र, गज, रथ, ध्वज, चमर, धन और मणि जटित श्रेष्ठ आसनादि सब कुछ वर्तमान हैं। परन्तु आपके

चरणारविन्दो के पूजन किये बिना उनकी शोभा नही हो सकती ।६। हे जगद्रूप ! सुन्दर मुस्कान से सुशोभित, मधुर वाणी से विभूषित, सुरम्य चेष्टा से युक्त आपका यह मुख यदि हमारा प्रिय नही करता रहेगा तो हमारी तत्काल मृत्यु ही हो जायगी ।१०।

हयचरभयहरकरहरशरणखरतरवरदशबलमदन ।
जयहतपरभरभववरनशनशशधरशतसमरसभरवदन ।।११।।
इति तस्याः सुशान्ताया गीतेन परितोषित ।
उत्तस्थौ रणशय्यायाः कल्किर्युद्धस्थवीरवत् ।।१२।।

सुशान्ता पुरतो दृष्ट्वा कृत वामे तु दक्षिणे ।
धर्म शशिध्वज पश्चात्प्राहो ति व्रीडितानन ।।१३।।

का त्व पद्मपलाशाक्षि ! मम सेवार्थमुद्यता ।
कान्ते शशिध्वजः शूरो मम पश्चादुपस्थित ।।१४।।

हे धर्म्म ! हे कृतयग ! कथमत्रागता वयम् ।
रणाङ्गण विहायास्याः शत्रोरन्त पुरे वद ।।१५।।

आप आश्वारोही सब को अभय देते हुए विचरते हैं ? आपके तीक्ष्ण बाणो के प्रहार से जो वीर पुरुष युद्ध मे मृत्यु को प्राप्त होते हैं, उनका आप ही प्रतिपालन करते हैं। आपके मुख मण्डल पर सैकडो चन्द्रमाओ की आभा चमकती है। शिव और ब्रह्मा भी सदा आपके आश्रय की याचना करते रहते है ।११। सुशान्ता द्वारा किये गये इस प्रकार के विनय-गान से सन्तुष्ट होकर कल्किजी उसी प्रकार उठ पडे, जिस प्रकार रणक्षेत्र मे मूर्च्छित वीर उठ जाता है ।१२। उन्होने अपने सामने रानी शान्ता को, वाम पार्श्व मे सत्युग और दक्षिण पार्श्व मे धर्म को और अपने पीछे राजा शशिध्वज को खडे देखा तो लज्जा से मुख नीचा करके बोले ।१३। हे कमलपत्र जैसे नेत्र वाली ! तुम कौन हो और मेरी सेवा में क्यों तत्पर हुई हो ? यह बलवान् राजा शशिध्वज मेरे पीछे क्यो उपस्थित है ? ।१४। हे धर्म ! हे सत्युग ! हम युद्ध क्षेत्र

को छोड कर शत्रु के अन्त:पुर मे क्यो आ गये यह ? सब मुझे बताओ ।१५।

शत्रुपत्न्य कथं साधु सेवन्ते मामरि मुदा ।
शशिध्वज. शूरमानी मूर्च्छितं हन्ति नो कथम् ।।१६।।
पाताले दिवि भूमौवा नरनागसुराऽसुरा· ।
नारायणस्य ते कल्के केवा सेवा न कुर्वते ।।१७।।
यत्सेवकाना जगता मित्राणा दर्शनादपि ।
निवर्तन्ते शत्रुभावस्तस्य साक्षात्कुतो रिपु: ।।१८
त्वया सार्द्धं मम पति: शत्रुभावेन सयुगे ।
यदि योग्यस्तदानेतुं कि समर्थो निजाजयम् ।।१०।।
तत दासो मम स्वामी अह दासी निजा तव ।
आवयो. सप्रसादाय आगतोऽसि महाभुज ।।२०।।

मुझे शत्रु की यह शत्रु–पत्नियाँ प्रसन्न होती हुई क्यो परिचर्या कर रही हैं ? जब मैं मूर्च्छित हो गया था, तब इन शूर एव मानी राजा शशिध्वज ने मेरा सहार क्यो नही कर दिया ? ।१६। रानी बोली—पाताल, स्वर्ग अथवा पृथिवी पर, नाग, सुर और असुर मे ऐसा कौन है जो भगवान् कल्कि की सेवा नही करता ? ।१७। संसार जिनका सेवक और मित्र है तथा जिनके दर्शन मात्र से शत्रु भाव नष्ट हो जाता है, क्या उनका कोई प्रत्यक्ष रूप से कभी शत्रु हो सकता है ? ।१८। मेरे पति यदि आपके प्रति शत्रु-भाव रख कर आपसे युद्ध करते तो क्या वह आपको अपने घर मे इस प्रकार ले आते ? ।१९। हे महाभुज ! मेरे पति आपके दास हैं, इसलिए मैं भी आपकी दासी हूँ। इस प्रकार हम पर प्रसन्न होकर ही आप स्वय यहाँ पधारे हैं ।२०।

अह तवैतयोर्भक्तया नामरूपानुकीर्तनात् ।
कृतार्थोऽस्मि कृतार्थोऽस्मि कलिक्षव ।।२१।।
अधुनाह कृतयुग तव दासस्य दर्शनात् ।
त्वमोश्वरो जगत्पूज्यसेवकस्यास्य तेजसा ।।२२।।

दण्डय मा दण्डय विभो योद्‌धृ-न्वादुद्यतायुधम् ।
येन कामादिरागेणत्वयात्मन्यपि वैरिता ॥२३॥

इति कल्किर्वचस्तेषा निशम्य हसितानन ।
त्वया जितोऽस्मीति नृप पुन पुनरुवाच ह ॥२४॥

तत· शशिध्वजो राज युद्धादाहूय पुत्रकान् ।
सुशान्ताया मति बुद्धा रमा प्रादात्सकल्कये ॥२५॥

धर्म ने कहा—हे कलि का नाश करने वाले कल्किजी ! यह राजा–रानी दम्पति जिस प्रकार आपकी भक्ति करते हुए आपका नाम-सकीर्त्तन एव स्तोत्र करते है, उसे देख कर मैं कृतार्थ हो गया—कृतार्थ हो गया ।२१। सत्युग बोला—हे प्रभो ! आज आपके इस सेवक का दर्शन पाकर तो आवश्य ही मेरा सत्युग नाम यथार्थ हो गया । इस सेवक ने अपने तेज से आपको भी जगत्पूज्यत्व और ईश्वरत्व से परिपूर्ण कर दिया ।२२। राजा शशिध्वज बोले—हे जगदीश्वर ! मैंने काम क्रोध आदि विषयो के वशीभूत होकर ही आप ईश्वर एव साक्षात् अपने आत्मा के प्रति शत्रुता करके आपके देह पर अस्त्र प्रहार किया है ।२३। राजा के वचन सुन कर कल्किजी ने मुसकराते हुए बारम्बार कहा—हे राजन् ! आपने मुझे सब प्रकार जीत लिया है ।२४। इसके पश्चात् राजा शशिध्वज ने रणभूमि से अपने पुत्रो को वापिस बुला लिया और फिर रानी सुशान्ता की प्रेरणा से अपनी रमा नाम की कन्या कल्किजी को प्रदान कर दी ।२५।

तदैत्य मरुदेवापी शशिध्वजसमाहूतौ ।
विशाखयूपभूपश्च रुधिराश्वश्च संयुगात् ॥२६॥

शयाकर्णनृपेणापि भल्लाट पुरमाययु ।
सेनागणैरसख्यातै: सा पुरी मर्द्दिताभवत् ॥२७॥

गजाश्वरथसबाधै. पत्तिच्छत्ररथध्वजैः ।
कल्किनापि रमायाश्च विवाहोत्सवसम्पदाम् ॥२८॥

द्रष्टुं समीयुस्त्वरिता हर्षात्सबलवाहनाः ।
शङ्खभेरी मृदङ्गाना वादित्राणाञ्च निस्वनैः ॥२९॥
नृत्यगीतविधानैश्च पुरस्त्रीकृतमङ्गलैः ।
विवाहो रमयाकल्केरभूदतिसुखावहः ।३०।

उस अवसर पर मरु, देवापि, विशाखयूपनरेश और रुधिराश्व आदि सभी कल्कि-पक्ष के राजागण शशिध्वज द्वारा आमन्त्रित किये गये। वे सब राजा शय्याकरण को साथ लेकर रणभूमि से भल्लाट नगरी मे आ पहुँचे। उस समय असख्य कल्कि-सेना के पाँवो से वह नगरी मर्दिता हो गई।२६-२७। गज, अश्व, रथ, पदाति, छत्र और रथ की ध्वजाएँ आदि सभी से सुशोभित विवाह मण्डप मे कल्किजी और रमा का विवाहोत्सव सम्पन्न हुआ।२८। हर्ष से प्रफुल्लित हुए सभी व्यक्ति अपने दल बल और वाहनो के सहित उस उत्सव को देखने के लिए वहाँ आये। राजकुमारी रमा का विवाह शख, भेरी, मृदग आदि वाद्यो की सुमधुर ध्वनि और पुर-नारियो के श्रेष्ठ मङ्गलाचारो तथा नृत्य-गीतादि के सानन्द सम्पन्न हुआ।२९-३०।

नृपा नानाविधैर्भोज्यै पूजिता विविशु सभाम् ।
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या शूद्राश्चावरजातयः ॥३११॥
विचित्रभोगाभरणाः कल्कि द्रष्टुमुपाविशन् ।
तस्या सभाया शुशुभे कल्कि कमललोचनः ॥३२॥
नक्षत्रगणमध्यस्थ पूर्ण शशधरो यथा ।
रेजे राजगणाधीशो लोकान्सर्वान्विमोहयन् ।६६।
रमापति कल्किमवेक्ष्य भूप सभागत पद्मदलायतेक्षणम् ।
जामातर भक्तियुतेन कर्मणा विबुध्य मध्ये निषसाद तत्रह ।३४

विविध प्रकार भोज्य एव पान-पदार्थों से सत्कार प्राप्त करते हुए राजागण सभा मे प्रविष्ट हुए। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि

सभी वर्ण के लोग अद्भुत आभूषणो और विविध प्रकार की भोग—सामग्रियो को प्राप्त करके उस सभा मे सुशोभित कल्किजी के सब ओर बैठ कर शोभा को प्राप्त होने लगे ।३१-३२। जैसे तारागण के मध्य पूर्ण चन्द्र की अत्यन्त शोभा होती है, वैसे ही सब लोगो के मध्य मे सुशोभित राजाओ के भी स्वामी कल्किजी सब लोको को मोहित करने लगे ।३३। पद्म पलाश जैसे नेत्र वाले कल्किजी ने सभा मे उपस्थित राजाओ आदि के समक्ष रमा का पाणिग्रहण किया। उस समय राजा शशिध्वज भी कल्किजी को जामाता-भाव से देखते हुए भक्ति-युक्त हृदय से सभा मे अत्यन्त शोभा को प्राप्त हुए ।३४।

एकादश अध्याय

तत्राहुस्ते सभामध्ये वैष्णव त शशिध्वजम् ।
मुनिभि कथिताशेष-भक्तिव्यासक्तविग्रहम् ॥१॥
सुशान्ताञ्च कृतेनापि धर्मरण विधिद्युताम् । २॥
युंवा नारायणास्यास्य कल्केः श्वशुरता गतौ ।
वय नृपा इमे लोका ऋषयो ब्राह्मणाश्च ये ॥३॥
प्रेक्ष्य भक्तिवितान वा हरौ विस्मितमानसा. ।
पृच्छामस्त्वामिय भक्ति क्व लब्धा परमात्मनः ॥४॥
कस्य वा शिक्षिता राजन् ! किवा नैसर्गिकी तव ।
श्रोतुमिच्छामहे राजन् ! त्रिजगज्जनपावनीम् ।
कथा भागवती त्वत्तः ससाराश्रमनाशिनीम् ॥५॥

सूतजी ने कहा—मुनियो के द्वारा अशेष कहे गए भक्तिमय देह वाले, विष्णु भक्त, धर्म और सत्युग के साथ स्थित एव रानी सुशान्ता के सहित शोभायमान् राजा शशिध्वज की ओर देखते हुए आगत राजा आदि व्यक्तियो ने कहा। १-२। राजागण बोले—अब आप साक्षात् नारायण के अवतार भगवान् कल्कि के श्वसुर-पद को प्राप्त हुए हैं। परन्तु हम सब राजागण, ऋषिगण और विप्रगण तथा अन्यान्य सभी उपस्थितजन आपकी भक्ति को ऐसे विस्तृत रूप मे देख कर अत्यन्त आश्चर्य को प्राप्त हुए हैं। हम आपसे यह पूछते है कि परमात्मा की

यह शक्ति आपको किस प्रकार उपलब्ध हो सकी ? ।३४। हे राजन् ! इस भक्ति की क्या आपने किसी से शिक्षा प्राप्त की है ? अथवा यह भक्ति आप मे स्वाभाविक रूप से ही उत्पन्न हो गई है ? हे राजन् ! आपकी इस भगद्भक्ति का कारण सुनने की हमे जिज्ञासा है। क्योकि भगवद्भक्ति की यह कथा ससार के आवागमन को नाश करने वाली है ।५।

स्त्रीपु सोर्वयोरस्तत्तच्छ्रुतामोघविक्रमा ।
वृत्त यज्जन्मकर्मादि स्मृति तद्भक्तिलक्षणम् ॥६॥
पुरा युगसहस्रान्ते गृध्रोऽह पूतिमासभुक् ।
गृध्रीय मे प्रियारण्ये कृतनीडो वनस्पतौ ॥७॥
चचार काम सर्वत्र वनोपवनसकुले ।
मृताना पूतिमांसौघै प्राणिना वृत्तिकल्पकौ ॥८॥
एकादा लुब्धक क्रूरो लुलोभ पिशिताशिनौ ।
आवा वीक्ष्य गृहे पुष्ट गृध्र तत्राप्ययोजयत् ॥९॥
त वीक्ष्य जातविश्रम्भौ क्षुधया परिपीडितौ ।
स्त्रीपु सौ पतितौ तत्र मासलोभितचेतसौ ॥१०॥

इस पर राजा शशिध्वज बोले—हे राजाओ ! हम दोनो पति-पत्नी के जो जन्म, कर्म आदि हैं तथा जिस प्रकार हम को भगवद्भक्ति का स्मरण हुआ, वह सब आप सुनिये ।६। एक सहस्र युग पहले की बात है—मैं माँसाहारी गृद्ध था और मेरी यह प्रिया सुशान्ता मेरी पत्नी गृद्धिनी थी। हम दोनो एक विशाल वृक्ष पर नीड बना कर उसमे रहते थे ।७। वन-उपवन आदि स्थानो मे हमारी इच्छानुसार अबाध गति थी। उस समय हम मरे हुए प्राणियो के दुर्गंधित माँस से अपना जीवन-निर्वाह किया करते थे ।८। एक दिन एक क्रूर व्याध ने हमे देख लिया और लोभवश हमे पकडने के लिए उसने अपने पालित गृद्ध को हमारे समक्ष छोड दिया ।९। मैं क्षुधा से व्याकुल था, तभी मैंने उसे देखा मांस के लोभ से हम स्त्री-पुरुष दोनो ही उस पर झपट पडे ।१०।

बद्धावावां वीक्ष्य तदा हर्षादागत्य लुब्धक. ।
जग्राह कण्ठे तरसा चञ्चवाग्रावातपीडित ॥११॥

आवां गृहीत्वा गण्डक्या: शिलायां सलिलान्ति के ।
मस्तिष्क चूर्णयामास लुब्धक· पिशिताशन ।।१२।।
चक्राङ्कितशिलागङ्गामरणादपि तत्क्षणात् ।
ज्योतिर्मयविमानेन सद्यो भूत्वा चतुर्भुजौ ।।१३
प्राप्तौ वैकुण्ठनिलय सर्वलोकनमस्कृतम् ।
तत्र स्थित्वा युगशतं ब्रह्मणो लोकमागतौ ।१४।।
ब्रह्मलोके पञ्चशतं युगानामुपभुज्य वै ।
देवलोके कालवशाद्गत युगचतु.शतम् ।।१५।।

व्याध ने हम दोनो को अपने जाल मे बँधा हुआ देखा तो वह प्रसन्न होता हुआ शीघ्रता से हमारे पास आया और उसने हमारे कण्ठ पकड लिये। तब हम भी उस पर अपनी चोचो से आघात करने लगे ।११ तदनन्तर मांस के लोभी उस व्याध ने हम दोनो को पकड कर गण्डकी में स्थिति एक शिला पर पछाड-पछाड कर हमारे मस्तको को चूर्ण कर डाला।१२। गङ्गा का किनारा और चक्रांकित शिला— मरण काल मे इन दोनो क ।सान्निध्यता के प्रभाव से हम उसी समय चतुर्भुज रूप हो गये और तेजस्वी विमान मे चढ कर सब लोको के द्वारा नमस्कृत बैकुण्ठ लोक मे जा पहुँचे। वहाँ सौ युगो तक निवास करने के पश्चात् हमको ब्रह्मलोक की प्राप्ति हुई ।१३-१४। उस ब्रह्मलोक मे पाँच सौ युगो तक सुख भोगने के पश्चात् काल के वश में पड कर देवलोक में गये और चार सौ युगों तक वहाँ सुख भोगते रहे ।१५।

ततो भुवि नृपास्तावद्बद्धसूनुरह स्मरन् ।
हरेनुगृह लोक शालग्रामशिलाश्रमम् ।।१६।।
जातिस्मरत्व गण्डक्या. किं तस्या: कथयाम्यहम् ।
यज्जलस्पर्शमात्रेण महात्म्य महदभुद्तम् ।।१७।।
चक्राकितशिलास्पर्शमरणस्येदृश फलम् ।
न जाने वासुदेवस्य सेवया किं भविष्यति ।।१८।।
इत्यावाहरिपूजासु सर्षविह्वलचेतसौ ।

नृत्यन्तावगायन्तौ विलुठन्तौ स्थिताविह ॥१६॥
कल्केर्नारायणांशस्य अवतार, कलिक्षयः।
पुरा विदितवीर्यस्य पृष्टो ब्रह्ममुखाच्छ्रुत ॥२०॥

हे राजागण ! फिर अब हम इस मर्त्यलोक मे उत्पन्न हुए हैं। परन्तु हमें शालग्राम शिला का वह स्थान और भगवान् विष्णु की कृपा का अभी तक स्मरण है।१६। क्योंकि गण्डकी नदी के तट पर मरण होने पर जन्मो की स्मृति कभी नष्ट नही होती। यह अद्भुत माहात्म्य उस नदी के जल-स्पर्श का ही है।१७। यदि उस चक्रांकित शिला के स्पर्श मात्र से मृत्यु के पश्चात् ऐसा शुभ फल होता है, तो भगवान् वासुदेव की सेवा के फल का तो कहना ही क्या है ?।१८। यही सोचते हुए हम कभी हरि-पूजन मे अपने चित्त को एकाग्र करते हैं, कभी हर्ष से विह्वल होकर नृत्य करने लगते हैं, कभी उनका गुण-गान करते और भक्ति भाव मे मग्न हो ज ते हैं।१६। यह समाचार हमे श्री ब्रह्माजी द्वारा पहिले ही मिल गया था कि कलियुग का क्षय करने के लिए भगवान् नारायण का अंशावतार होगा। इस प्रकार हम इनके पराक्रम को भले प्रकार जानते हैं।२०।

इति राजसभायां स. श्रावयित्वा निजा कथाः।
ददौ गजानामयुतमश्वाना लक्षमादरात् ॥२१
रथानां षट्सहस्रन्तु ददौ पूर्णस्य भक्तित·।
दासीनां युवतीनाञ्च रमानाथाय षट्शतम् ॥२२॥
रत्नानि च महार्घाणि दत्त्वा राजा शशिध्वजः।
मेने कृतार्थमात्मान स्वजनैर्बान्धवैः सह ॥२३॥
सभासद इतिश्रुत्वा पूर्वजन्मोदिताः कथाः।
विस्मयाविष्टमनसः पूर्णं त मेनिरे नृपम् ।२४।
कल्कि स्तुवन्तो ध्यायन्तो प्रशसन्त जगज्जना ।
पुनस्तमाहूराजान लक्षण भक्तिभक्तयोः ।२५।

इस प्रकार उस सभा में अपना पूर्व प्रसंग कह कर राजा शशिध्वज ने भक्ति-भाव पूर्वक कल्किजी को दस सहस्र गज, एक लाख अश्व,

छ सहस्र रथ, छः सौ युवती दासियाँ तथा असख्य रत्नादि प्रदान करके अपने स्वजनो और बाधवो के सहित अपने को धन्य माना।२१-२३। राजा शशिध्वज के मुख से उनके पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुन कर सभी सभासद् आश्चर्य चकित होकर उन्हे पूर्ण समझने लगे २४। फिर वहाँ उपस्थित सभी जन कल्किजी का भक्तिपूर्वक ध्यान करने लगे। फिर उन्होने भक्तो के लक्षण विषयक प्रश्न राजा शशिध्वज से किया।२५।

भक्तिकाम्यद्भगवतः को वा भक्तो विधानवित्।
कि करोति किमश्नाति क्वा वसति वक्ति किम्।२६।
एतान्वर्णय राजेन्द्र ! सर्व त्व वेत्सि सादरात्।
जातिस्मरत्वात्कृष्णस्य जगता पावनेच्छया।२७।
इति तेषा वच. श्रुत्वा प्रफुल्लवदनो नृप।
साधुवादे समामन्त्र्य तानाह ब्रह्मणोदितम्।२८।
पुरा ब्रह्मसभामध्ये महर्षिगणसकुले।
सनकोनारद प्राह भवद्भिर्यास्त्विहोदिताः।२०।
तेषामनुग्रहेणाह तत्रोषित्वा श्रुताः कथाः।
यास्ता सकथयामीह शृणुध्व पापनाशना.।३०।

राजागण बोले—भगवद्भक्ति क्या है ? विधान के जानने वाला भक्त कौन कहा जाता है ? भक्त का कार्य क्या है ? वह क्या खाता, क्या वार्तालाप करता और कहाँ रहता है ?।२६। हे राजेन्द्र ! आपको सब कुछ विदित है, इस लिए आप कृपया आदरपूर्वक सब बात हमे बतावे। उनकी बात सुन कर राजा शशिध्वज ने हर्षित मुख से उन्हे साधुवाद दिया। फिर जाति स्मरण होने के कारण श्री कृष्ण चरित्र द्वारा ससार को पवित्र करने के उद्देश्य से उन्होने वह सब कहना आरम्भ किया, जो उन्होने ब्रह्माजी के मुख से सुना था।२७-२८। शशिध्वज बोले पुराकाल की बात है—ब्रह्माजी की सभा के मध्य महर्षिगण विराजमान थे, उसी अवसर पर जो कुछ सनकादि ने नारदजी से पूछा था, वही आपको बताता हूँ।२९। उस समय मैं भी वहाँ उपस्थित था, इसलिए

उनकी कृपा से मैंने उस सब प्रसग को सुना था । हे पापनाशन उपस्थित सज्जनो ! जो बात मैंने सुनी थी । वही कहता हूँ, आप लोग सुनिये ।३०।

का भक्ति संसृतिहरा हरौ लोकनमस्कृता ।
तामादौ वर्णय मुने नारदावहिता वयम् ।३१।
मन षष्ठानीन्द्रियाणि सयम्य परया धिया ।
गुरावपि न्यसेद्देह लोकतन्त्रविचक्षण. ।३२।
गुरौ प्रसन्ने भगवान्प्रसीदति हरि. स्वयम् ।
प्रणवाग्निप्रियामध्ये मवरण तन्निदेशत ।३३।
स्मरेदनन्यया बुध्या देशिक. सुसमाहित ।
पाद्यार्घ्याचमनीयाद्यै. स्नानवासोविभूषणैः ।३४।
पूजयित्वा वासुदेवपादपद्मं समाहित ।
सर्वाङ्गसुन्दर रम्य स्मरद्धृत्पद्ममध्यगम् ।३५।

सनक ने कहा—हे मुने ! हे नारद ! किस प्रकार की हरि-भक्ति से जन्म नही लेना होता तथा कौन सी भक्ति प्रशसा के योग्य है । आप उसी को पहले कहिये । हम सुनने के इच्छुक हैं ।३१। नारद बोले—लोकतन्त्र के ज्ञाता साधक को श्रेष्ठ बुद्धि के द्वारा पांचो ज्ञानेन्द्रिय और छठवे मन का निग्रह करते हुए ज्ञाना-श्रय पूर्वक गुरु के चरणो मे अपना शरीर अर्पण कर देना चाहिये ।३२। क्योकि गुरु के प्रसन्न होने पर भगवान् श्रीहरि भी प्रसन्न होते हैं । प्रथम प्रणवाग्नि प्रिया के मध्य मे ॐ, का अनन्य हृदय से स्मरण करे । फिर पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय आदि तथा स्नान और वस्त्राभूषणो से युक्त होकर सावधान चित्त से नारायण के चरणारविन्दो का पूजन करे । तदनन्तर हृत्पद्म के मध्य में प्रतिष्ठित सुरम्य और सर्वांग सुन्दर श्रीहरि के स्वरूप का चिन्तन करे ।३३-३५।

एव ध्यात्वा वाक्यनोबुीन्द्रियगणै. सह ।
आत्मानमर्पयेद्विद्वान्हरावैकान्तभाववित् ।३६।

अङ्गानि देवास्त्वेपानु नामानि विदितान्युत ।
विष्णो कल्केरनन्तस्य तान्येवान्यन्न विद्यते ।३७।
सेव्य. कृष्ण सेवकोऽहमन्ये तस्यात्ममूर्त्तय ।
अविद्योपाधयो ज्ञानद्वदन्ति प्रभावदय: ।३८।
भक्तस्यापि हरौ द्वैत सेव्यसेवकवत्तदा ।
नान्याद्विना तमित्येव क्वच किञ्चन विद्यते ।३९।
भक्त. स्मरति त विष्णु तन्नामानि च गायति ।
तत्कर्माणि करोत्येव तदानन्दसुखोदय ।४०।

इस प्रकार ध्यान करने के पश्चात् वाणी, मन, बुद्धि और इन्द्रियो के सहित स्वय को श्रीहरि मे समर्पित कर दे ।३६। भगवान् कल्कि परमदेव एवं अनन्त स्वरूप भगवान् विष्णु के अग हैं। जो सब नाम आपको विदित है, वह भगवान् श्रीहरि के अतिरिक्त और कुछ भी नही हैं ।३७। भगवान् श्री कृष्ण सेव्य और मैं उनका सेवक हूँ तथा ससार भर के सभी प्राणी उन्ही के मूर्त्त रूप हैं। ज्ञानियो का कहना है कि अविद्यारूपी उपाधि के वश मे पड कर ही यह सब उत्पन्न होते हैं ।३८। भक्तो के निमित्त सेव्य-सेवक भाव रूप द्वैत का आविर्भाव होता है। इस प्रकार श्रीहरि के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नही है ।३९। उन्ही भगवान् विष्णु का भक्त सदा स्मरण करता, नाम-गुण कीर्त्तन करता तथा सभी कर्म उनके ही निमित्त किया करता है। इसी कारण उसके लिए आनन्द और सुख की उत्पत्ति होती है ।४०।

नृत्यत्युद्धतवद्रौति हसति प्रैति तन्मना ।
विलुठत्यात्मविस्मृत्या न वेत्ति कियदन्तरम् ।४१।
एवविधा भगवतो भक्तिरव्यभिचारिणी ।
पुनाति सहसा लोकान्सदेवासुरमानुषान् ।४२।
भक्तिः सा प्रकृतिर्नित्या ब्रह्मसम्पत्प्रकाशिता ।
शिवविष्णुब्रह्मरूपा वेदाद्याना वरापि वा ।४३।
भक्ताः सत्वगुणाध्यासाद्रजसेन्द्रियलालसा. ।

तमसा घोरसकल्पा भजन्ति द्ववैतदृग्जना ।४४।
सत्वान्निर्गुणतोमति रजसा विषयस्पृहा ।
तमसा नरक यान्ति ससाराद्वैतधर्मिणि ।४५।

वह विह्वल होकर नाचता, रोता हँसता और तन्मयतापूर्वक विचरण करता है । वह स्वय को भूल कर भक्ति-भाव मे ही डूब जाता है और हरि के अतिरिक्त कही कुछ नही जानता ।४१। यही भगवान् की अव्यभिचारिणी भक्ति है, इसी के प्रभाव से देवता, दैत्य और मनुष्य आदि की सम्पूर्ण सृष्टि सहसा पवित्रता को प्राप्त होती है ।४२। नित्या प्रकृति अथवा ब्रह्म की सम्पदा ही भक्ति रूप मे प्रकट होती है । वही भक्ति वेदादि मे श्रेष्ठ एव शिव, विष्णु और ब्रह्मा स्वरूपिणी हैं ।४३। सत्वगुण के अभ्यास से युक्त द्वैत के जानने वाले मनुष्य इन्द्रिय व्यापार की इच्छा वाले होते हैं और जो तमोगुण से युक्त हैं वे घोर कार्यो का सकल्प किया करते हैं ।४४। द्वैत ज्ञान से युक्त ज्ञानीजन सत्वगुण के व्याप्त होने पर निर्गुणता को प्राप्त होते हैं तथा रजोगुण के व्याप्त होने पर विषयो मे लग जाते हैं और यदि तमोगुण की अधिकता होती है तो वे पुरुष नरक को प्राप्त होते हैं ।४५।

उच्छिष्टमवशिष्ट वा पथ्य पूतमभीप्सितम् ।
भक्ताना भोजनं विष्णोर्नैवेद्यं सात्विक मतम् ।४६।
इन्द्रियप्रीतिजनन शुक्रशोणितवर्द्धनम् ।
भोजनं राजस शुद्धमायुरारोग्यवर्द्धनम् ।४७
अत॰ परं तामसानां कट्वम्लोष्णविदाहिकम् ।
पूतिपर्युषित ज्ञेय भोजनं तामसप्रियम् ।।४८।।
सात्विकानां वनें वासो ग्रामे वासस्तु राजसः ।
तामसं द्यूतमद्यादिसदनं परिकीर्तितम् ।।४९।।
न दाता स हरि॰ किञ्चित्सवेकस्तु न याचक ।
तथापि परमा प्रीतिस्तयोः किमिति शाश्वती ।।५०।।

इत्येयद्मगवत ईश्वरस्य विष्णोर्गुणकथन सनको विबुध्य भक्त्या
सविनयवचनैः सुरर्षिवर्य परिणुत्वेन्द्रपुर जगाम शुद्ध ॥५१॥

भगवान् का शेष बचा हुआ उच्छिष्ट (प्रसाद) तथा इच्छित नैवेद्य ही पवित्र पथ्य स्वरूप है। भक्तो को इसी सात्विक आहार का भोजन करना चाहिये (अर्थात् भोज्य सामग्री भगवान् को अर्पण करके ही प्रसाद रूप मे सेवन करनी चाहिए) ।४६। जो भोजन इन्द्रियो को सन्तुष्ट करने वाला, वीर्य एव रक्त वर्द्धक तथा परमायु के देने वाला एव आरोग्यप्रद है, ऐसा शुद्ध भोजन राजसी कहा जाता है ।४७। कड़ुवा, खट्टा, जलन करने वाला, दुर्गन्ध युक्त तथा वासी भोजन तामसी मनुष्यो को प्रिय है ।४८। सतोगुणी पुरुष वन में निवास करते हैं, रजोगुणी मनुष्य ग्राम मे और तमोगुणी द्यूत खेलने के अथवा मद्य पीने के स्थान मे रहते हैं ।४९। भगवान् स्वय अपना हाथ उठा कर किसी को कुछ प्रदान नही करते, और न सेवक ही उनसे कुछ याचना करता है। फिर भी उनमे परस्पर सदा ही परम प्रीति रहती है, यह कैसी विचित्र बात है ? ।५०। पवित्र मन वाले सनक भक्तिपूर्वक नारदजी के द्वारा भगवान् विष्णु का गुण-कथन सुन कर विनम्र वचनो से देवर्षिवर नारदजी की स्तुति और नमस्कार कर देवलोक को चले गये।५१।

तृतीयांश—

द्वादश अध्याय

एतद्वः कथित भूपा. कथनीयोरुकर्मरणा ।
कथा भक्तस्य भक्तेश्च किमन्यत्कथयाम्यहम् ।१।
त्व राजन्वैष्णवश्रेष्ठः सर्वसत्वहिते रत ।
तवावेश. कथ युद्धरङ्गे हिसादिकर्मरिण ॥२॥
प्रायशः साधवो लोके जीवाना हितकारिण. ।
प्राणबुद्धिधनैर्वाग्भि. सर्वेषा विषयात्मनाम् ॥३॥
द्वैतप्रकाशिनी या तु प्रकृतिः कामरूपिणी
सा सूते त्रिजगत्कृत्स्न वेदाश्च त्रिगुणात्मिका ॥४॥
ते वेदास्त्रिजगद्धर्मशासना धर्मनाशना ।
भक्तिप्रवर्तका लोके कामिना विषयैषिणाम ॥५॥
वात्स्यायनादिमुनयो मनवो वेदपारगा ।
वहन्ति बलिमीशस्य वेदवाक्यानुशासिताः ॥६॥
वय तदनुगाः कर्म धर्म निष्ठा रणप्रियाः ।
जिघासन्त जिघासामो वेदार्थकृतनिश्चया. ॥७॥

राजा शशिध्वजं बोले—हे राजाओ ! जिनके असाधारण कर्म कीर्तन के योग्य हैं, उन भक्तो और भक्ति का महात्म्य मैंने कह दिया है। अब और क्या कहूँ ? ।१। राजा बोले—हे राजन् ! आप सब जीवो के कल्याण करने मे तत्पर तथा वैष्णव श्रेष्ठ हैं। फिर आप हिंसादि दोषो से युक्त युद्ध करने में क्यो प्रवृत्त होगये थे ।२। प्रायः साधुजन

विषयासक्त जीवो का हित साधन करने के कार्य में अपने प्राण, बुद्धि, धन तथा वाणी आदि सब कुछ लगा देते हैं ।३। शशिध्वज बोले—त्रिगुणात्मिका प्रकृति ही द्वैतभाव को प्रकाशित करती है । सभी वेदो और तीनो लोको को उत्पन्न करने वाली यह प्रकृति कामरूपिणी है ।४। तीनो लोको मे वेद ही धर्म की व्यवस्था द्वारा अधर्म का नाश करते हुए विषयासक्त कामियो में भी भक्ति का प्रवर्त्तन करते हैं ।५। वेदो के ज्ञाता वात्स्यायन आदि मुनिगणो और मनुओ ने वेदाणी के शासन को मानते हुए परमात्मा के हेतु बलि प्रदान की थी ।६। हम भी उन्ही का अनुगमन करते धर्म पूर्वक युद्ध मे तत्पर होते और वैदिक शिक्षा के अनुसार ही युद्ध मे आततायियो का संहार कर डालते हैं ।७।

अवध्यस्य वधे यावास्तावान्वध्यस्य रक्षणे ।
इत्याह भगवान्व्यास. सर्ववेदाथतत्पर: ।।८।।

प्रयाश्चित्त न तत्रास्ति तत्राधर्मः प्रवर्त्तते ।
अतोऽत्र वाहिनी हत्वा भवता युधि दुर्जयाम् ।।६।।

धर्म कृतश्च कल्किन्तु समानीयागता वयम् ।
एषा भक्तिर्मम मता तवाभिप्रेतमीरय ।।१०।।

अह तदनुवक्ष्यामि वेदावाक्यानुसारत. ।
यदि विष्णु. स सर्वत्र तदा क हन्ति को हतः ।।११।।

हन्ता विष्णुर्हतो विष्णुर्वध. कस्यास्ति तत्र चेत् ।
युद्धयज्ञादिषु वधे न वधो वेदशाशासमात् ।१२।
इति गायन्ति मुनयो मनवश्च चतुर्दश ।

इत्थं युद्धैश्च यज्ञैश्च भजामो विष्णुमीश्वरम् ।१३।
अतो भागवती मायामाश्रित्य विधिना यजन् ।
सेव्यसेवकभावेन सुखी भवति नान्यथा ।१४।

सर्व वेदार्थ के ज्ञानी भगवान् वेद व्यासजी का कथन है कि जो पाप अवध्य के मारने में है वही वध योग्य का वध का न करने मे भी

है ।८। इस प्रकार का आचरण न करना अधर्म है । उसका कोई प्रायश्चित्त भी नही है । इसीलिए मै रणभूमि मे दुर्जय सेना के वध मे तत्पर होकर धर्म, सत्युग और कल्किजी को यहाँ ले आया । मेरे मत मे यही वास्तविक भक्ति है । इस विषय मे आपका अभिप्राय जो हो, वह बताइये ।९-१०। इसके अतिरिक्त मैं वेद-वाणी के अनुसार ही कहता हूँ कि भगवान् विष्णु सर्व-व्यापी हैं । यदि यह यथार्थ है तो फिर कौन किसी को मारता है और कौन मरता है ? ।११। जब मारने वाले विष्णु है, और मरने वाले भी विष्णु ही हैं, तो किसका वध हो सकता हैं ? फिर वेद की ही व्यवस्था है कि युद्ध आदि कर्मो मे जो वध होता है, वह वध नही माना जाता ।१२। यही बात चौदह मनुओ और मुनियो ने भी कही है । हम भी इसी के अनुसार यज्ञो और युद्धो के द्वारा भगवान् विष्णु का पूजन किया करते है । १३। इस प्रकार भगवती माया के आश्रय मे स्थित हुआ साधक विधिवत् सेव्य-सेवक भाव से भगवान् का यजन करके सुखी होता है, अन्य कोई विधि सुख-प्राप्त करने की नही है ।१४।

निमेर्भूपस्य भूपाल ! गुरो शापान्मृतस्य च ।
तादृशे भोगायतने विराग. कथमुच्यताम् ।१५।

शिष्यशापाद्वशिष्ठस्य देहावाप्तिमृतस्य च ।
श्रूयते किल मुक्ताना जन्म भक्तविमुक्तता ।१६।

अतो भागवती माया दुर्बोध्याविजितात्मनाम् ।
विमोहयति ससारे नानात्वादिन्द्रजालवत् ।१७।

इति तेषा वचो भूय· श्रुत्वा राजा शशिध्वज.
प्रोवाच वदता श्रेष्ठो भक्तिप्रवणया धिया ।१८।

बहूना जन्मनामन्ते तीर्थक्षेत्रादियोगत.
दैवाद्भवेत्साधुसगस्तस्मादीश्वरदर्शनम् ।१९।

ततः सालोक्यताम्प्राप्य भजन्त्याहृतचेतसः ।
भक्त्वा भोगाननपमान्भक्तो भवति ससृतौ ।२०।

रजोजुष कर्मपरा, हरिपूजापरा· सदा ।
तन्नामानि प्रगायन्ति तद्रूपस्मरणोत्सुका ।२१।

राजा बोले—हे भूपते ! गुरु वसिष्ठ के शापवश राजा निमि ने देह छोड़ा था । परन्तु आपके इस भोगमय देह मे वैराग्य की उत्पत्ति किस प्रकार हुई ? जब यज्ञान्त मे देवताओ ने उनकी रक्षा करते हुए उस देह में प्रवेश करने की आज्ञा की, तब भी वे अपने छोड़े हुए देह में प्रविष्ट होने मे सहमत न हुए, इसका क्या कारण था ? ।१५। सुना जाता है कि शिष्य के शाप से गुरु वसिष्ठ ने देह त्याग कर पुनः देह को प्राप्त कर लिया । परन्तु, भक्त तो मोक्ष को प्राप्त कर लेता है, तब वह उस विमुक्तता को छोड कर जन्म किस प्रकार धारण करे ? ।१६। इस प्रकार भगवद् माया के वर्णन मे ज्ञानीजन भी अपने को असमर्थ पाते हैं । क्योंकि वह माया इन्द्रजाल के समान समस्त लोक मे विस्तीर्ण होती हुई जीवो को विमोहित करती रहती है ।१७। वक्ता श्रेष्ठ राजा शशिध्वज उनके वचन सुन कर भक्तिपूर्वक प्रणाम करते हुए बोले ।१८। उन्होने कहा—तीर्थ, क्षेत्रादि के योग को प्राप्त हुआ प्राणी जन्म जन्मान्तरो मे भगवत्कृपा से साधु सग को पाता है और उसी साधु सग के प्रभाव से उसे ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं ।१९। फिर वह सालोक्य पद को प्राप्त होकर हर्षित हृदय से हरि-भजन में तत्पर होता है । इस प्रकार भोग्य वस्तुओ का उपभोग करता हुआ वह मनुष्य लोक मे भक्त हो जाता है ।२०। रजोगुणी पुरुष अपने कर्म द्वारा सदा हरिपूजा-परायण रहते तथा उनके नाम और रूपादि का स्मरण करने मे सदा उत्सुक रहते हैं ।२१।

अवतारानुकरणपर्वव्रतमहोत्सवाः ।
भगवद्भक्तिपूजाढ्याः परमानन्दसम्प्लुताः ।२२।
अतो मोक्ष न वाँच्छन्ति दृष्टमुक्तिफलोदयाः ।
मुक्त्वालभन्ते जन्मानि हरिभावप्रकाशकाः ।२३।

हरिरूपाः क्षेत्रतीर्थपावना धर्मतत्परा ।
सारासारविद सेव्यसेवका द्वैतविग्रहाः ।२४।

यथावतार कृष्णस्य तथा तत्सेविनामिह ।
एव निमेर्निमिषता लीला भक्तस्य लोचने ।२६।

मुक्तस्यापि वशिष्ठस्य शरीरभजनादरः ।
एतद्व कथित भूपा माहात्म्य भक्तिभक्तयोः ।२६।

सद्य पापहर पुंसा हरिभक्तिविवर्द्धनम् ।
सर्वेन्द्रियस्थदेवानामानन्दसुखसञ्चयम् ।
कामरागादिदोषघ्न मायामोहनिवारणम् ।२७।

नानाशास्त्रपुराणवेदविमलव्याख्यामृताम्भोनिधि
समथ्यातिचिर त्रिलोकमुनयो व्यासादयो भावुका. ।
कृष्णे भावमनन्तमेवममल हैयङ्गवन नव
लब्ध्वा समृतिनाशन त्रिभुवने श्रीकृष्णतुल्यायते ।२८।

वे श्रीहरि के अवतार का सदा अनुकरण करने वाले होते हैं। पर्वकाल मे व्रत, पूजन, भक्ति आदि मे तत्पर रहते हुए भी परमानन्द में लिप्त रहते हैं ।२२। वे सभी भक्तजन भोग फल को प्रत्यक्ष प्रकट होता देख कर मोक्ष की कामना नही करते और भोगो को भोगते हुए जन्म प्राप्त करके भी सदा हरिभाव को प्रकाशित करते रहते हैं ।२३। भक्तजन हरिस्वरूप और क्षेत्र तथा तीर्थों के पवित्र करने वाले, सार और असार के ज्ञाता, धर्मानुष्ठान मे तत्पर रहते हुए सेव्य-सेवक रूप मे निवास करते हैं ।२४। भगवान श्रीकृष्ण के अवतार लेने के समान ही उनके सेवक भी समय-समय पर अवतार ग्रहण करते रहते हैं। इसी लिए तो निमि का भक्तो के नेत्रो पर निमेष रूप से निवास है, इसे भगवान की ही लीला समझना चाहिए ।२५। गुरु वसिष्ठ ने मुक्त होकर भी जो पुनः देह धारण किया, वह भी इसी कारण से किया था। हे राजाओ! इस प्रकार भक्ति और भक्त का यह माहात्म्य मैंने आपके

प्रति कहा है ।२६। इसके सुनने से ही सब पाप नष्ट हो जाते हैं, मन मे हरि-भक्ति की वृद्धि होती और इन्द्रियो के अधिष्ठाता देवता भी सुखी होते है । काम और रागादि सभी दोष तथा माया-मोह का नाश होता है ।२७। तीनो लोको के ज्ञाता मुनियो ने वेद पुराणादि शास्त्रो के अमृत रूपी सार का मजन करके यह अत्यन्त पवित्र एव मगल रूप श्रीकृष्ण भक्ति को प्राप्त किया है । यह भव-बन्धन को नष्ट करने वाली है । उन मुनियो को इस प्रकार का फल पाते देख कर उनको भगवान श्रीकृष्ण के समान ही माना गया है ।२८।

तृतीयांश—

त्रयोदश अध्याय

इति भूत सभाया स कथयित्वा निजाः कथाः ।
शशिध्वज प्रीतमना प्राह कल्कि कृताञ्जलि ।१।
त्वहि नाथ त्रिलोकेश एतेभूपास्त्वदाश्रया.
मा तथा विद्धि राजन त्वन्निदेशकर हरे ।२।
तपस्तप्तु यामि काम हरिद्वार मुनिप्रियम् ।
एते मत्पुत्रपौत्राश्च पालनीयास्त्वदाश्रया. ।३।
ममापि काम जानासि पुरा जाम्बवतो यथा ।
निधन द्विविदस्यापि तदा सर्व सुरेश्वर ।४।
इत्युक्त्वा गन्तुमुद्युक्त भार्यया सहित नृपम् ।
लज्जयाधोमुख कल्कि प्राहुभूंपा किमित्युत ।५।

सूतजी बोले—सभा मे उपस्थित सब जनो के समक्ष इस प्रकार अपना वृत्तान्त कहने के उपरान्त राजा शशिध्वज ने हाथ जोड कर कल्कि जी से कहा ।१। राजा बोले—हे हरे ! हे त्रिलोकेश ! यह सभी राजागण आपके आश्रय में स्थित हैं । आप इन सबको और मुझे भी अपनी आज्ञा के पालन मे तत्पर समझिये ।२। अब मैं ऋषियो के लिए प्रिय हरिद्वार के लिए तपस्या हेतु गमन करूँगा । मेरे यह पुत्र-पौत्रादि सब आपके ही आश्रित हैं और आपके द्वारा ही प्रतिपालन करने योग्य हैं ।३। हे सुरेश्वर ! आप मेरे अभिप्राय को भले प्रकार जानते हैं । अपने पूर्व अवतार मे आपने जाम्बवन्त और द्विविद आदि जिन वानरोका वध किया

था वह भी आपको स्मरण है ।४। यह कह कर राजा शशिध्वज अपनी पत्नी सुशान्ता सहित प्रस्थान के लिए उद्यत हुए । उस समय कल्किजी ने अपना मुख लज्जा से झुका लिया । यह देख कर राजागण उसे जानने की इच्छा से बोले ।५।

हे नाथ किमनेनोक्तं यच्छ्रुत्वा त्वमधोमुखः ।
कथं तद्ब्रूहि कामं नः किं न शाधि संशयात् ।६।
अमुं पृच्छत वो भूपा युष्माकं संशयच्छिदम्
शशिध्वजं महाप्राज्ञं मद्भक्तिकृतनिश्चयम् ।७।
इति कल्केर्वचः श्रुत्वा ते भूपाः प्रोक्तकारिणः ।
राजानं तं पुनः प्रहुः संशयापन्नमानसाः ।८।
किं त्वया कथितं राजञ्छशिध्वज महामते ।
कथं कल्किस्तद्वदिदं श्रुत्वैवाभूदधोमुखः ।९।
पुरा रामावतारेण लक्ष्मणादिन्द्रजिद्वधम्
लक्षञ्चलक्ष्यं द्विविदा राक्षसत्वात्सदारुणात्।१०।

राजाओं ने कहा—हे नाथ ! राजा शशिध्वज ने ऐसी क्या बात आपसे कही थी, जिसे सुन कर आपने लज्जा से अपना मुख नीचा कर लिया था । यह हमारे प्रति कह कर हमारा सन्देह दूर करिये ।६। कल्किजी बोले—हे राजाओ ! आप उन्हीं महाराज शशिध्वज से ही इस विषय में प्रश्न करिये । क्योंकि वे परम ज्ञानी और मुझमें अनन्य भक्ति रखने वाले हैं । वे ही आपके सन्देह को नष्ट करेंगे ।७। यह सुनकर सभी राजागण संशययुक्त हृदय से राजा शशिध्वज से प्रश्न करने लगे । उन्होंने कहा—हे राजन् ! हे महामते ! हे महाराज शशिध्वज ! आपने अभी ऐसी कौन-सी बात कल्किजी के प्रति कही थी, जिसे सुन कर वे लज्जावनत मुख वाले हो गये थे ।८-९। शशिध्वज बोले—हे राजागण ! पुरा काल में जब रामावतार हुआ था, तब लक्ष्मणजी के द्वारा वध को प्राप्त हुए इन्द्रजीत मेघनाद की राक्षस भाव से मुक्ति हो गई थी ।१०।

अग्न्यागारे ब्रह्मवीरवधेनैकाह्निकोज्वर· ।
मोक्षमणस्य शरीरेण प्रविष्टो मोहकारक. ।११।
त व्याकुलमभिप्रेक्ष्य द्विविदो भिषजा वर. ।
अश्विवशेन सजात स्वापयामास लक्ष्मणम् ।१२।
लिखित्वा रामभद्रस्य सज्ञापत्रीमतन्द्रित ।
लक्ष्मण दर्शयामास ऊद्र्ध्वस्तिष्ठन्महाभुज: ।१३।
लक्ष्मणो वीक्ष्य ता पत्री विज्वरो बलवानभूत् ।
स ततो द्विविद प्राह वर वरय वानर ।१४।
द्विविदस्तच्च श्रुत्वा लक्ष्मण प्राह हृष्टवत्
त्वत्तो मरण प्राथ्यं वानरत्वाच्च मोचनम् ।१५।

उस समय अग्निशाला मे ब्राह्मण की हत्या करने के पाप स्वरूप लक्ष्मणजी के शरीर मे एकाहिक ज्वर घुस गया, जिससे उन्हे मोहादि उपद्रवो ने घेर लिया ।११। उस समय अश्विनीकुमार के वश मे उत्पन्न हुए भिषग्वर द्विविद वानर ने लक्ष्मणजी को ज्वर की पीडा से व्याकुल देख कर एक मन्त्र बतलाया ।१२। इस मन्त्र को लिख कर भगवान् श्रीराम के सामने ही एक ऊँचे स्थान पर टाक कर लक्ष्मणजी को दिखाया गया ।१३। इस मन्त्र को देखते ही लक्ष्मणजी का ज्वर नष्ट हो गया और उनमे शक्ति आ गई । फिर लक्ष्मणजी ने द्विविद नामक उस वानर से कहा—हे वानर ! आप वर माँगिये ।१४। तब द्विविद ने अत्यन्त हर्षित होकर कहा कि मेरी आपसे ही यही प्रार्थना है कि वानर भाव से मुक्त होने के उपाय स्वरूप मेरा मरण आपके ही द्वारा हो ।१५।

पुनस्तं लक्ष्मण: प्राह मम जन्मान्तरे तव ।
मोचन भविता कीश बलरामशरीरिण: ।१६।

समुद्रस्योत्तारे तीरे द्विविदो नाम वानर: ।
ऐकाह्निक ज्वर हन्ति लिखनं यस्तु पश्यति ।१७।

इति मन्त्राक्षर द्वारि लिखित्वा तालपत्रके ।
यस्तु पश्यति तस्यापि नश्यत्यैकाह्निकज्वर: ।१८।

इति तस्य वर लब्ध्वा चिरायु सुस्थवानरः ।
बलरामास्त्रभिन्नात्मा मोक्षमापाकुतोभयम् ।१९।
तथा क्षेत्रे सूतपुत्रो निहतो लोमहर्षण ।
बलरामास्त्रयुक्तात्मा नैमिषेऽभूत्स्वबाञ्छया ।२०।

तब लक्ष्मणजी ने उसे आश्वासन दिया कि अगले जन्म मे जब मैं बल्देवावतार लूँगा, तब तुम मेरे हाथ से मृत्यु को प्राप्त होकर वानर भाव से मुक्त हो जाओगे ।१६। "समुद्र स्योत्तरे तीरे द्विविदो नाम वानरः" यही वह मन्त्र है, जिसे लिखा हुआ देखने पर ऐकाहिक ज्वर नष्ट होजाता है ।१७। इस मन्त्र को द्वार पर अथवा ताल । पत्र पर लिख कर देखना चाहिये तब ऐकाहिक ज्वर का नाश होना सम्भव है ।१८। लक्ष्मणजी से इस प्रकार वर को प्राप्त हुआ वह द्विविद नामक वानर स्वस्थ शरीर से बहुत काल जीवित रहा और बलदेवजी का अवतार होने पर उनके अस्त्र से मृत्यु को प्राप्त होकर अभयात्मिका मुक्ति को प्राप्त हो गया ।१९। इसी प्रकार अपनी इच्छा से सूत पुत्र लोमहर्षण भी नैमिषारण्य मे बलदेव जी के अस्त्र से ही मारे गये ।२०।

जाम्बवाश्च पुरा भूपा वामनत्व गते हरौ :
तस्याप्यूद्‌र्ध्वगत पाद तत्र चक्रे प्रदक्षिणम् ।२१।
मनोजव त निरीक्ष्य वामनः प्राह विस्मित ।
मत्तो वृणु वर काममृक्षाधीश महाबल ।२२।
इति त हृष्टवदनो ब्रह्मांशो जाम्बवान्मुदा ।
प्राह भो चक्रदहनान्मम मृत्युर्भविष्यति ।२३।
इत्युक्ते वामन प्राहकृष्णजन्मनि मे तव ।
मोक्षश्चक्रेण सभिन्नशिरसः सभविष्यति ।२४।
मम कृष्णावतारे तु सूर्यभक्तस्य भूपतेः ।
सत्रजितस्तु मण्यर्थे दुर्वाद समजायत ।२५।

हे राजाओ ! वामनावतार मे वामनजी ने जब तीन पग में ही तीनो लोकों को नाप लिया, तब उनके ऊर्ध्वलोक मे रखे हुए चरण की

जाम्ववत ने प्रदक्षिण की थी ।२१। उस समय उस जाम्बवान् को मन के समान द्रुत वेग वाला देख कर वामनजी अत्यन्त आश्चर्य चकित होकर बोले—हे ऋक्षाधीश ! तुम महाबली हो, मुझसे इच्छित वर मांगो ।२२। यह सुन कर हर्षित मन हुए ब्रह्मांश रूप जाम्बवान् ने कहा कि हे प्रभो ! मेरी मृत्यु आपके चक्र से हो, यही वर प्रदान कीजिये ।२३। जाम्बवान् के वचन सुन कर वामनजी ने कहा—कृष्णावतार मे मेरे चक्र से तुम्हारा शिर कटेगा और तुम मोक्ष को प्राप्त हो जाओगे ।२४। तदनन्तर कृष्णावतार हुआ । उस समय मैं सूर्य का भक्त सत्राजित् नामक एक राजा हुआ था । [तब एक मणि के कारण दुर्वाद उत्पन्न हो गया ।२५।

प्रसेनस्य मम भ्रातुर्वधस्तु मणिहेतुकः ।
सिंहात्तस्यापि मण्यर्थे वधो जाम्बवता कृतः ।२६।
दुर्वादभयभीतस्य कृष्णस्यामिततेजस ।
मण्यन्वेषणचित्तस्य ऋक्षेणाभूद्रणो बिले ।२७।
स निजेशं परिज्ञाय वच्चक्रग्रस्तबन्धनम् ।
मुक्तो बभूव सहसा कृष्ण पश्यन्सलक्ष्मणाम् ।२७।
नवदूर्वादलश्याम दृष्ट्वा प्रादान्निजात्मजाम् ।
तदा जाम्बवती कन्या प्रगृह्य मणिना सह ।२९।
द्वारका पुरमागत्य सभाया मामुपाह्वयत् ।
आहूय मह्यं प्रददौ मणि मुनिगणार्च्चितम् ।३०।

प्रसेन नामक मेरा अनुज था । उसे एक सिंह ने मणि के लिए मार डाला । फिर वह सिंह भी उसी मणि के कारण जाम्बवान् के द्वारा वध को प्राप्त हुआ ।२६। उधर कलंक के भय से अमित तेज वाले भगवान् श्रीकृष्ण उस मणि की खोज करने लगे, तभी एक गिरि-गुहा में जाम्बवान् के साथ उनका घोर युद्ध हुआ ।२७। तभी जाम्बवान् अपने स्वामी को पहचान गया । भगवान् के चक्र से उसका शिर कट

गया। लक्ष्मण सहित भगवान् का दर्शन करते हुए जाम्बवान् की मोक्ष की प्राप्ति हुई।२८। तब उस ऋक्षराज ने अपने प्रभु की श्यामल मूर्ति का दर्शन करते हुए उन्हे अपनी पुत्री जाम्बवती के सहित वह मणि भेट कर दी।२९। फिर श्रीकृष्ण ने द्वारका की राज सभा मे आकर मुझे वहाँ बुलाया और महर्षियो के द्वारा पूजित वह मणि उन्होंने मुझे दे दी।३०।

सोऽहं ता लज्जया तेन मणिना कन्यकां स्वकाम्।
विवाहेन ददावस्मै लावण्याज्जगृहे मणिम्।३१।
तां सत्यभामामादाय मणि मय्यर्प्य स प्रभुः।
द्वारकामागत्य पुनर्गजाह्वयमगाद्विभु.।३२।
गते कृष्णे मा निहत्य शतधन्वाग्रहीन्मणिम्।
अतोऽहमिह जानामि पूर्वजन्मनि यत्कृतम्।३३।
मिथ्याभिशापात्कृष्णस्य नैवाभून्मोचन मम।
अतोऽहं कल्किरूपाय कृष्णाय परमात्मने।
दत्त्वा रमा सत्यभामारूपिणी यामि सद्गतिम्।३४।

यह देख कर मैं अत्यन्त लज्जित हुआ और मैंने अपनी सत्यभामा नाम की कन्या के सहित वह मणि श्रीकृष्ण को ही दे दी। उन दोनो के लावण्य से आकर्षित होकर उन्होने उन्हें ग्रहण कर लिया।३१। तदनन्तर श्रीकृष्ण ने मणि मेरे पास रख दी और स्वय सत्यभामा को साथ लेकर द्वारका से हस्तिनापुर को चले गये।३२। श्रीकृष्ण के चले जाने पर शतधन्वा नामक एक राजा ने मणि के निमित्त मेरा वध कर दिया और मणि को ले लिया। इस प्रकार इन कल्किजी ने अपने पूर्वावतार में जो किया, उस सब को मैं भले प्रकार जानता हूँ।३३। श्रीकृष्ण को मैंने झूठा कलंक लगाया था, इसी पाप से उस जन्म में मैं मोक्ष को प्राप्त नही हो सका। यही कारण हैं कि इस जन्म में अपनी रमा रूपिणी सत्यभामा को कल्कि रूप कृष्ण को देकर मैं सद्गति को प्राप्त करूँगा।३४।

सुदर्शनास्त्रघातेन मरण मम काङ्क्षितम् ।
मरणोऽभूदिति ज्ञात्वा रणे वाञ्छामि मोचनम् ।३५।
इत्यसौ जगतामीशः कल्किः श्वशुरघातनम् ।
श्रुत्वैवाधोमुखस्तस्थौ ह्रिया धर्मभिया प्रभु ।३६।
अत्याश्चर्यमपूर्वमुत्तममिद श्रुत्वा नृपा विस्मिता
लोका ससदि हर्षिता मुनिगणा कल्केर्गुणाकर्षिताः ।
आख्यान परमादरेण सुखद धन्य यशस्य पर
श्रीमद्भूपशशिध्वजेरितवजो मोक्षप्रद चाभवन् ।३७।

यह जान कर कि युद्धस्थल मे मरने से मोक्ष की प्राप्ति सभव है, मैंने यह अभिलाषा की थी कि कल्किजी के सुदर्शन चक्र-प्रहार से मेरा मरण हो जायगा ।३५। जगदीश्वर भगवान् कल्कि ने अपने श्वसुर का इस प्रकार मारा जाना स्मरण करके ही धर्मभय और लज्ज से अपना मुख झुका लिया था ।३५। इस अत्यन्त विस्मय युक्त, अपूर्व और श्रेष्ठ उपाख्यान को सुन कर राजागण विस्मित हो उठे तथा सभी सभासद् आनन्द विभोर हुए । कल्किजी के गुणो के प्रति मुनिगण भी आकर्षित हो रहे थे । राजा शशिध्वज के कहे हुए इस उपाख्यान को सुनने वाला प्राणी सुखी, धन्य और यशस्वी होकर अन्त मे मोक्ष को प्राप्त करता है, उसका कभी पुनर्जन्म नही होता ।३७।

चतुर्दश अध्याय

ततः कल्किर्महातेजाः श्वशुरं तं शशिध्वजम् ।
समामन्त्र्य वचश्चित्रैः सह भूपैर्ययौ हरिः ।१।
शशिध्वजो वरं लब्ध्वा यथाकामं महेश्वरीम् ।
स्तुत्वा मायां त्यक्तमायः सप्रियः प्रययौ वनम् ।२।
कल्किः सेनागणैः सार्द्धं प्रययौ काञ्चनीं पुरीम् ।
गिरिदुर्गावृतां गुप्तां भोगिभिर्विषवर्षिभिः ।३।
विदार्य दुर्गं सगणः कल्किः परपुरञ्जयः ।
छित्त्वा विषायुधान्बाणैस्तां पुरीं ददृशोऽच्युतः ।४।
मणिकाञ्चनचित्राढ्यां नागकन्यागणावृताम् ।
हरिचन्दनवृक्षाढ्यां मनुजैः परिवर्ज्जिताम् ।५।

सूतजी बोले—फिर अत्यन्त तेज वाले कल्किजी ने अपने अद्भुत वचनो के द्वारा अपने श्वसुर राजा शशिध्वज को सन्तुष्ट किया और राजाओ के सहित उठ कर चले गये ।१। राजा शशिध्वज भी इच्छानुसार वर प्राप्त करके, महेश्वरी माया का स्तव करते हुए अपनी पत्नी सहित विषय–बन्धन से मुक्त होकर वन को गये ।२। इधर कल्किजी ने पर्वत रूपी दुर्ग से आवृत्त काञ्चनीपुरी को प्रस्थान किया इस पुरी की रक्षा विष-वर्षक सर्प करते हैं ।३। शत्रुओ के पुर के विजेता कल्किजी अपनी सेना सहित आगे बढ़े और उस कठिन दुर्ग को तोड कर तथा विष-वर्षक सर्पो को मार कर पुरी मे प्रविष्ट हुए ।४। वहाँ उन्होने देखा कि वह नगरी सर्वत्र मणियो और स्वर्ण से युक्त है तथा सब ओर नाग

कन्याएँ छाई हुई हैं। वह पुरी स्थान स्थान पर कल्पवृक्षों से सुशोभित हो रही है। वहाँ मनुष्य तो नाम को भी नहीं हैं।५।

विलोक्य कल्कि. प्रहसन्प्राह भूपान्किमित्यहो।
सर्पस्येयं पुरी रम्या नराया भयदायिनी।
नागनारीगणाकीर्णा किं यास्यामो वदन्त्विह।६।

इतिकर्त्तव्यतामूढाः रमानाथं हरिं प्रभुम्।
भूपास्तदनुरूपाश्च खे वाणीहाशरीरिणी।७।

विलोक्य नेमां सेनाभिः प्रवेष्टुं भोस्त्वमर्हसि।
त्वां विनान्ये मरिष्यन्ति विषकन्यादृशादपि।८।

आकाशवाणीमाकर्ण्य कल्कि. शुकसहायकृत्।
ययावेक: खड्गधरस्तुरगेण त्वरान्वित.।९।

गत्वा तां ददृशे वीरो धीराणां धैर्यनाशिनीम्।
रूपेणालक्ष्य लक्ष्मीशं प्राह प्रहसितानना।१०।

यह देख कर हँसते हुए कल्किजी ने राजाओं से कहा—हे राजन् यह सर्पपुरी कैसी आश्चर्यमयी एवं मनुष्यों के लिए अत्यन्त भयावनी है। इसमें नागकन्यों का ही निवास हैं। अब कहिए कि इसमें प्रवेश करें अथवा नहीं ?।६। रमानाथ कल्किजी और सब राजागण भी यह निश्चय नहीं कर पाये कि क्या करना चाहिये, इसलिए अत्यन्त चिंतित हुये। तब आकाशवाणी सुनाई दी।७। इस पुरी में सेना-सहित प्रविष्ट नहीं होना चाहिए। क्योंकि जैसे ही पुरी निवासिनी विष-कन्याओं की दृष्टि पड़ेगी, वैसे ही नष्ट हो जाओगे।८। आकाशवाणी का निर्देश सुन कर कल्किजी एकाकी ही खड्ग लेकर घोड़े पर चढ़े और शुक को साथ लेकर चल दिये।९। कुछ आगे जाने पर उन्हें एक अपूर्व कन्या दिखाई दी, जिसे देखते ही ज्ञानी जन भी धैर्य छोड़ देते हैं। वह कन्या अपूर्व रूप वाले कल्किजी को देख कर हँसती हुई बोली।१०।

ससारेऽस्मिन्म नयनोर्वीक्षणक्षीणदेहा
लोका भूपा· कति कति गता मृत्युमत्युग्रवीर्या ।
साहं दीनासुरसुरन प्रेक्षण प्रेमहीना
ते नेत्राब्जद्वयरससुधाप्लाविता त्वां नमामि ।११।
क्वाहं विषेक्षणादीना क्वामृतेक्षणसङ्गम ।
भवेऽस्मिन्भाग्यहीनायाः केनाहो तपसा कृतः ।१२।
कासि कन्यासि सुश्रोणि कस्मादेषा गतिस्तव ।
ब्रूहि मां कर्मणा केन विषनेत्र तवाभवत् ।१३।
चित्रग्रीवस्य भार्याहं गन्धर्वस्य महामते ।
सुलोचनेति विख्याता पत्युरत्यन्तकामदा ।१४।
एकदाहं विमानेन पत्या पीठेन सङ्गता ।
गन्धमादनकुञ्जेषु रेमे कामकलाकुला ।१५।

विषकन्या ने कहा—इस संसार मे अत्यन्त पराक्रमी अनेक राजागण तथा अन्यान्य मनुष्य मृत्यु को प्राप्त हो चुके हैं। इस लिए मैं अत्यन्त दुःखित हूँ। देवता, दैत्य और मनुष्य किसी के साथ भी मेरा परिणय सभव नहीं है। मैं आपके अमृत के समान दृष्टि प्रवाह मे बहती हुई आपको नमस्कार कर रही हूँ।११। मैं मन्द भाग्य वाली और विष-दृष्टि से युक्त हूँ और आपकी दृष्टि अमृतमयी है। मैं किस तपस्या के प्रभाव से आपका दर्शन प्राप्त कर सकी हूँ।१२। कल्किजी ने कहा—हे सुश्रोणि! तुम कौन एव किसकी कन्या हो? तुम इस अवस्था को किस प्रकार प्राप्त हुई हो? किस कर्म-दोष से तुम्हे यह विष दृष्टि मिली है।१३। विषकन्या ने कहा—हे महामते! चित्रग्रीव नामक जो गन्धर्व हैं मैं उनकी पत्नी सुलोचना हूँ। मेरे द्वारा मेरे पति का मन अत्यन्त आनन्दित रहता था।१४। एक समय की बात है—जब मैं अपने पति के साथ विमानारूढ़ होकर गन्धमादन पर्वत के एक कुञ्ज मे शिला पर बैठ कर विहार-रत हो गई।१५।

तत्र यक्षमुनिं दृष्ट्वा विकृताकारमातुरम्।१६।
रूपयौवनगर्वेण कटाक्षेणाहसं मदात् ।१६।

सोपालम्भ मुनिः श्रुत्वा वचन च ममाप्रियम् ।
शशाप मा क्रुधा तत्र तेनाह् विषदर्शना ।१७।
निक्षिप्ताह् सर्पपुरे काञ्चन्या नागिनीगणे ।
पतिहीना दैवहीना चरामि विषवर्षिणी ।१८।
न जाने केन तपसा भवद्दृष्टिपथ गता ।
त्यक्तशापामृताक्षाह् पतिलोक व्रजाम्यत ।१९।
अहो तेषामस्तु शाप प्रसादो मा सतामिह ।
पत्यु. शापदृषेर्मोक्षात्तव पादाब्जदशनम् ।२०।

उस समय मैं अपने रूप यौवन के गर्व से अत्यन्त मदोन्मत्त हो रही थी। वहाँ विकट शरीर वाले यक्षमुनि को देख कर मैं उन पर कटाक्ष करती हुई, उनकी हँसी उडाने लगी ।१६। मेरे मुख से अपने प्रति अपमानजनक वचन सुन कर मुनि क्रोधित हो उठे और उन्होने मुझे जो शाप दिया, उससे मैं तुरन्त विषदृष्टि को प्राप्त हो गई ।१७। तब मुझे इस कांचनीपुरी मे नागनियो के मध्य डाल दिया गया। तभी से मेरी दृष्टि विष की वर्षा किया करती हे। इस प्रकार मै अभागी पति से हीन होकर यहाँ एकाकी विचरती हूँ ।१८। मुझे ज्ञात नही कि अपनी किस तपस्या के फल से मैं आपकी दृष्टि के सामने आ गई हूँ। आपके दर्शन से मैं शाप-मुक्त होकर अमृतवर्षिणी दृष्टि से सम्पन्न हो गई हूँ। अब मैं अपने पति के पास गमन करती हूँ ।१९। अहा! साधुओ के प्रसन्न होने की अपेक्षा तो शाप देना भी श्रेष्ठ है क्योकि शाप के कारण ही तो मोक्ष स्वरूप आपके चरणाम्बुज का दर्शन प्राप्त हो सका है ।२०।

इत्युक्त्वा सा ययौ स्वर्गं विमानेनार्कवर्च्चसा ।
कल्किस्तु तत्पुराधीश नृप चक्रे महामतिम् ।२१।
अमर्षस्तत्सुतो धीमान् सहस्रो नाम तत्सुत. ।
सहस्रत सुतश्चसीद्राजा विश्रुतवानसि ।२२।
बृहन्नलानां भूपानां सम्भूता यस्य वंशजा ।

त मनु भूपशार्दूल नानामुनिगणैर्वृत. ।२३।
अयोध्याया चाभिषिच्य मथुरामगमद्धरि· ।
तस्यां भूप सूर्यकेतुभिषिच्य महाप्रभम् ।२४।

यह कह कर वह विषकन्या सूर्य जैसे तेजस्वी विमान पर चढ कर स्वग को गई। कल्किजी ने महामति नामक एक राजा को उस पुरी के राज्य पर अभिषिक्त किया ।२१। उस राजा महामति का पुत्र अमर्ष हुआ। अमर्ष का पुत्र धीमान् सहस्र और सहस्र का पुत्र अत्यन्त प्रसिद्ध राजा असि हुआ ।।२२। उसी राजा के वंश मे वृहन्नल राजाओ की उत्पत्ति हुई। नृपशार्दूल मनु को अयोध्या का राज्य देकर अनेक मुनियो के सहित कल्किजो मथुरा पहुचे और उन्होने अत्यन्त प्रभा से सम्पन्न सूर्यकेतु को मथुरा के राज्य पर विधिवत् अभिषिक्त किया ।२३-२४।

भप चक्रे ततो गत्वा देवापिं वारणावते ।
अरिस्थल वृकस्थल माकन्दञ्च गजाह्वयम् ।२५।
पञ्चदेशेश्वर कृत्वा हरिः शम्भलमाययौ ।
शौम्भ पौड्र पुलिन्दञ्च सुराष्ट्र मगधन्तथा ।
कविप्राज्ञसुमन्तेभ्यः प्रददौ भ्रातृवत्सलः ।२६।
कीकट मध्यकर्णाटध्रमोड्र कलिङ्गकम् ।
अङ्ग वङ्ग स्वगोत्रेभ्य· प्रददौ जगदोश्वरः ।२७।
स्वय शम्भलमध्यस्थ कङ्कोन कलापकान् ।
देश विशाखयूपाय प्रादात्कल्किः प्रतापवान् ।२८।
चोलबर्बरकर्बाख्यान्द्वारकादेशमध्यगान् ।
पुत्रेभ्य, प्रददौ कल्किः कृतवर्म्मपुरस्कृतान् ।२९।

याधा करते हुए कल्किजी ने देवापि को राज्य देकर २ अरिस्थल, वृकस्थल, माकन्द, हस्तिनापुर और वारणावत-इन पाँच देप्रशो का अधिपति बनाया और फिर शम्भल ग्राम के लिए चल पडे।

फिर भ्रातृवत्सल कल्किजी ने कवि, प्राज्ञ और सुमन्त्र को शौम्भ, पौण्ड्र, पुलिन्द और मगध देशका राज्य दिया ।२५-२६। फिर जगदीश्वर कल्किजी ने अपने गोत्र बाधवो को कीकट, मध्यकर्णाटक, आन्ध्र, उड्र कलिग, अङ्ग और बगादि देश प्रदान किये ।२७। फिर स्वय शम्भल में रह कर विशाखयूप-नरेश को ककक और कपाल प्रदेशो का राजा बनाया ।२८। तदनन्तर उन्होने कृतवर्म्म आदि पुत्रो को द्वारका देश के मध्य मे स्थित चोल, बर्बर तथा कर्ब आदि प्रदेशो का राज्य प्रदान किया ।२९।

पित्रे धनानि रत्नानि ददौ परमभक्तित: ।
प्रजा· समाश्वास्य हरि: शम्भलग्रामवासिन· ।३०।
पद्मया रमया कल्किगृहस्थो मुमुदे भृशम् ।
धर्मश्चतुष्पादभवत्कृतपूर्णं जगत्रयम् ।३१।
देवा यथोक्तफलदाश्चरन्ति भुवि सर्वत· ।
सर्वशस्या वसुमती हृष्टपुष्टजनावृता ।
शाठ्याचौर्य्यानृतैर्हीना आधिव्याधिविवर्ज्जिता ।३२।
विप्रा वेदविद· सुमङ्गलयुता नार्यस्तु चार्य्याव्रतै: ।
पूजाहोमपरा· पतिव्रतधरा यागोद्यता क्षत्रिया: ।
वैश्या वस्तुषु धर्मतो विनिमयै: श्रीविष्णुपूजापरा ।
शूद्रास्तु द्विजसेवनाद्धरिकथालापा: सपर्य्यापरा· ।३३।

फिर भगवान् कल्किजी अपने पिताको अत्यन्त भक्तिपूर्वक धन-रत्न आदि भेंट करके और शम्भल ग्राम के निवासियो को सन्तुष्ट करके रमा और पद्मा के साथ गृहस्थाश्रम के सुख भोगने लगे । तब तक धर्म के चारो चरणो सम्पन्न हुए तीनो लोको में सत्युग का आविर्भाव हो गया ।३०-३१। भक्तो को इच्छित फल प्रदान करते हुए देवगण सम्पूर्ण पृथिवी पर विचरण करने लगे । धरा के सब धान्यो से परिपूर्ण होने के कारण सभी प्राणी हृष्ट-पुष्ट हो गए । शाठ्य, चौर्य अनृत, आधि,

व्याधि आदि सभी दुःख भूमण्डल से अदृश्य हो गये ।३२। ब्राह्मण वेदपाठी हुए, स्त्रियाँ पतिव्रत धर्म के पालन पूर्वक धर्मानुष्ठान मे लगी। सर्वत्र पूजन और होम होने लगे। क्षत्रिय भी यज्ञादि शुभ कर्मो मे उद्यत हुए। विष्णु-पूजन मे रत रहते हुए वैश्य गण भी वस्तु विनिमय का धर्म पूर्वक व्यापार करने लगे। शूद्रगण द्विज सेवा-परायण हुए। सभी प्राणी भगवान् का गुण कीर्तन, श्रवण और उपासना मे तत्पर रहते हुए जीवनचर्या चलाने लगे ।३३।

पंचदश अध्याय

शशिध्वजो महाराज स्पुतत्वा माया गत कुत ।
का वा मायास्तुतिः सूत वद तत्वविदा वर ।
या त्वत्कथा विष्णुकथ वक्तव्या सा विशुद्धये ।१।
शृणुध्व मुनय· सर्वे मार्कण्डेयाय पृच्छते ।
शुक प्राह विशुद्धात्मा मायास्तवमनुत्तमम् ।२।
तच्छृणुष्व प्रवक्ष्यामि यथाधीत यथाश्रुतम् ।
सर्वकामप्रद नृणा पापतापविनाशनम् ।६।
भल्लाटनगर त्यक्त्वा विष्णुभक्तः शशिध्वजः ।
आत्मससारमोक्षाय मायास्तवमल जगौ ।४।
ओ ह्लीकारा सत्वसारा विशुद्धा ब्रह्मादीना मातर वेदबोध्याम्
तन्वी स्वाहा भूततन्मात्रकक्षाँ वन्देवन्द्या देवगन्धर्वसिद्धैः ।५।

शौनक जी बोले—हे सूतजी ! भगवती माया की स्तुति करके महाराज शशिध्वज कहाँ गये ? हे तत्त्वज्ञानियो मे श्रेष्ठ ! माया की स्तुति के विषय मे बताइये। माया और विष्णु की कथा मे कोई भेद नही होने से पुनीत होने के उद्देश्य से उस स्तव को हमारे प्रति कहिये ।१। सूत जी न कहा—हे ऋषियो ! मार्कण्डेयजी, के पूछने पर शुकदेव जी ने जो श्रेष्ठ माया-स्तोत्र कहा था, वही तुम्हारे प्रति कहता हूँ, सुनिये ।२। जिस माया-स्तव को मैंने सुना और पढा है, जो सुनने से सब की कामनाएँ पूर्ण करने वाला और पाप-ताप का नाशक है, उस

माया स्तव को सुनो।३। शुकदेव जी बोले—विष्णु भक्त महाराज शशि-ध्वज ने जब अपने भल्लाटनगर को छोड कर ससार से विमुख होने के उद्देश्य से माया-स्तव किया।४। शशिध्वज बोले—हे, ह्रीकार मयी, सत्यसार रूपिणी, विशुद्धा मायादेवी! आप ब्रह्मादि देवताओ की जननी हैं। वेद भी आपकी महिमा का वखान करते हैं। समस्त भूतगण और तन्मात्राएं आपकी कोख मे स्थित रहते है। आप देव, गंधर्व और सिद्धगणो से वन्दित, सूक्ष्म स्वरूप तथा स्वाहा रूपिणी हैं, मैं आपकी वन्दना करता हूं।५।

लोकातीतां द्वैतभूतां समीडे भूतैर्भव्या व्यामसामासिकाद्यैः
विद्वद्गीता कालकल्लोललोला लीलापाङ्गक्षिप्तससारदुर्गाम्।३।
पूर्णा प्राप्या द्वैतलभ्या शरण्यामाद्ये शेषे मध्यतो या विभाति
नानारूपैर्देवतिर्य्यङ्मनुष्यैस्तामाधारा ब्रह्मरूपा नमामि।७।
यस्या भासा त्रिजगद्भाति भूतैर्न भात्येतत्तदभावे विधातुः।
कालोदैवकर्म चोपाधयो ये तस्या भाषा ताँ विशिष्टां नमामि
भूमौ गन्धो रसताप्सु प्रतिष्ठा रूप तेजस्येव वायौ स्पृशत्वम्।
खे शब्दो वा यच्चिदाभास्ति नाना
मताम्येताविश्वरूपा नमामि।६।
सावित्री त्व ब्रह्मरूपा भवानी भूतेशस्य श्रीपतेः श्रीस्वरूपा।
शचीशक्रस्यापि नाकेश्वरस्य पत्नी श्रेष्ठा भासि माये जगत्सु

माप लोको से परे, द्वैतभूता, भव्या तथा व्यासादि ऋषियों के द्वारा वन्दिता हैं। भगवान् विष्णु भी आपका स्तोत्र करते हैं। आप काल की लहरो में लहराती रहती हैं। सभी जीव आपकी विलास लीला में पडते हैं। ऐसी आप ससार दुर्ग से तारने वाली को नमस्कार करता हूं।६। सृष्टि के आदि, मध्य और लय काल मे आप ही स्थित रहती हो। आप सब की आश्रयदाता को पूर्ण भाव या द्वैतभाव से ही पाया जा सकता है। देवता, तिर्यक् और मनुष्यादि योनियो मे आप ही वभक्त होकर प्रकाशित है। आप संसार की आश्रयभूता एव ब्रह्म-

स्वरूपिणी को नमस्कार है ।७। आपकी महिमा से ही यह त्रिलोकी पचभूतात्मिका रूप से प्रकाशित है। काल, दैव, कर्म, उपाधि आदि कोई भी विधाता द्वारा निश्चित भाव आपके प्रकाश के बिना प्रकाशित नही हो सकता। ऐसी आप प्रभावती को मेरा नमस्कार है ।८। आप ही पृथिवी में गन्ध, जल मे रस, तेज मे रूप, वायु में स्पर्श और आकाश मे शब्द रूप से विविध रूपो मे प्रतिष्ठित रहती हैं। आप जगत् मे व्याप्त विश्वरूपिणी को नमस्कार है ।९। आप ही ब्रह्मरूपा सावित्री है, भगवान् विष्णु की लक्ष्मी, शकर की भवानी तथा देवराज इन्द्र की शची हैं। हे माये ! सम्पूर्ण विश्व मे आप इसी प्रकार व्याप्त हो रही हैं ।१०।

बाल्ये बाला युवती यौवने त्वत्राधक्ये या स्थविरा कालकल्पा
नानाकारैर्यागयोगैरुपास्या ज्ञानातीता कामरूपा विभासि ।११
वरेण्या त्व वरदा लोकसिद्धयासाध्वोधन्या लोकमान्या सुकन्या
चण्डी दुर्गा कालिका कालिकाख्या, नानदेशे
रूपवेशैर्विभासि ।१२।
तव चरणसरोज देवि ! देवादिवन्द्य यदि हृदयसरोजे।
भावयन्तीह भक्त श्रुतियुगकुहरे वा सश्रुत
धर्म्मसम्पज्जनयति जगदाद्ये सर्वसिद्धश्च तेषाम् ।१३।
मायास्तवमिद पुण्य शुकदेवेन भाषितम् ।
मार्कण्डेयादवाप्यापि सिद्ध लेभे शशिध्वज. ।१४।
कोकामुखे तपस्तप्त्वा हरिं ध्यात्वा वनान्तरे ।
सुदर्शनेन निहतो वैकुण्ठं शरण ययौ ।१५।

आप शैशवावस्था मे बाला, यौवनावस्था मे युवती और वृद्धावस्था में वृद्धा रूप वाली रहती हैं। आप ही काल से कल्पित, ज्ञानातीता और कामरूपा है। आप विभिन्न रूपो में प्रकाशित होने वाली ईश्वरी का यज्ञ और योग के द्वारा पूजन किया जाता है। मैं आपकी वन्दना करती हूँ।११। हे वरेण्या ! आप ही उपासको को वरदात्री और सिद्धि के देने वाली हैं। आप लोकों के द्वारा मान्या, साध्वी, एव सब प्रकार से धन्या हैं। आप ही श्रेष्ठ कन्या, चण्डी, दुर्गा, कालिका आदि विभिन्न

रूपो से अनेक देशो मे प्रकाशित रहती हैं ।१२। हे ससार की आदि रूपा देवि ! यदि कोई अपने हृदय मे देवताओ आदि से वन्दित आपके चरणारविन्दो का भक्ति भाव पूर्वक ध्यान और आपका नाम-श्रवण करता है, तो उसे धर्म रूपी ऐश्वर्य और सम्पूर्ण सिद्धियो की प्राप्ति होती है ।१३। यह पवित्र माया-स्तव शुकदेव जी द्वारा कहा गया था। राजा शशिध्वज ने इसे मार्कण्डेयजी से प्राप्त करके सिद्धि-लाभ किया ।१४। वन मे स्थित कोकामुख नामक स्थान में तपस्या करते हुए राजा शशिध्वज सुदर्शन चक्र से निहत होकर वैकुण्ठ को प्राप्त हुए ।१५।

षोडश अध्याय

एतद्व कथित विप्रा· शशिध्वजविमोक्षणम् ।
कल्के: कथामप्रतिमा शृण्वन्तु विबुधर्षभो ।१।
वेदो धर्म्म कृतयुग देवलोकश्चराचरा ।
हृष्ट पुष्टा· सुसतुष्टा कल्कौ राजनि चाभवन् ।२।
नानादेवादिलिङ्गेषु भूषणैर्भूषितेषु च ।
इन्द्रजालिकवद्वृत्तिकल्पका· पूजका जना ।३।
न सन्ति मायामोहाढ्या पाखण्डा. साधुवञ्चका: ।
तिलकाचितसर्वाङ्गा कल्कौ राजनि कुत्रचित् ।४।
शम्भले वसतस्तस्य पद्मया रमया सह ।
प्राह विष्णुयशा. पुत्र देवान्यष्टु जगद्धितान् ।५।

सूतजी बोले—हे ब्राह्मणो! इस प्रकार राजा शशिध्वज को मोक्ष प्राप्ति का प्रसग मैंने आपको सुनाया। अब कल्किजी के विचित्र आख्यान को पुन कहता हूँ, इसे सुनिये ।१। जब भगवान् कल्किजी राज्य सिंहासन पर प्रतिष्ठित हुए, तब वेद, धर्म, सत्युग, देवगण और चराचर युक्त विश्व हृष्ट, एव सतुष्ट हो गया ।२। पूर्व युग मे पूजा करने वाले मनुष्य देव मूर्तियों को विभिन्न प्रकार के वस्त्रालकारो से अलकृत करके इन्द्रजाल के समान रहस्य-कल्पना किया करते थे ।३। अब वह माया मोह से आवृत्त साधु वचक पाखण्ड समाप्त हो गया। कल्किजी के

राज्य मे सभी मनुष्य सर्वांग मे तिलक लगाने लगे ।४। पद्म और रमा के साथ जब कल्किजी शम्भल ग्राम में सुख पूर्वक निवास कर रहे थे, तभी एक दिन उनके पिता विष्णुयशजी ने अपने पुत्र से देवताओं को सन्तुष्ट करने वाले यज्ञ का अनुष्ठान करने को कहा ।५।

तच्छ्रुत्वा प्राह पितरं कल्किः परमहर्षितः।
विनयावनतो भूत्वा धर्मकामार्थसिद्धये ।६।
राजसूयैर्वाजपेयैरश्वमेधैर्महामखैः ।
नानायागं कर्मतन्त्रैरीजे क्रतुपति हरिम् ।७।
गगायमुनयोर्मध्ये स्नात्वावभृथमादरात् ।
कृपरामवसिष्ठाद्यै व्यास धौम्यकृतव्रणैः ।
अश्वत्थाममधुच्छन्दोमन्दपालैर्महात्मनः ।८।
दक्षिणाभि. समभ्यर्च्य ब्राह्मणान्वेदपारगान् ।९।
चर्व्यैश्चोष्यैश्च पेयैश्च पूगशष्कुलियावकैः ।
भोजयामास विधिवत्सर्वकर्मसमृद्धिभि ।१०।

पिता के वचन सुन कर हर्षित हुए कल्किजी ने विनय पूर्वक कहा—धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि के प्रयोजन से मैं कर्म तन्त्र विहित राजसूय, वाजपेय और अश्वमेधादि महायज्ञों के अनुष्ठान द्वारा भगवान् विष्णु को प्रसन्न करूँगा ।६-७। फिर कल्किजी ने कृपाचार्य, परशुराम, वसिष्ठ, व्यास, धौम्य, अकृतव्रण अश्वत्थामा, मधुच्छन्द तथा मन्दपाल आदि महात्मा महर्षियों और वेदज्ञानियों को आमन्त्रित कर उनका पूजन किया। तदनन्तर गङ्गा-यमुना के मध्य में स्थित यज्ञ मे दीक्षित होकर उन्होने स्नान किया और दक्षिणा दी ।८-९। फिर उन्होने अनेक प्रकार के चर्व्य, चोष्य, पेय, पूग, शष्कुलि और यावक आदि भोज्य पदार्थों के द्वारा उन ब्राह्मणो को श्रेष्ठ भोजन कराया ।१०।

यत्र वह्निर्घृत पाके वरुणो जलदो मरुत् ।११।
परिवेष्टा द्विजान्कामैः सन्नाद्यै रतोषयत् ।

वाद्यैर्नृत्यैश्च गीतैश्च पितृयज्ञमहोत्सवै १२।
कल्कि कमलपत्राक्ष प्रहृर्ष प्रददौ वसु ।
स्त्रीबालस्थविरादिभ्य सर्वेभ्यश्च यथोचितम् ।१३।
रम्भा तालधरां नन्दी हूहूर्गायिति नृत्यति ।
दत्त्वा दानानि पात्रेभ्योब्राह्मभ्णेय स ईश्वर. ।१४।
उवास तीरे गगाया पितृवाक्यानुमोदित ।
समाया विष्णुयशसः पूर्वराजकथा प्रिया ।१५।
कथयन्तो हसन्तश्च हर्षयन्तो द्विजा बुधा ।
तत्रागतस्तुम्बुरुणानारद. सुरपूजित ।१६।

यज्ञ का भले प्रकार परिपाक हुआ। अग्नि ने पाक किया, वरुण ने जल प्रदान किया और वायु परोसने लगा। पद्माक्ष कल्किजी ने इस प्रकार श्रेष्ठ अन्नादि, नृत्य, वाद्य, गीतादि से उत्सव करते हुए सब के आनन्द की वृद्धि की। बालक, स्त्री, वृद्ध आदि सब को धन से यथोचित सत्कृत किया।११-१३। रम्भादि नाचने लगी, नन्दी ताल देने लगे, हुई गन्धर्व ने गीत गाया, उस समय ब्राह्मणो और सत्पात्रो को धन प्रदान करने के पश्चात् कल्किजी अपने पिता की अनुमति से गङ्गा-त पर रहने लगे। विष्णुयश की विद्वत्सभा मे विद्वान् विप्रगण राजाओ को सन्तोष देने वाली कथाएँ कहने लगे। इस प्रकार जब सभी ज्ञानी-जन एव द्विजजन आनन्द मे निमग्न थे, तभी राजा तुम्बरु और देवताओ द्वारा पूजित नारदजी वहाँ आये ।१४-१६।

तं पूजयामास मुदा पित्रा सह यथाविधि ।
तौ सपूज्य विष्णुयशा प्रोवाच विनयान्वितः ।
नारद वैष्णवं प्रीत्या वीणापाणि महामुनिम् ।१७।
अहो भाग्यमहो भाग्य मम जन्मशतार्जितम् ।
भवद्विधाना पूर्णानां यन्मे मोक्षाय दर्शनम् ।१८।
अद्याग्नयश्च सुहुतास्तृप्ताश्च पितर. परम् ।

देवाश्च परिसन्तुष्टास्तवावेक्षणपूजनात् ।१९।
यत्पूजाया भवेत्पूज्यो विष्णुर्यन्मम दर्शनम् ।
पापसघ स्पर्शनाच्च किमहो साधुसङ्गत ।२०।
साधूना हृदय धर्मो वाचो देवा सनातना: ।
कर्मक्षयाणि कर्माणि यतः साधुर्हरि. स्वयम् ।२१।

उस अवसर पर प्रफुल्लित हृदय वाले विष्णुयश जी ने उन दोनो का विधिवत् पूजन किया और फिर उन्होने वीणायाणि विष्णु भक्त नारदजी से विनय पूर्वक कहा ।१७। विष्णुयश बोले—मेरा अहो-भाग्य है। सौ जन्मो से संचित पुन्य के प्रभाव से ही आार परम पूर्ण पुरुषो के दर्शन मेरे मोक्ष के उद्देश्य से ही प्राप्त हुए हैं ।१८। आपके दर्शन और पूजन के होने से हमारे पितरो की भी तृप्ति हो गई तथा अग्नि मे दी हुई आहुत के सफल होने से देवगण भी सन्तुष्ट हो गए हैं ।१९। जिनके पूजन मे भगवान् विष्णु का पूजन निहित है, उनके दर्शन मात्र से ही पुनर्जन्म का नाश हो जाता है। उनके स्पर्श मात्र से पापो के पुन्ज भी समूल मिट जाते हैं। ऐसे साधुओ का सग भी अद्भुत ही है ।२०। साधुओ का हृदय धर्म, वाणी सनातनदेव और कर्म ही कर्म को क्षीण करते हैं। इस प्रकार साधु ही साक्षात् हरि हैं ।२१।

मन्ये न भौतिको देहो वैष्णवस्य जगत्त्रये ।
यथावतारे कृष्णस्य सतो दुष्टविविग्रहे ।२२।
पृच्छामि त्वामतो ब्रह्मन्मायासंसारवारिधौ ।
नौकाया विष्णुभक्त्या च कर्णधारोऽसि पारकृत् ।२३।
केनाहं यातनागारान्निर्वाणपदमुत्तमम् ।
लप्स्यामीह जगद्बन्धो कर्मणा शर्म तद्वद ।२४।
अहो बलवती माया सर्वाश्चर्यमयी शुभा
पितर मातर यिष्णुर्नैव मुञ्चति कर्हिचित् ।२५।
पूर्णो नारायणो यस्य सुत. कल्किर्जगत्पतिः

त विहाय विष्णुयशा मत्तो मुक्तिमभीप्सति ।२६।

दुष्टो को दण्ड देने वाला श्रीकृष्णावतार जिस प्रकार भौतिक देह से युक्त नही है, वैसे ही तीनो लोको मे विष्णु भक्तो के शरीर भी पचभूत से युक्त प्रतीत नही होते ।२२। हे ब्रह्मन् ! इस माया मय ससार सागर मे आप ही विष्णुभक्ति रूपिणी नौका के द्वारा पार कराने वाले हैं। इसी लिये मैं आपसे कुछ पूछना चाहता हूँ ।२३। हे विश्ववन्धो ! आप मुझे यह बताने की कृपा करिये कि मै इस ससार रूपी यातनागार से मुक्त होकर श्रेष्ठ निर्वाणपद को किस कर्म के द्वारा प्राप्त कर सकता हूँ ? ।२४, नारदजी ने कहा—अहो ! यह माया कैसी आश्चर्यमयी, उज्वला और बलवती है, जिसके प्रभाव से स्वय भगवान् भी अपने पिता माता को मुक्त नही करा पाते ।२५। जिन विष्णुयशजी के पुत्र साक्षात् भगवान् जगत्पति कल्कि हैं,वे मुझसे मोक्ष की कामना व्यक्त करतेहैं।२६।

विविच्येत्थ ब्रह्ममुत. प्राह ब्रह्मयश' सुतम् ।
विविक्ते विष्णुयशस ब्रह्मसम्पद्विवर्द्धनम् ।२७।
देहावसाने जीव सा दृष्ट्वा देहावम्बनम् ।
मायाह कर्तु मिच्छन्त यन्मे तच्छृणु मोक्षदम् ।२८।
विन्ध्याद्रौ रमणी भूत्वा मायोवाच यथेच्छया ।२
अह माया मया त्यक्त कथजीवतुमिच्छसि ।३०।
नाह जीवाम्यह माये कायेऽस्मिञ्जीवनाश्रये
अहमित्यन्यथाबुद्धिर्विना देह कथ भवेत् ।३१।
देहबन्धे यथाश्लेषास्तथ बुद्धि कथ तव ।
मायाधीनां विना चेष्टा ते कुतो वद ।३२।

ब्रह्मसुवन नारदजी ने यह सोच कर ब्रह्मज्ञान देने के विचार से विष्णुयशजी से कहा ।२७। नारदजी बोले—जब देह के नष्ट होने पर पुनः देह का आश्रय प्राप्त करने की जीव ने कामना की तब माया ने जो कुछ कहा था, उसे सुनो ! इसके सुनने से ही मोक्ष मिल जाता है ।२८। उन भगवती माया ने विंध्याचल पर स्वेच्छा से नारी रूप धारण करके

कहा ।२९। माया बोली—मै माया हूँ। जब मैंने तुम्हारा त्याग कर दिया है, तब तुम पुनर्जीवन प्राप्त करने की इच्छा क्यो करते हो ? ।३०। इस पर जीव ने कहा—हे माये ! मैं तो जीवन की इच्छा नही करता, परन्तु जीवन का आश्रय शरीर ही है। अहं रूपी अभिमान के बिना देह धारण ही किस प्रकार सभव है ? ।३१। माया बोली देह धारण पर पर जो भेद ज्ञान होता है, तब तुम्हारी बुद्धि उस प्रकार की क्यो होती है ? जब चेष्टा माया के बिना सम्भव नही, तब माया रहित तुम्हारी चेष्टा किस प्रकार होती है ? ।३२।

मां विना प्राज्ञता माये प्रकाशविषयस्पृहा
मायया जीवति मरश्चेष्टते हतचेतनः ।
नि.सार· सारवद्भाति गजभुक्तकपित्थवत् ।३४।
मम ससर्गजाता त्व नानानामस्वरूपिणी ।
मा विनिन्दसि किं मूढे स्वैरिणी स्वामिन यथा ।३५।
ममाभावे तवाभाव प्रोद्यत्सूर्ये तमो यथा ।
मामावर्य विभासि त्व रविनवघनो यथा ।३६।
लीलाबीजकुशूलासि मम माये जगन्मये :
नाद्यन्ते मध्यतो भासि नानात्वादिन्द्रिजालवत् ।३७।

जीव ने कहा—हे माये ! तुम्हारी प्राज्ञता मेरे बिना प्रकाशित नही हो सकती और न फिर विषय मे स्पृहा ही सम्भव है ।३३। माया बोली—जीव का जीवन धारण माया से ही हो सकता है। माया से रहित जीव हाथी द्वारा भक्षित कपित्थ फल के समान सारहीन होता है ।३४। जीव बोला—हे मूढ़े ! तूने हमारे ही ससर्ग से उत्पन्न होकर नाना प्रकार के नाम और रूप धारण कर लिये हैं। स्वामी की निन्दा करने वाली स्वैरिणी नारी के समान तू हमारी निन्दा क्यो कर रही है ? ।३५। जैसे सूर्योदय होने पर अन्धकार का अभाव हो जाता है, वैसे ही मेरे अभाव मे तेरा भी अभाव निहित है। जैसे सूर्य को आवृत्त करता

हुआ मेघ शोभा पाता है, वैसे ही तुम भी मुझे ढक कर शोभा को प्राप्त होती हो।३६। हे माये! तुम लीला रूपी बीज की भुसी के समान हो। अनेकत्व की कारण रूपा भी तुम्ही हो तथा संसार के आदि, अन्त और लय मे इन्द्रजाल की भाति सुशोभित होती हो।३७।

एवं निर्विषयं नित्यं मनोव्यापारवर्जितम्।
अभौतिकमजीवञ्च शरीरं वीक्ष्य सा त्यजत्।३८।
त्यक्त्वा मां सा ददौ शापमिति लोके तवाप्रियः
न स्थितिर्भविता काष्ठकुड्योपम कथञ्चन।३९।
सा माया तव पुत्रस्य कल्केर्विश्वात्मनः प्रभोः।
तां विज्ञाय यथाकामं चर गां हरिभावनः।४०।
निराशो निर्मम: शान्त: सर्वभोगेषु निस्पृहः।
विष्णौ जगदिदं ज्ञात्वा विष्णुर्जगति वासकृत्।
आत्मनात्मानमावेश्य सर्वतो विरतो भव।४१।
एवं तं विष्णुयशसमामन्त्र्य च मुनीश्वरौ।
कल्किं प्रदक्षिणीकृत्य जग्मतुः कपिलाश्रमम्।४२।

इस प्रकार निर्विषय, मानसिक व्यापार और अभौतिक जीवन से परे उस शरीरधारी को देख कर माया ने उसका त्याग कर दिया।३८। उस समय माया ने मेरा त्याग करते हुए यह शाप दिया कि हे जीव! तू अप्रिय है, तू काठ की भीत के समान निश्चेष्ट एवं लोक मे सर्वथा स्थिति-हीन होगा।३९। नारदजी बोले—हे प्रभो! तुम्हारे पुत्र विश्वात्म कल्किजी ने ही इस माया को उत्पन्न किया था। तुम उस माया के तत्व को जानते हुए भगवान् विष्णु के ध्यान मे रत रहते हुए स्वेच्छापूर्वक भ्रमण करो।४०। जब तुम आशा और ममता को त्याग कर और सभी भोगो से परे होकर शान्त चित्त हो जाओगे, तब तुम्हे इसका ज्ञान होगा कि यह विश्व भगवान् विष्णु के विराट् प्रभाव मे प्रतिष्ठित है तथा भगवान् विष्णु इस लक्षित जगत् में व्याप्त हैं। इस प्रकार के ज्ञान से जीवात्मा और परमात्मा मे अभेद मानते हुए सभी

कामनाओं से मुक्त हो जाओ ।४१। इस प्रकार विष्णुयशजी को ज्ञान देकर और कल्किजी की प्रदक्षिणा कर दोनों मुनीश्वरों ने कपिलाश्रम के लिए प्रस्थान किया ।४२।

नारदेरितमाकर्ण्य कल्कि सुतमनुत्तमम् ।
नारायणं जगन्नाथं वन विष्णुयशा ययौ ।४३।
गत्वा बदरिकारण्य तपस्तप्त्वा सुदारुणम् ।
जीव बृहति सयोज्य पूर्णस्तत्याजय भौतिकम् ।४४।
मृत स्वामिनमालिङ्गय सुमतिः स्नेहविक्लवा ।
विवेश दहन साध्वी सुवेशैर्दिवि संस्तुता ।।४५।।
कल्किः श्रुत्वा मुनिमुखात्पित्रोर्निर्वाणमीश्वरः ।
सवाष्पनयन स्नेहात्तयोः समकरोत्क्रियाम् ।।४६।।
पद्मया रमया कल्किः शम्भले सुरवाञ्छिते ।
चकार राज्य धर्मात्मा लोकवेदपुरस्कृत ।४७।
महेन्द्रशिखराप्रामस्तीर्थपर्यटनाद्दत. ।
प्रायात्कल्केर्दर्शनार्थं शम्भल तीर्थकृत् ।४८।

विष्णुयशजी ने देवर्षि नारद के मुख से यह सुन कर और जान कर कि मेरे पुत्र ही भगवान् नारायण जगदीश्वर हैं, स्वय वन के लिए प्रस्थान किया ।४३। वह वहाँ से चल कर बदरिकाश्रम पहुँचे और वहाँ घोर तप करके अपने आत्मा को ब्रह्म मे सयुक्त कर दिया तथा पञ्च-भूतात्मक देह को छोड कर पूर्ण स्वरूप हो गए ।४४। अपने पति की मृत्यु हुई सुन कर सुमति स्नेह से विह्वल होकर अपने पति के साथ चिता में प्रविष्ट हो गई। उस समय श्रेष्ठ वस्त्र भूषण को धारण किये हुए देवलोक स्थित देवगण उनकी स्तुति करने लगे ।४५। कल्किजी ने मुनियों के मुख से अपने माता-पिता का महाप्रयाण सुन कर स्नेह-जन से परिपूर्ण नेत्रो के सहित उनका श्राद्धादि कर्म किया ।४६। फिर लोकाचार और धर्माचार में स्थित कल्किजी देवताओ द्वारा कामना किये हुए शम्भल ग्राम मे रमा और पद्मा के सहित राज्य करने लगे ।४७। तीर्था-

टन मे सलग्न परशुरामजी महेन्द्र पर्वत के शिखर से उतरते हुए कल्कि जी के दर्शनार्थ शम्भल ग्राम मे पधारे ।४८।

त दृष्ट्वा सहसोत्थाय पद्मया रमया सह ।
कल्किः प्रहर्षो विधिवत्पूजाञ्चक्रे विधानवित् ।४६।
नानारसैर्गुणमयैर्भोजायित्वा विचित्रिते ।
पर्यङ्केऽनर्कवस्त्राढ्ये शाययित्वा मुद ययौ ५०।
त भुक्तवन्त विश्रान्त पादसवाहनैर्गुरुम् ।
सतोष्य विनयापन्न कल्किर्मधरमब्रवीत ।५१।
तव प्रसादात्सिद्ध मे गुरौ त्रैवर्गिकश्च यत् ।
शशिध्वजततायास्तु श्रृणु राम निवेदितम् ।५२।
इति पतिवचन निशम्य राम निजहृदयेप्सितपुत्रलाभमिष्टम् ।
व्रतजपनियमैर्यमैश्च कैर्वा मम भवतीह मुदाह जामदग्न्यम् ५३

उन्हे देखते ही पद्मा और रमा के सहित कल्किजी अपने सिह-सन से उठ पडे और विधि विधान सहित हर्षित मन से उनका पूजन करने लगे ।४६। विभिन्न रसो से युक्त अन्नादि का उन्हें भोजन कराके सुन्दर वस्त्रो से ढकी हुई अद्भुत शय्या पर उन्हे शयन कराया ।५०। जिस समय गुरुवर परशुरामजी विश्राम कर रहे थे, उसी समय कल्किजी उनके चरण दाबते हुए विनय पूर्वक मधुर वाणी से कहने लगे ।५१। हे गुरो ! आपकी कृपा से मेरे धर्म, अर्थ और काम-इन तीनो वर्ग की सिद्धि हो चुकी है । इस समय राजा शशिध्वज की पुत्री रमा आपसे एक निवेदन करना चाहती है, उसे सुनने की कृपा करे ।५२। पति के वचन सुन कर हर्षित हृदय से रमा ने परशुरामजी से प्रश्न किया—व्रत, जप, नियम आदि मे ऐसा कौन-सा अनुष्ठान है, जिसके द्वारा मुझे इच्छित पुत्र की प्राप्ति हो सकती है ? ।५३।

●●●

सप्तदश अध्याय

जामदग्न्यः समाकर्ण्य रमांता पुत्रगर्द्धिजीम् ।
कल्केरभिमनं बुद्ध्वाकारयद्रुक्मिणीव्रतम ।१।
व्रतेन तेन च रमा पुत्राढ्या सुभगा सती ।
सर्वभोगेन सयुक्ता बभूव स्थिरयौवना ।२।
विधान ब्रूहि मे सूत व्रतस्यास्य च यत्फलम्
पुरा केन कृत धर्म्यं रेक्मिणीव्रतमुत्तमम् ।३।
शृणु ब्रह्मन् राजपुत्री शर्म्मिष्ठा वार्षपर्वणी ।
अवगाह्य सरोनीर सोम हरमपश्यत ।४।
सा सखीभिः परिवृता देवयान्या च सगता ।
शम्भुभीत्या समुत्थाय पर्यधुर्वसन द्रुतम् ।५।

सूतजी बोले—हे ऋषियो ! रमा को पुत्र की अभिलाषिणी जान कर और कल्किजी के अभिप्राय को समझ कर परशुरामजी ने उसे रुक्मिणी व्रत का उपदेश किया।१। उस व्रत के प्रभाव से शशिध्वज पुत्री रमा पुत्रवती, सौभाग्य सम्पन्ना, सर्व भोगों से परिपूर्ण एवं स्थिर यौवन हो गई।२। शौनकजी ने कहा—हे सूतजी ! उस रुक्मिणी व्रत का विधान और फल मुझे बताइये और साथ ही यह भी कहिये कि इस अत्यन्त उत्तम व्रत को पहिले किस ने किया था ? ।३। सूतजी ने कहा—हे ब्रह्मन् ! आपने जो पूछा है, वही कहता हूँ, सुनिये। दैत्यपति वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा थी। एक दिन वह सरोवर के जल मे घुस कर विहार रत हुई थी, तभी उसने पार्वती सहित भगवान् शंकर को वहाँ देखा

।४। तब शर्मिष्ठा, देवयानी और अन्यान्य सखियाँ सभी भयभीत होकर सरोवर से निकल कर तट पर आ गई और अपने-अपने वस्त्रो को धारण करने लगी ।५।

तत्र शुक्रस्य कन्याया वस्त्रवत्ययमात्मनः ।
सालक्ष्य कुपिता प्राह वसन त्यज भिक्षुकि ।६।
इति दानवकन्या सा दासीभि परिवारिता ।
तां तस्या वाससा बद्ध्वा कूपे क्षिप्त्वा गता गृहम् ।७।
ता मग्ना रुदती कूपे जलार्थी नहुषात्मजः ।
करे स्पृश्य समुद्धृत्य प्राह का त्वं वरानने ।८।
सा शुक्रपुत्री वसन परिधाय ह्रिया भिया ।
शर्म्मिष्ठायाः कृत सर्व प्राह राजानमीक्षती ।९।
ययातिस्तदभिप्राय ज्ञात्वानुव्रज्य शोभनम् ।
आश्वास्य ता ययो गेह तस्या. परिणयादृत: ।१०।

तभी शीघ्रता और विह्वलता के कारण दैत्यगुरु शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी ने भूल से शर्मिष्ठा के वस्त्र धारण कर लिये । यह देख कर शर्मिष्ठा क्रोधित होकर बोली—अरी भिक्षुकी ! तू मेरे वस्त्रो को उतार दे ।३। इसके पश्चात उस दैत्यराज पुत्री शर्मिष्ठा ने देवयानी को वस्त्रो से बाँध कर एक कुए मे डाल दिया और दासियो के सहित घर चली गई ।७। कूप मे गिरी हुई देवानी रुदन करने लगी, तभी नहुष-पुत्र राजा ययाति जल पीनेकी इच्छासे उस कूप पर पहुँचे । उन्होंने देव-यानी का हाथ पकड कर कूपसे निकला और बोले—हे वरानने ! तुम कौन हो-यह बताओ ।८। शुक्रपुत्री देवयानी ने राजा की ओर लज्जा और भय से देखते हुए शीघ्रता पूर्वक वस्त्र पहिने और शर्मिष्ठा ने जो कुछ किया था वह सब उन्हे कह सुनाया ।९। देवयानी के अभिप्राय को जान कर राजा ययाति ने उसका पाणिग्रहण करने की अभिलाषा प्रकट की और फिर कुछ दूर तक उसके साथ-साथ चलते हुए, उसे हर प्रकारका आश्वा-सन देकर अपने घर को चले गये ।१०।

सा गत्वा भवनं शुक्र प्राह शर्म्मिष्ठया कृतम् ।
तच्छ्रुत्वा कुपित विप्र वृषपर्वाह सान्त्वयन् ।११।
दण्डयं मां दण्डय विभो कोपो यद्यस्ति ते मयि ।
शर्म्मिष्ठां वाप्यपकृतां कुरु यन्मनसेप्सितम् ।१२।
राजान प्रणतं पादे पितुर्दृष्ट्वा रुषाब्रवीत् ।
देवयानी त्विय कन्या मम दासी भवत्विति ।१३।
समानीय तदा राजा दास्ये तां विनियुज्य सः ।
ययौ निजगृहं ज्ञानी दैव परमक स्मरन् ।१४।
तत शुक्रस्तमानीय ययाति प्रतिलोमकम् ।
तस्मै ददौ तां विधिवद्देवयानी तया सह ।१५।

इधर देवयानी ने अपने घर पहुँच कर शुक्राचार्यजी को शर्मिष्ठा की सब करतून सुनाई, जिससे वे अत्यत क्रोधित हुए । तब दैत्यराज वृषपर्वा ने उन्हे सान्त्वना दी ।११। वह बोला—हे विभो ! यदि आप मुझ पर कुपित हो तो मुझे दड दीजिए अथवा अपकार करने वाली शर्मिष्ठा को दण्ड देना चाहे तो उसे दडित करिये ।१२। दैत्यपति वृषपर्वा को अपने पिता के चरणो मे पडा हुआ देख कर देवयानी ने उससे कहा—हे राजन् आपकी पुत्री शर्मिष्ठा मेरी दासी बने ।१३। यह सुन कर दैवगति को प्रबल मानते हुए दैत्यराज ने शर्मिष्ठा को बुला कर उसे देवयानी की दासी बना दिया और फिर अपने घर को चला गया ।१४। फिर शुक्राचार्य ने राजा ययाति को विधि विधान सहित अपनी पुत्री देवयानी का कन्यादान कर दिया । उसके साथ उसकी दासी शर्मिष्ठा भी प्रदान कर दी गई ।१५।

दत्वा प्राह नृप विप्रोऽप्येना राजसुतां यदि ।
शयने ह्वयसे सद्यो जरा त्वामुपभोक्ष्यति ।१६।
शुक्रस्यैतद्वचः श्रुत्वा राजा तां वरवर्णिनीम् ।
अदृश्या स्थापयामास देवयान्यनुगा भिया १७।
सा शर्म्मिष्ठा राजपुत्री दुःखशोकभयाकुला ।

नित्य दासीशताकीर्णा देवयानीन्तु सेवते ।१८।
एकादा सा वनगता रुदती जान्हवीतटे ।
विश्वामित्रं मुनि सा त ददृशे स्त्रीभिरावृतम् ।१६।
व्रतिन पुण्यगन्धाभि सुरूपाभि॰ सुवासितम् ।
कारयन्त व्रतं माल्यधूपदीपोपहारकैः ।२०।

राजसुता शर्मिष्ठा को देते हुए शुक्राचार्य ने राजा ययाति से कहा कि हे राजन् ! यदि इसे कभी अपने शयनागार मे बुलाएँगे तो उसी समय वृद्ध हो जाएँगे ।१६। शुक्राचार्य के वचनो से भय को प्राप्त हुए राजा ययाति ने अत्यन्त रूपवती शर्मिष्ठा को ले जाकर ऐसे स्थान मे रख दिया, जहाँ पर उनकी दृष्टि भी न पड सके ।१७। अत्यन्त ही दु खिता, शोक और भय से व्याकुला राजपुत्री शर्मिष्ठा सैकडो दासियो के साथ देवयानी की सेवा मे तत्पर रहती थी ।१८। एक दिन वह शर्मिष्ठा जाह्नवी के तीर पर बैठी हुई रो रही थी, तभी उसकी दृष्टि स्त्रियो से घिरे हुए विश्वामित्र पर पडी ।१६। वे व्रती महर्षि विश्वामित्र सुगन्धित द्रव्यो से सुवासित हो रहे थे । अनेक सुन्दर नारियाँ उनके चारो ओर बैठी हुई थी । धूप, दीप, माला तथा अनेक प्रकार के उपहारो के द्वारा विश्वामित्र उन स्त्रियो से व्रत-अनुष्ठान करा रहे थे ।२०।

निर्मायाष्टदलं पद्म वेदिकाया सुचिन्हितम् ।
रम्भापोतैश्चतुर्भिस्तु चतुष्कोणं विराजितम् ।२१।
वाससा निर्मितगृहे स्वर्णपट्टै र्विचित्रिते ।
निर्मितं श्रीवासुदेवं नानारत्नविघट्टितम् ।२२।
पौरुषेण च सूक्तेन नानागन्धोदकै शुभैः ।
पञ्चमृतै. पञ्चगव्यैर्यथामन्त्रैर्द्विजेरितै. ।२३।
स्नापयित्वा भद्रपीठे कर्णिकायां प्रपूजयेत् ।
स्नामयित्वा भद्रपीठे कर्णिकाया प्रपूजयेत् ।
पञ्चभिर्दशभिर्वापि षोडशैरुपचारकैः ।२४।

पाद्यमध्वश्रमहर शीतल सुमनोहरम् ।
परमानन्दजनक गृहाण परमेश्वर ।२५।

उन्होने वेदी पर अष्टदल कमल बनाया और वेदी के चार कोणो मे कदली वृक्ष स्थापित किये ।२१। वस्त्रो से बने हुए मण्डप में एक स्वर्ण निर्मित आसन पर भगवान् वसुदेवकी विविध रत्नालङ्कारोसे अलकृत प्रतिमा प्रतिष्ठित थी ।२२। उन्होने पुरुष सूक्त का पाठ करते हुए विभिन्न सुगन्धो से युक्त जल, पञ्चामृत, पञ्चगव्य आदि सिद्ध किया और ब्राह्मणो के द्वारा उच्चारण किये हुए मन्त्र से भद्रपीठा स्थित कर्णिका पर भगवान् श्रीवासुदेव को विराजमान किया । फिर सोलह पन्द्रह अथवा दश उपचारो से उनका पूजन किया ।२३ २४। हे परमेश्वर । आपका श्रम दूर करने के निमित्त यह परमानन्द का देने वाला सुन्दर पाद्य निवेदित है । इसे स्वीकार कीजिये ।२५।

दूर्वाचन्दनगन्धाढचमर्घ्य युक्त प्रयत्नत. ।
गृहाण रुक्मिणीनाथ प्रसन्नस्य मम प्रभो।२६।
नानातीर्थोद्भव वारि सुगन्धि सुमनोहरम् ।
गृहाणाचमनीय त्व श्रीनिवास श्रिया सह ।२७।
नानाकुसुमगन्धाढच सूत्रग्रथितमुत्तमम् ।
वक्ष शोभाकर चारु माल्य नय सुरेश्वर ।२८।
तन्तुसन्तानसन्धानचित बन्धन हरे ।
गृहाणावरण शुद्ध निरावरण सप्रिय ।२६
यज्ञसूत्रमिद देव ! प्रजापतिविनिर्मितम् ।
गृहाण वासुदेव स्व रुक्मिण्या रमया सह ।३०।

हे रुक्मिणी नाथ ? हे वासुदेव प्रभो ! दूर्वा से युक्त यह चन्दन-चर्चित अर्घ्य यत्न पूर्वक स्थापित किया है, इसे प्रसन्न होकर स्वीकार कीजिये ।२३। हे श्रीनिवास ! यह अनेक तीर्थों का पवित्र जल सग्रहीत है । आप इस सुरम्य जलको आच मनीय द्वारा लक्ष्मीजी के सहित ग्रहण कीजिये ।२७। हे सुरेश्वर ! यह माला अनेक प्रकार के पुष्पो से निर्मित

हुई है इसके द्वारा आपके वक्षस्थल की शोभावृद्धि होगी । इस श्रेष्ठ माला को आप ग्रहण कीजिये ।२८। हे हरे ! आपको आवृत्त करने मे कोई भी समर्थ नही है । आप अपनी प्रिया लक्ष्मी जी के सहित इस सूत्र-सधान द्वारा निर्मित शुद्ध वस्त्रावरण को स्वीकार कीजिये ।२६। हे देव ! यह सूत्र प्रजापति द्वारा निर्मित हुआ है इसे आप अपनी पत्नी रुक्मिणीजो के सहित ग्रहण कीजिये ३०।

नानारत्नसमायुक्त स्वर्णमुक्ताविघट्टितम्
प्रियया सह देवेश गृहाणाभरण मम ।३१।
दधिक्षीरगुडान्नादिपूपलड्डुकखण्डकान् ।
गृहाण रुक्मिणीनाथ सनाथ कुरु मा प्रभो ।३२।
कर्पूरागुरुगन्धाढ्य परमानन्ददायकम् ।
धूप गृहाण वरद वैदर्भ्या प्रियया सह ।३३।
भक्ताना गेहशक्ताना ससारध्वान्तानाशनम् ।
दीपमालोकय विभो ! जगदालोकनादर ।३४।
श्यामसुन्दर ! पद्माक्ष ! पीताम्बर ! चतुर्भुज ! ।
प्रपन्न पाहि देवेश रुक्मिण्या सहिताच्युत ।३५।

हे देवेश ! हे प्रभो ! विभिन्न प्रकार के रत्नो से युक्त एव स्वर्ण द्वारा निर्मित इन आभूषणो को आप अपनी प्रिया लक्ष्मीजी के सहित ग्रहण कीजिये ।३१। हे रुक्मिणीनाथ ! यह दधि,दुग्ध,गुड, अन्न, पुआ लड्डू एव शर्करादि को ग्रहण करके मुझे सनाथ कीजिये ।३२। हे वरद ! परमानन्द के देने वाली इस कर्पूर और अगर युक्त गन्ध को आप अपनी प्रिया के सहित स्वीकार* कीजिये ।३३। हे विभो ! आप सस-कामी भक्तो के अन्धकार को नष्ट करने वाले हैं और आदर सहित जगत् को अपने प्रकाश से आलोकित कर रहे हैं, इस दीपक का अवलोकन कीजिये ।३४। हे श्यामसुन्दर ! हे कमलाक्ष ! हे पीताम्बरधारी चतुर्भुज ! हे देवेश ! आप रुक्मिणीजी के सहित प्रसन्न होते हुए हमारी रक्षा कीजिये ।३५।

इति तासा व्रत दृष्ट्वा मुनि नत्वा सुदु.खिता ।
शर्म्मिष्ठा मिष्ठवचना कृताञ्जलिरुवाच ता ।३६।
राजपुत्री दुर्भगा मां स्वामिना परिवर्ज्जिताम्
त्रातुमर्हथ हे देव्यो व्रतेनानेन कर्मणा ।३७।
श्रुत्वा तु ता वचस्तस्या. कारुण्याच्च कियत्कियत् ।
पूजोपकरण दत्वा कारयामासुरादरात् ।३८।
व्रत कृत्वा तु शर्मिष्ठा लब्ध्वा स्वामिनमीश्वरम् ।
सूत्वा पुत्रान्सुसन्तुष्टा समभूत्स्थिरयौवना ।३९।
सीता चाशोकवनिकामध्ये सरमया सह।
व्रत कृत्वा पति लेभेराम राक्षसनाशनम् ।४०।

स्त्रियो को इस प्रकार व्रत करते हुए देख कर शर्मिष्ठा ने मुनि को प्रणाम किया और हाथ जोड कर बोली ।३३। शर्ष्ठिा ने कहा—हे देवियो ! मैं अत्यत अभागी राज पुत्री हूँ । भाग्य के दोष से ही पति सग-हीना हूँ । यह व्रन किस प्रकार किया जाता है, मुझे यह बता कर मेरी रक्षा करिये ।३७। शर्मिष्ठा के वचन सुन कर उन स्त्रियो को दया आ गई और उन्होने कुछ पूजन सामग्री उसे देकर उससे आदर पूर्वक व्रत कराया ।३८। इस व्रत को करके शर्मिष्ठा भी अपने प्रिय पति को प्राप्त होकर पुत्रवती और स्थिर यौवना होकर सतुष्ट हो गई ।३९। सीता और सरमा ने भी अशोक वाटिका मे इस व्रत का अनुष्ठान किया था उसी के पुण्य-फल से सीताजी राक्षस-सहारक भगवान् राम से मिल सकी थी ।४०।

वृहदश्वप्रसादेन कृत्वेम द्रौपदी व्रतम् ।
पतियुक्ता दु खमुक्ता वभूव स्थिर यौवना ।४१।
तथा रमा सिते पक्षे वैशाखे द्वादशीदिने ।
जामदग्न्याद्व्रत चक्रे पूर्ण वर्षचतुष्टयम् ।४२।
पट्टसूत्र करे वद्ध्वा भोजयित्व द्विजान्ब ।
भुक्त्वा हविष्य क्षीराक्त सुमृष्ट स्वामिना सह ।४३।

बुभुजे पृथिवी सर्वामपूर्वा स्वजनेर्वृता ।
सा पुत्रौसुषुवे साध्वी मेघमालबलाहकौ ।४४।
देवानामुपकर्त्तारौ यज्ञदानतपोव्रतैः ।
महोत्साहौ महावीर्यौं सुभगौ कल्किसम्मतौ ।४५।
व्रतवरमिति कृत्वा सर्वसम्पत्समृद्धया भवति विदि-
तनत्वा पूजिता पूर्णकामा । हरिचरणसरोजद्व-द्वभ-
क्त्यैकताना व्रजति गतिमपूर्वां ब्रह्मविज्ञैरगम्याम् ।४६।

बृहदश्व की प्रेरणा से द्रौपदी ने इस व्रत को किया था और वह भी दुःख से मुक्त होती हुई पतिमुक्त और स्थिर यौवना हो गई ।४१। इसके पश्चात् रमा ने परशुरामजी के निर्देशन मे वैशाख शुक्ला द्वादशी के दिन इस रुक्मिणी व्रत का अनुष्ठान प्रारम्भ किया और चार वर्ष व्यतीत होने पर उसका समापन किया ।४१। रेशमी सूत्र हाथ मे बाँधते हुये रमाने ब्राह्मणो को भोजन कराया और क्षीरयुक्त श्रेष्ठ हविष्यान्न का अपने स्वामी सहित आहार किया । इससे वह स्वजनो से परिपूर्ण होकर पृथिवी का अखण्ड सुख भोगने लगी । उसके मेघमाल और बलाहक नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए ।४४। वे दोनो देवताओ के उपकारी, यज्ञ-दान और तपोव्रत मे निरत रहने वाले, अत्यत उत्साही, महापराक्रमी सौभाग्यवान् तथा कल्किजी की आज्ञा में चलने वाले थे ।४५। इस व्रत को करने वालो को सब प्रकार सुख, सम्पत्ति और समृद्धि की प्राप्ति होती है । उनकी सब कामनाएं पूर्ण होती हैं । ब्रह्मज्ञान और हरिचरणो में प्रीति उत्पन्न होती है, तथा वे श्रेष्ठ गति को प्राप्त होते हैं ।४६।

अष्टदश अध्याय

एतद्वा कथित विप्रा व्रत त्रैलोक्यविश्रुतम् ।
अतः पर कल्किकृत कर्म्म यच्छुणुत द्विजा ।१।
शम्भले वसतस्तस्य सहस्रपरिवत्सरा ।
व्यतीता भ्रातृपुत्रस्वज्ञातिसम्बन्धिभि सह ।२।
शंम्भले शुशुभे श्रेणी सभापणकचत्वरै ।
पताकाध्वजचित्राढ्यै यथेन्द्रस्यामरावती ।३।
यत्राष्टषष्टितीर्थाना सम्भव. शम्भलेऽभवत् ।
मृत्योर्मोक्ष क्षितौ कल्केरकल्करय पदाश्रयात् ।४।
वनोपवनसन्ताननाना कुसुम सकुलैः ।
शोभित शम्भल ग्राम मन्ये मोक्षपद भुवि ।५।

सूतजी बोले—हे ब्राह्मणो ! तीनो लोक मे प्रसिद्ध इस रुक्मिणी व्रत को मैंने आपके प्रति कहा है । इसके पश्चात् कल्किजी ने जो कार्य किये थे, उन्हे कहता हूँ, सुनिये ।१। इस प्रकार कल्किजी अपने भाई, पुत्र, बाधव और स्वजनो के साथ एक हजार वर्ष तक शम्भल ग्राम में निवास करते रहे ।२। उस समय वह शम्भल पुरी ध्वजा-पताकादि से विभूषित हुई सब प्रकार इन्द्र की अमरावती के समान शोभामयी प्रतीत होती थी ।३। शम्भल ग्राम मे उस काल अड़सठ तीर्थ एकत्रित हो गए थे निष्कलक कल्किजी की महिमा से शम्भल ग्राम मे मृत्यु होने पर मोक्ष की प्राप्ति होती थी ।४। वहाँ के वन-उपवन आदि अनेक प्रकारके सुन्दर पुष्पो

से परिपूर्ण और रमणीय हो रहे थे। तथा शम्भल ग्राम संसार में मोक्ष के देने वाला माना जाने लगा था।५।

तत्र कल्किः पूरस्त्रीणां नयनानन्दवर्द्धन ।
पद्मया रमया कामं रराम जगतीपतिः ।६।
सुराधिपप्रदत्तेन कामगेन रथेन वै।
नदीपर्वतकुञ्जेषु द्वीपेषु परया मुदा ।७।
रममाणो विशन्पद्मारमाद्याभीरमापतिः ८
पद्मामुखामोदसरोजशोधुवासोपभोगी सुविलासवासः ।
प्रभूतनीलेन्द्रमणिप्रकाशे गहाविशे प्रविवेश कल्किः ।६।
पद्मा तु पद्माशतरूतरूपा रमा च पीयूषलकाविलासा ।
प्रति प्रविष्ट गिरिगह्वरे ते नारीसहस्तकुलिते त्वगाताम् १०
पद्मा पतिं प्रेक्ष्यगुहानिविष्टं रन्तुं मनोज्ञा प्रविवेश पश्चात्
रमाबलायूथसमन्विता तत्पश्चाद्गता कल्किमहोग्रकामा

नगर निवासिनी नारियो के नयनो की आनन्द-वृद्धि करने वाले कल्किजी पद्मा औररमा के साथ शंभल ग्राम मे निवास करते हुए विहार करने लगे।३। वे मुदित मन से इन्द्र द्वारा दिये हुए रथ पर आरूढ होकर नदी, पर्वत, कुन्ज और द्वीप में पद्मा और रमा प्रभृति नारियो के साथ विहार करते रहे।७-८। एक समय की बात है—पद्मा के मुख मोद के पद्म-गन्ध का उपभोग करने वाले कल्किजी पर्वत की एक गुफा मे प्रविष्ट हुए जो कि अनेक नीलेन्द मणियों की आभा से प्रकाशित हो रही थी।६। उनके साथ सहस्र सखियो के सहित पद्म और पीयूषकला जैसी विलासिनी रमा भी उस गुफा मे गई।१०। अपने स्वामी कल्किजी को उस गिरिगुहा में घुसते हुए देख कर मनोहारिणी पद्मा भी उनके पीछे-पीछे गई तथा रमा ने भी विहार की इच्छा से स्त्री यूथो के सहित पीछे से प्रवेश किया।११।

तत्रेन्द्रनीलोत्पलगह्वरान्ते कान्ताभिरात्मप्रतिमाभिरीशम् ।
कल्किञ्च दृष्ट्वा नवनीरदाभं ततः स्थितं प्रस्तरवन्मुमोह ।१२

रमा सखीभिः प्रमदाभिरार्त्ता विलोकयन्ती दिशमाकुलाक्षी
पद्मा ति पद्माशतशोभमाना विषण्णचित्ता न बसौस्म चार्त्ता
भूमौ लिखन्ती निजकज्जलेन कल्कि शुक त कुचकु कुमेन ।
कस्तूरिकाभिस्तु तदग्रमग्रे निर्म्माय चालिङ्गच ननाम भावात्
रमा कलालापपरा स्तुवन्ती कामार्द्दिता तं हृदये निधाये
ध्यात्वा निजालङ्करणैः प्रपूज्य तस्थौ विषण्णा करुणावसन्ना
क्षणात्सचाय परोद रामा कलापिनः कण्ठनिभ भुवनाथम् ।
हृदोपगूढ न पुनः प्रलभ्भ कामार्द्दितेत्याह हरे प्रसीद ।१६।

नीलेन्द्र मणिमय उस गिरिगुहा मे पहुँच कर पद्मा ने देखा कि मेघ के समान कान्ति वाले कल्किजी अपने जैसे सुन्दर रूप वाली नारियो के साथ गुफा के मध्य बैठे हुए हैं । यह देख कर पद्मा अत्यत आश्चर्य के साथ मोहित होकर निश्चेष्ट पाषाण के समान पृथ्वी पर बैठ गई ।१२। सखियो के सहित रमा भी उस दृश्य को देख कर विस्मय से सब ओर देखने लगी । शत पद्माओ के समान रूप वाली नारियो को देख कर पद्मा तो दु.ख और शोकित हो ही रही थी ।१३। वह अपने नेत्र के काजल से पृथिवी को रँगने लगी । वह कुंकुम और कस्तूरी से भूमि को सुगधित करती हुई, उस पर गिर गई ।१४। कामवती रमा भी अपने हृदय मे कल्किजी का ध्यान करने लगी और हृदय-पुष्पो के द्वारा उनका पूजन करके शोक और दुःख से व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिर गई ।१५। क्षण भर के उपरान्त सचेत हुई रमा रोने लगी और अपने हृदय को कल्किजी के आलिंगन से रहित पाकर कह उठी—हे हरे ! प्रसन्न होइये ।१६।

पद्मापि निम्मुच्य निजाङ्गभूषाश्चकार धूलीपटले विलासम्
कण्ठञ्च कस्तूरिनयापि नीलं काम निहन्तु शिवतामुपेत्य १७
कलावतीना कलयाकलय क्षीणानां हरिरार्त्तबन्धुः ।
ताः सादरेणात्मपति मनोज्ञाः करेणवो यूथपति यदेयुः ।
सोनन्दभावा विपदाननुवृत्ता वनेषु रामाः परिपूर्णकामा ।१९

वैभ्राजके चैत्ररये सुपुष्पे सुनन्दने मन्दरकन्दरान्ते ।
रेमे स रामाभिरुदारतेजा रथेन भास्वत्खगमेन कल्कि: २०

पद्मा ने भी सब श्रृंगार त्याग दिया और धूल मे लेट गई । उस समय उसका कस्तूरी युक्त नील वर्ण हुआ कण्ठ कामदेव को भस्म करने वाले शिवजी के समान लगने लगा ।१७। तभी उन कातर नेत्र वाली विलासिनी प्रियाओ की इच्छा पूर्ण करने के लिए आर्तजनो के बधु कल्किजी उनके मध्य मे प्रकट हुए ।१८। यूथपति हाथी के पास जिस प्रकार हथनिया जाती हैं, वैसे ही कल्किजी के समीप वे सभी नारियाँ हर्षित हृदय होकर आगई । वे हृदय के सन्ताप को छोड कर पूर्ण कामा हो गई ।१९। फिर उदार चरित्र वाले एव तेजस्वी कल्किजी श्रेष्ठ गगनगामी रथ पर पद्मा, रमा आदि नारियो के साथ आरूढ होकर पुष्पो से परिपूर्ण वैभ्राजक, चैत्ररथ और नन्दन वन में जाकर विहार-रत हुए ।२०।

तत. सरोवर त्वरा स्त्रियो ययु· क्लमज्वरा: ।
प्रियेण तेन कल्किना वनान्तरे विहारिणा ।२१।
सर. प्रविश्य पद्मया विमोह रूपया तया ।
जल ददुर्वराङ्गना: करेणवो यथा गजम् ।२२।
इति ह युवतिलीला लोकनाथ: स कल्कि: ।
प्रिययुवतिपरीत पद्मया रामयाद्य: ।२३।
निजरमणविनोदे शिक्षयँल्लोकवर्गान्
जयति विबुधभर्त्ता शम्भले वासुदेव ।२४।
ये शृण्वन्ति वदन्ति भावचतुरा ध्यायन्ति सन्त: सदा
कल्के: श्रीपुरुषोत्तमस्य चरित कर्णामृत सादरा. ।
तेषा नो सुखयत्ययं मुररिपोर्दास्यभिलाषं विना
ससार: परिमोचनञ्च परमानन्दामृताम्भोनिधे: ।२५।

फिर वे श्रमासक्त नारियाँ विहार करने वाले कल्किजी के साथ सरोवर के तीर पर जा पहुँची । जैसे हथिनियाँ यूथपति हाथी के शरीर.

पर जल डालती हैं, वैसे ही वे सब स्त्रिया अद्भुत रूप वाली पद्मा के सहित कल्किजी के देह पर जल की वर्षा करने लगी ।२१-२२। जो कल्किजी युवतियो के साथ लीला करने मे निपुण तथा अपनी प्रिया रमा आदि नारियो के साथ विनोद युक्त विहार करने वाले हैं एव जो कल्किजी देवताओ के भी ईश्वर, आदि पुरुष और जगदीश्वर हैं, उन शम्भल ग्राम निवासी भगवान् वासुदेव की जय हो ।२३-२४। पुरुषोत्तम कल्किजी के इस कानो को अमृत के समान प्रिय लगने वाले चरित्र को जो कोई आदर पूर्वक सुनेंगे, कीर्तन या ध्यान करेंगे, उन दास्य भाव की कामना वाले सत्पुरुषो के हृदय में भगवान् की प्रीति के अतिरिक्त अन्य किसी की प्रीति या कामना उत्पन्न नहीं होगी । वे यही अनुभव करेगे कि ससार मोक्ष के अतिरिक्त अन्य कोई परमानन्द नही ।२५।

ऊनविंश अध्याय

ततो देवगणा सर्वे ब्रह्मणा सहिता रथैः ।
स्वैः स्वैर्गणैः परिवृता कल्कि द्रष्टुमुपाययुः ।१।
महर्षयः सगन्धर्वा किन्नराश्चाप्सरोगणा ।
समाजग्मुः प्रमुदिता. शम्भल सुरपूजितम् ।२।
तत्र गत्वा सभामध्ये कल्कि कमललोचनम् ।
तेजोनिधि प्रपन्नाना जनानामभयप्रदम् ।३।
नीलजीमूतसंकाश दीर्घपीवरबाहुकम् ।
किरीटेनार्कवर्णेन स्थिरविद्युन्निभेन तम् ।४।
शोभमान द्युमणिना कुण्डलेनाभिशोभिना ।
सहर्षालापविकसद्वदन स्मितशोभिनम् ।५।

सूतजी बोले—इसके अनन्तर एक समय सब देवता और ब्रह्मा सयुक्त होकर अपने अपने गणो के सहित रथो पर चढ कर कल्किजी के दर्शनार्थ आये ।१। महर्षिगण, गन्धर्वगण, किन्नरगण तथा अप्सरागण सभी अत्यंत मुदित हृदय से उस सुरपूजित शभल ग्राम मे एकत्र हुए ।२। फिर सब कल्किजी को सभा में गये और वहाँ पहुँच कर उन्होने देखा कि कमललोचन भगवान् कल्किजी शरणागतो को अभयदाता रूप से विराजमान हैं ।३। उनकी कान्ति नील मेघ समान थी, दीर्घ और सुपुष्ट भुजाएँ हैं, उनका मस्तक स्थिर विद्युत अथवा सूर्य के समान तेजोमय किरीट से सुशोभित है ।४। उनका मुख मंडल सूर्य के समान प्रकाश करने वाले

कुडलो से सुशोभित है उनका मुखारविन्द मधुर मुसकान और हर्षालाप से अत्यत शोभा को प्राप्त हो रहा है ।५।

कृपाकटाक्षविक्षेपपरिक्षिप्तविपक्षकम् ।
तारहारोल्लसद्वक्षश्चन्द्रकान्तमणिश्रिया ।६।
कुमुद्वतीमोदवह स्फुरच्छक्रायुधाम्बरम् ।
सर्वदानन्दसन्दोहरसोल्लसितविग्रहम् ।७।
नानामणिगणोद्योतदीपित रूपमद्भुतम् ।
ददृशुर्देवगन्र्वा ये चान्ये समुपागता ।८।
भक्त्या परमया युक्ता. परमानन्दविग्रहम् ।
कल्कि कमलपत्राक्ष तुष्टुवुः परमादरात् ।९।
जयाशेषसक्लेशकक्षप्रकीर्णानलोद्दाममकीर्णहीश
देवेश विश्वेश भूतेश भावः । त्वानन्त चान्त.स्थितोऽङ्घ्रास्तरत्न
प्रभाभातपादाजितानन्तशक्ते ।१०।

शत्रु भी उनके कृपा-कटाक्ष-विक्षेप से अनुग्रह को प्राप्त होते हैं । वक्षस्थल पर चन्द्रकान्त मणि की कुमुदिनी को प्रसन्न करने वाली ज्योति से सयुक्त हार सुशोभित है, वस्त्र इन्द्र-धनुष के समान विविध रगो में शोभा को बढा रहे हैं । आनन्द रस के कारण हृदय उल्लसित हो रहा है ।६-७। देवता गधर्वादि सभी आगन्तुकोको कल्किजी का अनेक मणियो से सशोभित एव तेजस्वी रूप इस प्रकार अत्यत अद्भुत दिखाई दिया ।८। तब वे सभी परम भक्ति भाव से आदर पूर्वक उन परमानन्द विग्रह कमल लोचन कल्किजी की स्तुति करने लगे ।९। देवताओ ने कहा—हे देवेश ! हे विश्वेश्वर ! हे भूतेश्वर ! हे प्रभो ! आप सभी भावो से युक्त एव अनन्त हैं । आपके प्रचण्ड अग्नि रूप के किंचित् स्पर्श से भी इस ससार भर के क्लेश-पुंज भस्म हो जाते हैं । कान्ति की राशि से सम्पन्न आपके चरणो से लोक प्रकाशित है । हे अनन्तशक्ते ! आपकी जय हो ।१०।

प्रकाशीकृताशेषलोकत्रयात्र वक्षः स्थले भास्वत्कभौस्तु
श्याम मेघौघराजच्छरीरद्विजाधीशतुङ्गनन त्राहि
विष्णो स दाराः वय त्वा प्रसन्ना सशेष ।११।
यद्यस्त्यनुग्रहोऽस्याक व्रज वैकुण्ठमीश्वर ।
त्यक्त्वाशासितभूखण्ड सत्यधर्माविरोधत ।१२।
कल्किस्तेषामिति वच. श्रुत्वा परमहर्षित· ।
पात्रात्रैः परिवृतश्चकार गमने मतिम् ।१३।
पुत्रानाहूय चतुरो महाबलपराक्रमान् ।
राज्ये निक्षिप्य सहसा धर्मिष्ठाप्रकृतिप्रियान् ।१४।
तत· प्रजाः ममाहूय कथयित्व निजः कथाः ।
प्राह तान्त्रिजनिर्याण देवानामुपरोधत. ।१५।

हे प्रभो ! आपके श्याम वर्ण वाले वक्षस्थल मे अत्तन्त ज्योति सम्पन्ना कौस्तुभमाणी सुशोभित है। उस मणि के रश्मिजाल से तीनो लोक प्रकाशित हो रहे है इससे ऐमा प्रतीत होता है जैमे मेघमाल के मध्य पूर्ण चन्द्र प्रतिष्ठित हो। हे नाथ ! हम सब विपत्ति में पडे हुऐ हैं और अपने नारी, पुत्र, स्वजनादि के सहित आपकी शरण में आते हैं। हे प्रभो ! हम पर प्रसन्न होकर हमारी रक्षा कीजिये ।११। हे नाथ ! अब यह पृथ्वी सत्य और धर्म से अविरोध पूर्वक शासित है। यदि आपकी हम पर कृपा है तो अब इसे त्याग कर वैकुण्ठ के लिए प्रस्थान कीजिये ।१२। देवाताओं के इन वचनो को सुन कर कल्किजी अत्यत प्रसन्न हुए और वे अपने सुपात्र मित्रो के सहित वैकुण्ठ गमन की इच्छा करने जगे ।१३। तब उन्होंने प्रजा वत्सल, महाबली एवं धार्मिक अपने चारो पुत्रो को बुला कर तुरन्त ही राज्याभिषेक कर दिया ।१४। फिर उन्होंने सम्पूर्ण प्रजा को बुला कर अपना वृत्तान्त कहते हुए उसे सूचित कर दिया कि अब हमे देवताओ के अनुरोध पर वैकुण्ठ धाम के लिए जाना है ।१५।

तच्छ्रुत्वा ता प्रजा: सर्वा रुरुदुर्विस्महान्विता: ।
त प्राहु प्रणता पुत्रा यथा पितरमीश्वरम् ।१६।
भो नाथ सर्वधर्मज्ञ नास्मान्त्यक्तुमिहार्हसि
यत्र त्व तत्र तु वय याम प्रणतवत्सल ।१७।
प्रिया गृहा धनान्यत्र पुत्रा प्राणास्तवानुगाः ।
परत्रेह विशोकाय ज्ञात्वा त्वा यज्ञपुरुषम् ।१८।
इति तद्वचन श्रुत्वा सान्त्वयित्वा सदुक्तिभि: ।
प्रययौ क्लिन्नहृदय: पत्नीभ्या सहितो वनम् ।१९।
हिमालय मुनिगणैराकीर्णं जान्हवीजलै: ।
परिपूर्ण देवगणै सेवित मनस प्रियम् ।२०।
गत्वा विष्णु सुरगणैर्वृतश्चाश्चतुर्भुज ।
उषित्वा जान्हवीतीरे सस्मारात्मानमात्मना ।२१।

यह सुनकर सम्पूर्ण प्रजा अत्यन्त विस्मयमे पडकर रुदन करने लगी । जैसे पुत्र पिता से निवेदन करता है, वैसे वह प्रणाम करके उनसे बोली ।१६। प्रजा ने कहा—हे नाथ ! आप सभी धर्मों के जानने वाले हैं । आप प्रणतपाल को हम सब का परित्याग नही करना चाहिये । हे नाथ ! हम आपके साथ चलेगे ।१७। इस जगत् मे सभी को अपना धन, सन्तान और घर ही अत्यन्त प्रिय है । आप यज्ञ पुरुष सभी के दुःख और शोक का शमन करने मे समर्थ हैं । यह जान कर हमारे प्राण भी आपका अनुगमन करने के लिए इच्छुक हैं ।१८। प्रजा के यह वचन सुन कर कल्किजी ने उन्हे श्रेष्ठ उपदेश देकर सान्त्वना प्रदान की और खेद-युक्त मन से अपनी दोनो पत्नियो को साथ लेकर वन के लिए चल दिये ।१९। वे गगाजल से सम्पन्न, देवताओं और मुनियो से उपासित हृदय को आनन्द देने वाले हिमालय पर्वत पर पहुँच कर देवताओ के मध्य विराजमान हुए और चतुर्भुज विष्णु स्वरूप धारण करके अपने रूप का स्मरण करने लगे ।२०-२१।

पूर्णज्योतिर्मय साक्षी परमात्मा पुरातनः ।
बभौ सूर्यसहस्राणां तेजोराशिसमद्युतिः ।२२।
शखचक्रगदापद्मशार्ङ्गाद्यै. समभिष्टुत ।
नानालङ्करणानाञ्च समलङ्करणाकृति. ।२३
ववृषुस्त सुराः पुष्पै कौस्तुभामुक्तकन्धरम् ।
सुगन्धि कुसुमासारैर्देवदुन्दुभिनि स्वनै ।२४।
तुष्टुवुर्मुर्मुहुः सर्वे लोका सस्थाणुजगमा ।
दृष्ट्वा रूपमरूपस्य निर्याणे वैष्णवं पदम् ।२५।
तद्दृष्ट्वा महदाश्चर्य पत्युः कल्केर्महात्मन. ।
रमा पद्मा च दहन प्रविश्य तमवापतुः ।२६।

तब वे पूर्ण ज्योतिमान् सर्वसाक्षी स्वरूप,सनातन पुरुष परमात्मा कल्किजी सहस्रो सूर्य के समान तेज से प्रकाशित हो रहे थे ।२२। विविध अलकारो से युक्त वे स्वय भी अलकार के समान प्रकाशित हो रहे थे । शख, चक्र, गदा, पद्म और शार्ङ्ग धनुष आदि समन्वित उनका वर्ण विग्रह पूजित होने लगा ।२३। उनके वक्षस्थल पर कौस्तुभमणि - सुशोभित थी । देवगण उन पर पुष्पवृष्टि कर रहे थे और सब ओर दुदुभिया बज रही थी ।२४। जब वे कल्किजी विष्णुपद में प्रविष्ट हुए, तब उन अरूप जगदीश्वर के रूप-दर्शन से सभी जीव मोह को प्राप्त हो गए ।२५। अपने पति कल्किजी के इस अद्भुत रूप को देख कर रमा और पद्मा अग्नि मे प्रविष्ट होकर उसमें लीन होगई ।२६।

धर्म कृतयुगं कल्केराज्ञया पृथिवीतले ।
नि.सपत्नौ सुसुखिनौ भूलोक चेरतुश्चिरम् २७।
देवापिश्च मरु· काम कल्केरादेशकारिणौ ।
प्रजाः सपालयन्तौ तु भुव जुगुपतु· प्रभू ।२८।
विशाखयूपभूपालः कल्केर्निर्याणमीदृशम् ।
श्रुत्वा स्वपुत्रं विषये नृप कृत्वा गतो वनम् ।२९।

अन्ये नृपतयो ये च कल्केर्विरहकर्षिता ।
तध्यायन्तो जजन्तश्च विरक्ताः स्युर्नृपासने ।३०।
इति कल्केरनन्तस्य कथा भुवनपावनीम् ।
कथयित्वा शुक प्रायान्नरनारायणाश्रमम् ।३१।
मार्कण्डेयादयो ये च मुनय. प्रशमायनाः ।
श्रुत्वानुभाव कल्केस्ते त ध्यायन्तो जगुर्यश. ।३२

भगवान् कल्किजी की आज्ञा के अनुसार धर्म और सत्युग भार्या-विहीन रह कर सुख पूर्वक भूमडल पर चिरकाल तक विचरण करते रहे।२७ देवापि और मरु—यह दोनो राजा कल्किजी के आदेशानुसार प्रजा-पालन एव प्रथिवी के रक्षण में तत्पर हुए ।२८। भगवान् कल्किजी का गमन सुन कर विशाखयूप नरेश भी अपने पुत्र को राज्य देकर वन मे चले गये ।२९। अन्यान्य राजागण भी कल्किजी के वियोग को सहन न कर सके। उन्होने अपने-अपने राज्य का त्याग कर दिया और कल्किजी के रूप का ध्यान करते हुए उन्ही का नाम जपने लगे ।३०। अनन्त प्रभु कल्किजी की इस लोक पावनी कथा का वर्णन करने के पश्चात शुकदेवजी ने नर-नारायण को प्रस्थान किया ।३१। शान्त चित्त वाले मार्कण्डेय आदि मुनिगण भगवान् कल्किजी के इस माहात्म्य को श्रवण कर उनका ध्यान करते हुए यशोगान मे तत्पर हुए ।३२।

यस्यानुशासनाद्भूमौ नाधर्मिष्ठाप्रजाजनाः ।
नाल्पायुषो दरिद्राश्च न पाखण्डा न हैतुका. ।३३
नाधयो व्याधयः क्लेशा देवभूतात्मसम्भवा. ।
निर्मत्सरा· सदानन्दा बभूवुर्जीवजातय ।३४।
इत्येतत्कथित कल्केरवतार महोदयम् ।
धन्य यशस्यमायुष्य स्वर्ग्यं स्वस्त्ययन परम् ।३५।
शोकसन्तापपापघ्न कलिव्याकुलनाशनम् ।
सुखद मोक्षद लोके वाञ्छितार्थफलप्रदम् ।३६।

तावच्छास्त्रप्रदीपाना प्रकाशो भुवि रोचते।
भाति भानु पुराणाख्यो यावल्लोकेऽस्ति कामधुक् ।३७।
श्रुत्वं तद्भृगुवशजो मुनिगणः साक सहृषों वशी
ज्ञात्वा सूतममेषबोधविदित श्रीलोमहृर्षात्मजम् ।
श्रीकल्केरवतारवाक्यममल भक्तिप्रदे श्रीहरे:
शुश्रूषु पुनराह साधुवचसा गगास्तत्र सत्कृत ।३८।

जिनके शासनकाल मे इस पृथिवी पर कोई भी धर्म-हीन अल्पायुष्य, दरिद्री, पाखण्डी तथा कपट पूर्ण आचरण वाला व्यक्ति नही रहा और सभी प्राणी आधि-व्याधि से रहित, क्लेश-रहित और मात्सर्य-रहित होकर देवताओ के समान सुखी हो गए, उन्ही के अवतरण का का यह प्रसग कहा गया है। इसके श्रवण मात्र मे धन, यश और आयु की वृद्धि होती और परमानन्द की प्राप्ति होती है तथा अन्तकाल मे स्वर्ग की उपलब्धि हो जाती है।३३-३५। यह कथा सुनने से शोक, सन्ताप और पाप को नष्ट करती है। कलियुग के उद्वेगो का शमन मोक्ष एव वाञ्छित फल देने मे वह समर्थ हैं।३६। इच्छित फल को दाता पुराण रूपी सूर्य को उदय जब तक ससार मे नही होता, तभी तक अन्यान्य-शास्त्र दीपक माला का प्रकाश टिक पाता है।३७। भृगुवश मे उत्पन्न मुनिगण शौनकादि ऋषियो ने इस भक्ति रस से परिपूर्ण कल्कि कथा के श्रवण से अत्यन्त आनन्द प्राप्त किया। वे जान गये कि लोमहर्षण के पुत्र सूतजी ज्ञान में इस प्रकार प्रवृत हैं। मुनियो के हृदय मे हरि कथा सुनने की इच्छा पुनः जागृत हुई और उन्होने आदर सहित गगास्तोत्र के विषय मे सूतजी से प्रश्न किया।३८।

विंश अध्याय

हे सूत ! सर्वधर्मज्ञ यत्वया कथित पुरा ।
गगा स्तुत्वा समायाता मुनय· कल्किसन्निधिम् ।१।
स्तव त वदा गगाया सर्वपापप्रणाशनम् ।
मोक्षद शुभद भक्त्या शृण्वता पठना मिह ।२।
शृणुध्वमृषय: सर्वे गगास्तव मनुत्तमम् ।
शोकमोहर पु सामृषिभि परिकीर्त्तितम् ।३।
इय सुरतरगिणी भववारिधेस्तारिणी ।
स्तुता हरिपदाम्बुजादुपगता जगत्ससद: ।
सुमेरुशिखरामरप्रियजला मलक्षालनी ।
प्रसन्नवदना शुभा भवभयस्य विद्राविणी ।४।
भगीरथमथानुगा सुरकरीन्द्रदर्पापहा
महेशमुकुटप्रभा गिरिशिर पताकासिता ।
सुरासुरनरोरगैजभवाच्युतै स स्तुता
विमुक्तिफलशालिनी कलुषनाशिनी राजते ।५।

शौनकजी बोले—हे सूतजी ! आप सभी धर्मों के जानने वाले हैं। आपने कहा था कि मुनिगण गङ्गा जी का स्तवन करके कल्किजी के पास पहुँचे थे, तो वह स्तव कौन-सा है, जिसके भक्ति-सहित पढने या सुनने से मोक्ष रूपी मङ्गल की प्राप्ति होती हैं और सभी पापो का नाश होता है। उसे हमारे प्रति कहिये ।१-२। है सूतजी ने कहा—हे मुनियो ! उस

और मोह के नाशक अत्यत श्रेष्ठ ऋषि प्रणीत गगा-स्तोत्र को आपके प्रति कहता हूँ, सुनिये ।३। ऋषियो ने कहा—यह सुरतरगिणी ससार समुद्र से पार करने वाली भगवान् विष्णु के चरण-विन्दो से उद्भुत होकर भूमडल पर प्रवाहित हुई । यह भवभय विनाशिनी, पाप नाशिनी, सुमेरु शिखर वासिनी, अमृत जल वाली, प्रसन्नवदना भगवती गगाजी शुभप्रदायिनी एव सर्व पूजिता है ।४ यह भगवती राजा भगीरथ के पीछे-पीछे पृथिवी पर चली । इन्होने ऐरावत का गर्व खडन किया । यह शिवजी के मस्तक मे मुकुट की प्रभा रूप से शोभामयी और हिमालय की श्वेत पताका के समान हैं । सभी देवता, दैत्य, मनुष्य और नाग आदि इनके यश का सदा गान करते रहते हैं । यह पापनाशिनी एव मोक्षदायिनी हैं ।५।

पितामहकमन्डलुप्रभवमुक्तिबीजालता
श्रुतिस्मृतिगणस्तुता द्विजकुलालवालावृता ।
सुमेरुशिखराभिदा निपतिता त्रिलोकावृता ।
सुधर्मफलशालिनी सुखपलाशिनी राजते ।६।
चरद्विहगमालिनी सगरवशमुक्तिप्रदा
मुनीद्रवरनन्दिनी दिवि मता च मन्दाकिनी ।
सदा दुरितनाशिनी विमलवारिसदर्शन-
प्रणामगुणकीर्तनादिष जगत्सु सराजते ।७।
महाभिधसुताङ्गना हिमगिरीशकूटस्तनी
सफेनजलहासिनी सितमरालसचारिणी ।
चलल्लहरिसत्करा वरसरोजमालाधरा
रसोल्लसितगामिनी जलधिकामिनी राजते ।८।

इस मुक्ति रूपी बीजलताका प्रादुर्भाव ब्रह्मा जी के कमण्डलुमे हुआ है । द्विजगण इसके आल-वाल रूप और सुधर्म इसको फल है । यह सुख रूप किसलयो से परिपूर्ण लता सुमेरु पर्वत का भेदन करके प्रगट हो गई । तीनो लोकी मे व्याप्त गगाजी का यह स्तोत्र श्रुति, स्मृति

आदि सभी धर्म शास्त्रो से सम्मत है।६। सगरवश को मोक्ष देने वाली यह जान्हवी, देवताओ के लिए मन्दाकिनी स्वरूपा तथा सदैव मगल के देने वाली है। प्रणाम पूर्वक इनका गुणगान करने और इनके निर्मल जल का दर्शन करने से ही सन्सार मे सुख की प्राप्ति होती है।७। हिमा-लय के शिखर रूपी वक्ष वाली यह भगवती महाराज शान्तनु की रानी हुई थी। इनका फेनो से युक्त जल ही हास है तथा श्वेत वर्ण वाले हस जिनकी गति, खिले हुए कमलोकीपक्ति जिनकी माला तथा तरगही जिनके हाथ हैं, ऐसी रसवती वह गगा प्रमुदित गति से समुद्र से मिलने के लिए बढी चली जा रही है।८।

क्वाचित्कलक्लस्वना क्वचिदधीरयादोगणा·
क्वचिन्मुनिगणै स्तुता क्वचिदनन्तसपूजिता।
क्वचिद्रविकरोज्वला क्वचिदुदग्रपाताकुला
क्वचिज्जनविगाहिता जयति भीष्ममातासती।९।
स एव कुशलो जन प्रणमतीह भागीरथी
स एव तपसा निधिर्जपति जाह्नवीमादरात्।
स· एव पुरुषोत्तम· स्मरति साधु मन्दाकिनी
स एव विजयी प्रभु· सुरतरगिणी सेवते।१०।
तवामल जलातित खगश्रृगालमीनक्षत
चलल्लहरि लोलित रुचिर तीर जम्बालितम्।
कदानिजवपुर्मुदा सुरनरोरगै सस्तुतोऽ-
प्यह त्रिपथगामिनि! प्रियमतीव पश्याम्यदो।११।

जिनकी कही मुनिगण स्तुति करते हैं, तो कही अनन्त भगवान् द्वारा पूजी जाती है। जिनके जल मे कही विकराल जीव विचर रहे हैं, कही जिनका जल कल कल-गान कर रहा है, वही जल कही भीषण नाद करता हुआ पतित हो रहा है, उस पर कही सूर्य रश्मियाँ पड कर उसे प्रकाशमय कर रही हैं और कही उस जल मे मनुष्य स्नान कर रहे हैं। ऐसी इन भीष्म की माता सती गगाजी की जय हो।९। इन भगवती

गंगा को प्रणाम करने वाले पुरुष कुशल हैं। इनके नाम का जप करने वाले मनुष्य ही वास्तव में तपस्वी हैं। इनका स्मरण करने वाले प्राणी ही श्रेष्ठ है। इनकी उपासना करने वाले जीव ही सब को जीतने मे समर्थ तथा सम्पूर्ण ऐश्वर्यो के स्वामी है।१०। हे देवि ! हे त्रिपथगे ! आपके निर्मल जल मे हमारा शरीर कब भासित होगा ? इस देह के मृत होने पर पक्षी और शृगाल आदि कब इसे नोचेंगे और फिर कब यह आपकी चचल तरंगो मे उछलता हुआ तट पर स्थित शिवारो से कब सजेगा ? हे माता ! मै स्वर्ग लोक को कब प्राप्त कर सकूँगा और सुर, नर नाग कब मेरा स्तव करेंगे ? इस प्रकार का अपना सौभाग्य मे कब देख सकूँगा ? ११।

त्वत्तीरे वसति तवामलजलस्न न तव प्रेक्षण
त्वन्नामस्मरण तवोदयकथासलापन पावनम् ।
गंगे मे तव सेवनैकनिपुणोऽप्यानन्दितश्चादृत
स्तुत्वा त्वद्गतपातको भुवि कदा शान्तश्चरिष्याम्यहम् ।२१।
इत्येतदृषिभि प्रोक्त गतास्तवमनुत्तमम् ।
स्वर्ग्यं यशस्यमायुष्य पठनाच्छ्रवणादपि ।१३।
सर्वपापहर पुंसा बलमायुर्विवर्द्धनम् ।
प्रातर्मध्याह्नसायाह्ने गंगासान्निध्यता भवेत् ।१४।
इत्येतद्भार्गवाख्यान शुकदेवान्मया श्रुतम् ।
पठित श्रावित चात्र पुण्य धन्य यशस्करम् ।१५।
अवतार महाविष्णोः कल्के परममद्भुतम् ।
पठता शृण्वता भक्त्या सर्वाशुभविनाशनम् ।१६।

हे गंगे ! आपके तट पर वास करता हुआ और आपके निर्मल जल में स्नान करता हुआ मैं कब आपके दर्शन करूँगा ? कब आपका नाम स्मरण करता हुआ आपके अवतरण की पुनीत गाथा का गान करूँगा ? आपकी सेवा करने के फल रूप मे मेरे हृदय मे आपकी भक्ति

का सञ्चार कब होगा ? मेरे द्वारा किये हुए पाप कब नष्ट होगे ? कब मैं शान्त चित्त से पृथिवी पर विचरण करता हुआ आदर को प्राप्त हूँगा ? ।१२। इस ऋषि प्रोक्त गंगा-स्तव का इस प्रकार पाठ किया गया । इसके पढने और सुनने से यश-लाभ होना तथा आयु की वृद्धि होती है।१३। इस स्तोत्र का प्रात॰ मध्याह्न और साय—तीनो काल पाठ करने से गगा जी का सान्निध्य प्राप्त होकर सब पापो का क्षय तथा बल और आयु की वृद्धि होती है ।१४। इस भार्गवाख्यान का मैंने शुकदेवजी से श्रवण किया था । यह पढन और सुनने से पुण्यप्रद तथा धन और यश के बढाने वाला है ।१५। भगवान् कल्कि के अवतार विषयक अद्भुत् उपाख्यान का भक्ति सहित पाठ अथवा श्रवण करने पर सब प्रकार के अमगलो का का नाश हो जाता है ।१६।

तृतीयांश—

एकविंश अध्याय

अत्रापि शुकसम्बादो मार्कण्डेयेन धीमता ।
अधर्मवंशकथनं कलेर्विवरणं ततः ।१।
देवानां ब्रह्मसदनं प्रयाणं गोभुवा सह ।
ब्रह्मणो वचनाद्विष्णोर्जन्म विष्णुयशोगृहे ।२।
सुमत्यास्वाशकैर्भ्रातृचतुर्भिः शम्भले पुरे ।
पितुः पुत्रेण सम्बादस्तथोपनयनं हरे ।३।
पुत्रेण सह सवासो वेदाध्ययनमुत्तमम् ।
शस्त्रास्त्राणां परिज्ञानं शिवसदर्शनं ततः ।४।
कल्के. स्तवं शिवपुरो वरलाभं शुकापनम् ।
शम्भलागमनं चक्रे ज्ञातिभ्यो वरकीर्तनम् ।५।

सूतजी बोले—इस पुराण मे प्रथम मार्कण्डेयजी और शुकदेवजी का सम्वाद वर्णन हुआ है । फिर अधर्म के वंश का वर्णन और कल्किजी का प्रसंग आया है । इसके अनन्तर गोरूप धारिणी पृथिवी के देवताओं के साथ ब्रह्मलोक गमन और विष्णुयशजी के घर कल्किजी के जन्म लेने की कथा कही गई । तत्पश्चात् भगवान् विष्णु के अंश से चारो भाइयो के शंम्भल ग्राम मे अवतरित होने का उपाख्यान, पिता-पुत्र-सवाद और कल्किजी के उपनयन संस्कार का विवरण है ।१ ३। फिर पिता पुत्री का साथ साथ रहना, कल्किजी का वेद शास्त्रो तथा शस्त्रास्त्र की शिक्षा पाने की और भगवान् शंकर के दर्शन होने की कथा कही गई है ।४। तदनन्तर कल्किजी द्वारा शंकर-स्ततव और वर प्राप्त करना और शिवजी

५०६+३२=५३८

द्वारा प्रदत्त शुक के सहित उनका शम्भल ग्राम को लौटना तथा जाति बन्धुओ से वर प्राप्ति का वर्णन किया गया है ।५।

वशाखयूपभूपेन निजसर्वात्मवर्णनम् ।
महाभाग्याद्ब्राह्मणाना शुकस्यागमन तत. ।६।
कल्किना शुकसम्वाद सिंहलाख्यानमुत्तमम् ।
शिवदत्तवरा पद्मा तस्या भूपस्वय वरे ।७।
दर्शनाद्भूपसघाना स्त्रीभावपरिकीत्तनम् ।
तस्या विषाद, कल्केस्तु विवाहार्थं समुद्यमः ।८।
शुकप्रस्थापन दौत्ये तया तस्यापि दर्शनम् ।
शुकपद्मापरिचयः श्रीविष्णु' पूजनादिकम् ।९।
पादादिदेहध्यानञ्च केशान्त परिवर्णितम् ।
शुकभूषणदानञ्च पुन शुकसमागम ।१०।

फिर विशाखयूप नरेशके प्रति कल्किजी द्वाराअपने स्वरूपका और ब्राह्मण—माहात्म्य का वर्णन करना तथा शुक के आगमनकी कथा कही गई है ।३। फिर कल्कि-शुक सवाद, शुक द्वारा सिंहल द्वीप वर्णन, शिव द्वारा पद्मा को वर प्राप्ति का प्रसग पद्मा के स्वयवर मे आये हुए राजाओ को स्त्रीत्व प्राप्ति का वर्णन तथा पद्मा के सताप की चर्चा और विवाह के लिए कल्किजी के उद्यम की कथा कही गई है ।७-८। शुक का दूत-भाव से प्रस्थान, पद्मा और शुक की भेट तथा दोनो के परिचय का प्रसग और विष्णु भगवान् के पूजन की कथा हैं ।९। तदुपरान्त चरण से केश पर्यन्त, भगवान् के ध्यान करने का प्रस ग, शुक को आभूषण-दान और शुक का कल्किजी के पास लौटना—यह कथा वर्णित हुई है ।१०।

कल्के. पद्माविवाहार्थ गमन दर्शन तयो ।
जलक्रीडाप्रसङ्गेन विवाहस्तदनन्तरम् ।११।
पु स्त्वप्राप्तिश्च भूपाना कल्केदर्शनमात्रत· ।
अनन्तागमन राज्ञा सम्वादस्तेन ससदि ।१२।

षण्डत्वादात्मनो जन्म कर्म चात्र शिवस्तवः।
मृते पितरि तद्विष्णोः क्षेत्रे माया प्रदर्शनम् ।१३।
अत्राख्यानमनन्तस्य ज्ञानवैराग्यवैभवम् ।
राज्ञा प्रयाण क केश्च पद्मया सह शम्भले ।१४।
विश्वकर्मविधानञ्च वसति पद्मया सह ।
ज्ञातिभ्रातृसुहृत्पुत्रै सेनाभिर्बद्धनिग्रह ।१५।

तदनन्तर विवाह के उद्देश्य से कल्किजी का गमन, जल क्रीडा के प्रसग द्वारा कल्किजी और पद्मा का पारस्परिक परिचय और इनके विवाह का प्रसग कहा गया है ।११। फिर स्त्रीत्व को प्राप्त हुए राजा-गण का कल्कि-दर्शन से पुन. पुरुषत्व की प्राप्ति, अनन्त मुनि का सभा मे आगमन और राजाओ से सम्वाद की कथा का वर्णन है ।१२। षण्ड रूप से अनन्त मुनि के जन्म का वर्णन, शिवजी की स्तुति और अनन्त मुनि के पिता के परलोक-गमन के पश्चात् विष्णु क्षेत्र मे भगवती माया के दर्शन का प्रसग कहा गया है ।१३। तदनन्तर अनन्त का आख्यान, ज्ञान एवं वैराग्य रूप एश्वर्य का प्रसग, फिर राजाओ का प्रयाण और पद्मा सहित कल्किजी के शम्भल-गमन की कथा कही है ।१४। फिर विश्वकर्मा द्वारा शम्भलपुरी का निर्माण और उसमे पद्मा, जाति-बांधव, भ्रात गण, सुहृद्जन, पुत्रादि तथा सेना के सहित कल्किजी का निवास और बौद्धो के निग्रह की कथा वर्णन की गई है ।१५।

कथितश्चात्र तेषाञ्चा स्त्रीणां सयोधनाश्रयः ।
ततोऽत्रो बालखिल्यीना मुनीना रवानिवेदनम् ।१६।
सपुत्राया. कुथोदर्या वधश्चात्र प्रकीर्त्तित: ।
हरिद्वारगतस्यापि कल्केमु निसमागम ।१७।
सूर्यवंशस्य कथन सोमस्य च विधानत. ।
श्रीरामचरित चात्रसूर्यवंशानुवर्णने ।१८।
देवापेश्च मरो सर्वो युद्धायात्र प्रकीर्तित. ।

महाघोरवनेकोक विकोकविनिपातनम् ।१९।
भल्लाटगमन तत्र शय्याकर्णादिभि सह ।
युद्ध शशिध्वजेनाथ सुशान्ता भक्तिकीर्तनम् ।२०।

तदुपरान्त बौद्धो की नारियो का रणक्षेत्र मे युद्ध के उद्देश्य से आगमन, बालखिल्य मुनियो का आगमन और अपने वृत्तान्त का वर्णन ।१३। फिर कुथोदरी नाम की राक्षसी का अपने पुत्र के सहित मारा जाना तथा हरिद्वार मे कल्किजी से मुनियो का मिलना कहा गया है ।१७। फिर सूर्यवश और चद्रवश का वर्णन तथा सूर्यवश के प्रसग में भगवान् श्री राम का चरित्र-वर्णन हुआ है ।१८। फिर मरु और देवापि का युद्ध के लिए आगमन, अत्यन्त विकराल कोक-विकोक का वध, कल्किजी की भल्लाट नगर-यात्रा, शय्याकरण आदि से युद्ध, शशिध्वज-कल्किजी का सग्राम और सुशाता द्वारा भक्ति एवं कीर्तन की कथा कही गई है ।१९-२०।

युद्धे कल्केरानयन धर्मस्य च कृतस्य च ।
सुशान्ताया: स्तवस्तत्र रमोद्वाहस्तु कल्किना ।२१।
सभाया पूर्वकथन निजगृध्रत्वकारणम् ।
मोक्ष शशिध्वजस्यात्र भक्तिप्रार्थयितुर्विभो ।२२।
विषकन्यामोचनञ्च नृपाणामभिषेचनम् ।
मायास्तव. शम्भलेषु नानायज्ञादि साधनम् ।
नारदाद्विष्णुयशसो मोक्षश्चात्र प्रकीर्तित. ।
कृतधर्म प्रवृत्तिश्च रुक्मिणी व्रतकीर्तनम् ।२४।
ततो विहार: कल्केश्च पुत्रपौत्रादि सम्भव. ।
कथितो देवगन्धर्वगणागमनमत्रहि ।२५।

फिर युद्ध क्षेत्र से कल्किजी, धर्म और सत्युग का शशिध्वज द्वारा अपने घर लाना, रानी सुशान्ता द्वारा कल्किजी का स्तव और कल्कि-रमा विवाह का प्रसग कहा गया है ।२१। फिर राजा शशिध्वज

का अपने पूर्व-जन्मो का वृत्तान्त-कथन, गृद्ध देह प्राप्ति का प्रसंग, कल्किजी के प्रति भक्ति का निवेदन और और राजा शशिध्वज को मोक्ष की प्राप्ति का वर्णन हुआ है ।२२। विषकन्या का उद्धार, राजाओ का राज्याभिषेक, भगवती माया का स्तव तथा शम्भल ग्राम मे विविध यज्ञो का अनुष्ठान ।२३। तदनन्तर विष्णुयशजी का नारदजी से मोक्ष-विषयक प्रश्न, लोक मे सत्युग का स्थापन और रुक्मिणी व्रत का प्रसंग ।२४। फिर कल्किजी का विहार-वर्णन, पुत्र-पौत्रादि की उत्पत्ति और देवताओ तथा गधर्वो के शम्भल ग्राम मे आगमन की कथा कही गई है ।२५।

ततो वैकुण्ठगमन विष्णो. कल्केरिहादितम् ।
शुकप्रस्थान मुचित कथयित्वा कथा· शुभा ।२६।
गगास्तोत्रमिह प्रोक्त पुराणे मुनिसमतम् ।
जगतामानन्दकर पुराण पच लक्षणम् ।२७।
चतुर्वर्ग प्रद कल्कि पुराण परिकीर्तितम् ।
प्रलयान्ते हरिमुखाग्नि: सृत लोक विस्तृतम् ।२८।
अहोव्यासेन कथित द्विजरूपेणभूतले ।
विष्णो: कल्केर्भगवत. प्रभाव परमाद्भुतम् ।२९।
येभक्त्यात्र पुराणसारममल श्रीविष्णु भावाप्लुत ।
शृण्वन्तीह वदन्ति वदन्ति साधुसदसि क्षेत्रे सुतीर्थाश्रमे ।
दत्त्वागा तुरगज गजवर स्वर्णं द्विजायादरात्
वस्त्रालङ्करणं प्रपज्यविधिवन्मुक्तास्त एवोत्तमा: ।३०।

फिर कल्किजी के वैकुण्ठ-गमन का वर्णन करके शुकदेव जी का कथा समाप्त करके चले जाना कहा गया है ।२६। फिर इस पुराण में मुनियो द्वारा कथित गगास्तोत्र का वर्णन हुआ है । संसार को आनन्द देने वाला यह पुराण पांच लक्षणो से सम्पन्न है ।२७। यह कल्कि पुराण, कीर्तन करने से, चतुवर्ग के देने वाला है । प्रलय के अन्त

मे यह भगवान् श्रीहरि के मुख से निसृत होकर स सार मे विस्तार को को प्राप्त हुआ है ।२८।

फिर इस पुराण को ब्राह्मण रूप मे पृथिवी पर अवतरित होकर भगवान् वेदव्यासजी ने कहा । इसमे कल्कि स्वरूप भगवान् विष्णु के अत्यन्त अद्भुत प्रभाव का वर्णन किया गया हैं ।२६। सभी पुराणो के सार रूप इस कल्कि पुराण का जो साधुजन भगवान् विष्णु के भक्ति भाव मे मग्न होकर किसी आश्रम या पुण्यतीर्थ मे स्थिति होकर वस्त्रा भूषणो द्वारा ब्राह्मणो का सत्कार करते हुए तथा उन्हे गज, अश्व, गो, आदि धन दान देते हुए श्रवण अथवा कीर्तन करेगे उनको अवश्य ही मोक्ष की प्राप्ति हो जायगी ।३०।

श्रुत्वा विधान विधिवद्ब्राह्मणो वेद पारग ।
क्षत्रियो भूपतिर्वैश्यो धनीशूद्रो महान्भवेत् ।३१।
पुत्रार्थी लभते पुत्र धनार्थी लभते धनम् ।
विद्यार्थी लभते विद्या पठनाच्छ्रवणादपि ।३२।
इत्येतत्पुण्यमाख्यान लोमहर्षण जो मुनि ।
श्रावयित्वामुनीन्भक्त्या ययौ तीर्थाटनादृत: ।३३।
शौनकौ मुनिभि: सार्द्ध सूतमामन्त्यधर्मवित् ।
पुण्यारण्ये हरि ध्यात्वा ब्रह्म प्राप सहर्षिभि ।३४।
लोमहर्षणज सवपुराणज्ञ यतव्रतम् ।
व्यासशिष्य मुनिवर त सूत प्रणमाम्यहम् ।३५।

इस पुराण के विधी पूर्वक श्रवण करने वाला ब्राह्मण वेद मे पारगत होता है, क्षत्रिय को राज्य की प्राप्ति होती है, वैश्य धनी और शुद्र महान् हो जाता है ।६१। यदि पुत्र की कामना से इसका श्रवण करे तो पुत्र-लाभ, धन की इच्छा बाले को धन लाभ और विद्या के अभिलाषियो को विद्या की प्राप्ति होती है ।३२। लोमहर्षणसुत मुनिवर सूतजी ने भक्ति भाव सहित यह पुण्य आख्यान शौनकादि मुनियो को सुनाया

और फिर तीर्थाटन को चले गये।३३। इसके पश्चात् मंत्रवित् एवं धर्मज्ञाता मुनिवर शौनकजी अन्यान्य मुनियो के सहित भगवान् विष्णु का ध्यान करते हुए ब्रह्म को प्राप्त हो गये।३४। सर्व पुराणो के ज्ञाता, व्यासजी के परम शिष्य, लोमहर्षणपुत्र उन मुनिश्रेष्ठ सूतजी को मैं प्रणाम करता हूँ।६५।

आलोक्य सर्व शास्त्राणि विचार्य च पुनः पुनः।
इममेव सुनिष्पन्न ध्येयो नारायणः सदा। ३६।
वेद रामायणे चैव पुराणे भारते तथा।
आदावन्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते।३७।
सजलजलददेहो वातवेगैकवाहः
करधृतकरवाल. सर्वलोकैकपालः।
कलिकुल वनहन्ता सत्यधर्म प्रणेता।
कलयतुकुशलवः कल्किरूपः सभूप.।३८।

सभी शास्त्रो के अध्ययन और उन पर बारम्बार विचार करने से यही निष्कर्ष निकलता है कि सदैव भगवान् श्रीनारायण का ध्यान करना ही श्रेयस्कर है।६३। क्योकि वेद, पुराण, रामायण और महाभारत आदि सभी शास्त्रो ने अपने आदि, मध्यादि मे सर्वत्र इन्ही भगवान् श्रीहरि का गुण-कीर्त्तन किया है।३७। जलयुक्त मेघ जैसे वर्ण वाले वायु के समान वेग वाले अश्वारूढ होने वाले, हाथ मे तलवार धारण करने वाले, सत्य- धर्म के प्रणेता, राजाओ के सहित निवास करने वाले कलियुग के परिवार रूपी वन का हनन करने वाले भगवान् कल्किजी हमारा कल्याण करे।३८।

श्री कल्कि पुराण सम्पूर्ण